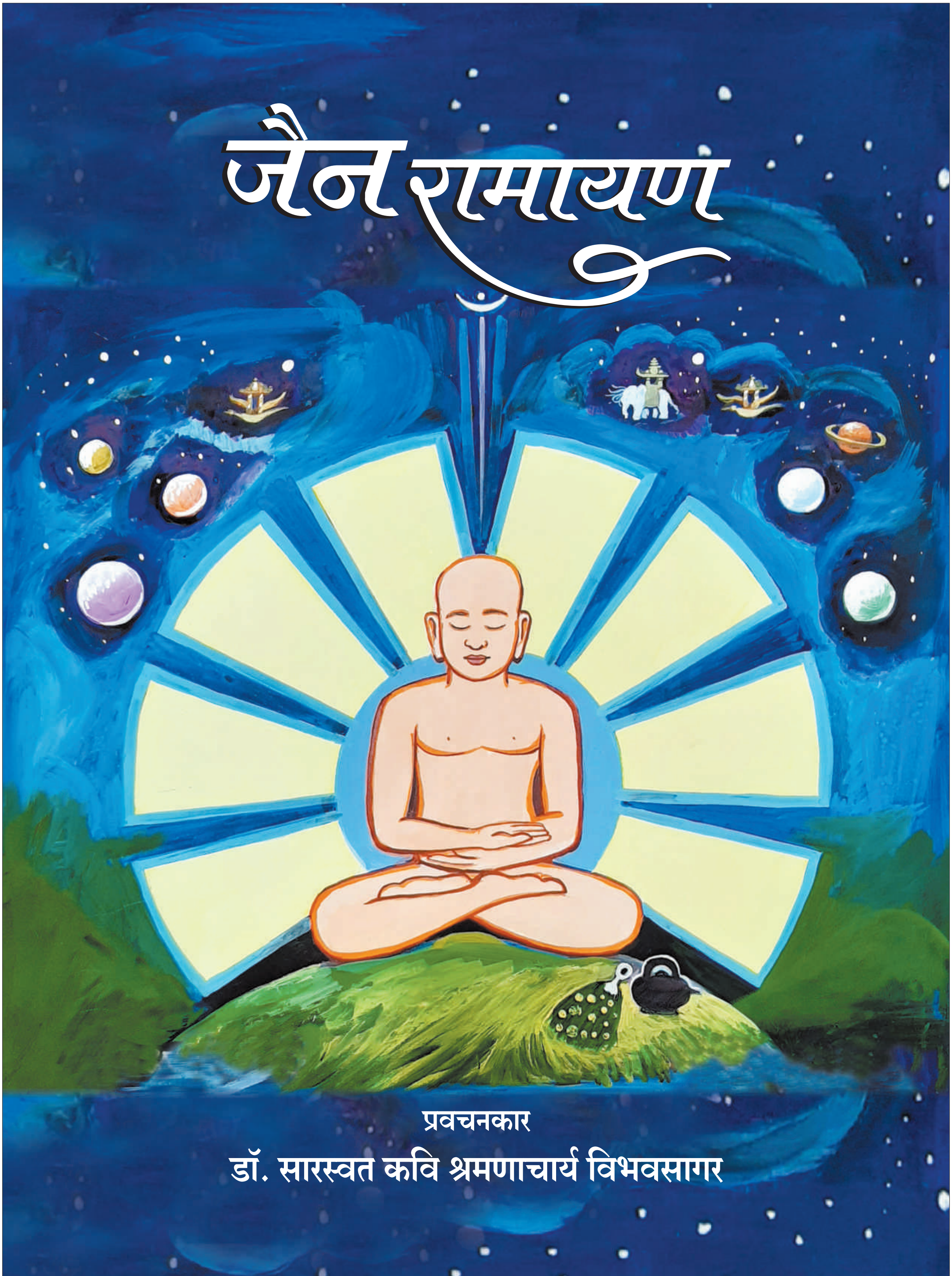

जैन रामायण

प्रवचनकार
डॉ. सारस्वत कवि श्रमणाचार्य विभवसागर

जैन रामायण

प्रवचनकार

डॉ. सारस्वत कवि श्रमणाचार्य विभवसागर

सम्पादक

श्रमण शुद्धात्मसागर मुनि

प्रकाशक

श्रमण श्रुत सेवा संस्थान, जयपुर (राज.)

शाखा – इन्दौर (म.प्र.)

कृति – **जैन रामायण**

शुभाशीष – **प.पू. गणाचार्य विरागसागर जी महाराज**

प्रवचनकार – **श्रमणाचार्य विभवसागर जी महाराज**

सम्पादन – **श्रमण शुद्धात्म सागर**

आलेखन – **सुनील जैन निवाई, मोहन जी चंवरिया**

संस्करण – द्वितीय

आवृत्ति – 1100 प्रति

प्रकाशक – श्रमण श्रुतसेवा संस्थान, जयपुर (राज.) शाखा-इन्दौर (राज.)

प्राप्ति –
1. श्रमण श्रुत सेवा संस्थान (पं. क्र. COOP/2019 जयपुर/104083
प्रज्ञा इंस्टीट्यूट ऑफ पर्सनिलिटी डवलपमेन्ट, सिद्धान्त कॉम्पलेक्स, 141,
FS-2, गली नं. 6 आदर्श बाजार, टोंक फाटक, बरकत नगर,
जयपुर-302015 मो. 9829178749

2. तेजकुमार-मंजु वेद, प्रतिपाल टोंग्या
8 डी. एक्स/सेक्टर-सी, स्कीम नं. 71
गुमास्ता नगर के पास, इंदौर (म.प्र.) 452001
मो. 9425154777, 9302106984

3. संघ

मुद्रक – **ज्योति ग्राफिक्स, जयपुर 8290526049, 8619727900**

आद्य वचन

भारतीय संस्कृति में आदर्शरूप से महामान्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का लोक हितकारी जीवन समग्र मानव समाज के लिए शिक्षात्मक और प्रेरणास्पद है।

श्रीराम के जीवन चरित्र पर समयानुरूप अनेक महाकाव्य, प्रबन्ध काव्य, चम्पू काव्य, लघुकाव्य, खण्ड काव्य, पुराण कथानक आदि जीवन प्रकाशक अनेक आलेख लिखे गये।

वर्ष 2004 में रामकथा सत्संग समारोह का भव्य आयोजन जैन सोश्यल ग्रुप, परभणी महाराष्ट्र द्वारा हुआ। मैंने समग्र पद्मपुराण को आत्मसात् कर प्रवचन के माध्यम से प्रस्तुत किया। हजारों श्रद्धालु लाभान्वित हुए।

मेरे द्वारा उस समय हुए उन उपयोगी प्रवचनों के आडियो, वीडियो रिकार्डिंग करा कर भविष्य निधि की रूप में सुरक्षित रखा।

संघस्थ आर्यिका रत्न अर्हंश्री ससंघ का पावन वर्षायोग 2017 परभणी में हुआ तत्समय श्री सुनील उपड़कर ने आडियो वीडियो प्रदान किये।

वर्षायोग 2019 में श्री सुनील जी निवाई के कर कमलों आलेखित हो तथा श्रमण मुनि शुद्धात्म सागर द्वारा सम्पादित हो दान चिंतामणि परिवार द्वारा प्रकाशित हो आचार्य भगवान श्री विरागसागर जी गुरुदेव के शुभाशीर्वाद से "**रजत रत्नत्रय महोत्सव**" 2022 के शुभ उपलक्ष्य में आपके कर कमलों सादर गुरु उपहार अर्पण।

–आचार्य विभवसागर

रामकथा प्रस्तावना

–आचार्य विभवसागर

भारतीय संस्कृति, श्रमण संस्कृति और वैदिक संस्कृति दोनों संस्कृतियों की धाराओं की मिली–जुली संस्कृति है, इस भारतीय संस्कृति में संत और श्रावक ये दो तट हैं। इन दो तटों के मध्य से धर्म की सरिता प्रवाहित होती है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम प्रभु भारतीय संस्कृति के प्राण पुञ्ज, गुणों के निकुंज, अनन्त गुणों के कुञ्ज, प्रजा वत्सल, दया पालक, करुणा मूर्ति, न्याय और निष्ठा के पालन करने वाले, मातृ सेवक, पितृ भक्त, दया–करुणा के अनुपम भण्डार, जन–जन के उपकारी एक ऐसे महापुरुष हुये जिनके जीवन में प्रत्येक कदम, प्रत्येक चरण आचरण से समन्वित हैं तथा एक महान् आचरण का संदेश देते हैं। जिन संदेशों को हमारे संतों ने प्रतिपादित किया, संत इस भारतीय संस्कृति को प्रवाहित करने वाले महान् उपकारी पुरुष रहे। तुलसीदास जी रामचरित मानस के माध्यम से कहते हैं :

प्रथम भक्ति संतन कर संगा, दूजी रति मम कथा प्रसंगा।

यदि तुम संतों का सत्संग करते हो तो यह आपके जीवन की पहली भक्ति है। परमात्मा के पास पहुँचना दूसरी भक्ति है। संत किसके होते हैं? किस समाज के होते हैं? यह हम जानें। संत ढाई अक्षर का शब्द है, सम्यक् तपस्या करने वाला संत होता है। संत चाहे किसी भी समाज का हो, किसी भी जाति का हो, किसी भी धर्म को मानने वाला हो। जो सम्यक् तपस्या कर रहा है, सम्यक् तपश्चरण कर रहा है, सम्यक् त्याग कर रहा है, सम्यक् तत्त्व को जानने वाला संत है। संत के वचन और सूर्य की किरणें सम्पूर्ण सृष्टि के लिए हुआ करती हैं।

सूर्य किसके लिए है? हिन्दू समाज के लिए? मुस्लिम समाज के लिए? बौद्ध समाज के लिए? या जैन समाज के लिए? बता सकते हैं आप? सूर्य ने कभी भेदभाव नहीं किया कि मैं इस समाज को प्रकाश दूँगा, इस समाज को प्रकाश नहीं दूँगा।

जब-जब सूर्योदय होता है, वह सभी की छतों पर प्रकाश देता है। सूर्य प्रकाश सभी के लिए देता है लेकिन जो आँखें खोलते हैं उन्हीं को सूर्य का प्रकाश दिखाई देता है। पृथ्वी किसके लिये है? उसमें कोई बँटवारा किया गया क्या? जल किसके लिए है? किसके लिए जल ठण्डा लगेगा? किसके लिए जल गरम लगेगा? अग्नि किसके लिए है? वायु किसके लिए है? वायु ने कभी भेदभाव किया क्या? कि तुम्हारे लिए ऑक्सीजन दूँगी और तुम्हारे लिए ऑक्सीजन नहीं दूँगी। मैं हिन्दुओं के लिए तो ऑक्सीजन दूँगी लेकिन इस्लाम के लिए नहीं दूँगी। ऐसा भेदभाव वायु नहीं करती है, उसी तरह संत पृथ्वी के समान, जल के समान, अग्नि के समान और वायु के समान है। संत आँगन नहीं आकाश है, **श्रावक का जीवन आँगन की तरह होता है और संत आकाश की तरह होते हैं।** जिस प्रकार आकाश सभी पक्षियों के लिए एक समान है, सभी पक्षी समान रूप से विचरण कर सकते हैं। उसी तरह संत का आशीर्वाद सम्पूर्ण सृष्टि के लिए, सर्व समाज के लिए कल्याणकारी आशीर्वाद प्रदान करता है। हमारे गुरुदेव परमपूज्य आचार्य विराग सागर जी महाराज कहा करते हैं-जिस तरह सूर्य सभी की छतों पर जाकर प्रकाश देता है, उसी तरह से संत को बिना भेदभाव किये समग्र सृष्टि को अपना आशीर्वाद देना चाहिए। उन्हीं गुरुदेव के मंगलमय आशीर्वाद को हृदयस्थ करते हुए आप सभी के जीवन में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम समाये हुये हैं। मैं आपसे इतना ही कहना चाहता हूँ कि **आप इतने दरिद्र मत बनना कि आपके द्वार पर कोई ज्ञान का प्रकाश बाँटे और आप सोते रह जायें।** संत यदि ज्ञान का प्रकाश बाँटे तो आप उसे अवश्य स्वीकार करें।

कोई गिरजा में जाता है, कोई मन्दिर में जाता है।
कोई मस्जिद में जाता है, कोई तीरथ पे जाता है
जिसे जाना वहाँ पर है, जहाँ श्रीराम पहुँचे हैं।
वही इंसान बनने को, गुरु चरणों में आता है।।

मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, शिवालय सबकी राह एक है। आपने कभी सोने की दुकान पर जौहरी से पूछा कि-यह सोना किस खदान का है? यदि सोना शुद्ध है तो

आपने खरीद लिया। उसी तरह से संत सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र से समन्वित हैं तो वह शुद्ध सोने की तरह आपके लिए ग्राह्य है। आज तक हम सभी यही मानते आये हैं कि रामायण हिन्दुओं में प्रसिद्ध है, लेकिन मैं आप से इतना ही पूछना चाहता हूँ कि **राम पति हैं या प्रजापति हैं**? यदि पति हैं तो सिर्फ सीता के पति हैं, यदि जगतपति हैं तो पूरे संसार के हैं। **राम राजा हैं, कि परमात्मा**? यदि राजा हैं तो अयोध्या के और यदि परमात्मा हैं तो जगत के आकाश की तरह सभी के लिए छाया देने वाला, आश्रय देने वाला होता है। इसलिए राम आकाश की तरह निराकार परमात्मा हैं, वह सभी के लिए अर्चनीय, उपासनीय, वंदनीय, प्रार्थनीय और श्रद्धेय है।

भारतीय संस्कृति में चार तरह के पुरुषार्थ और चार प्रकार के आश्रम का व्याख्यान है। यदि हम उन चारों पुरुषार्थ और चारों आश्रमों को गौण कर दें तो भारतीय संस्कृति निष्प्राण हो जायेगी। इसलिए सर्वप्रथम चार प्रकार के पुरुषार्थ और आश्रमों को समझें। पुरुष शब्द का अर्थ है 'आत्मा' और अर्थ का तात्पर्य है 'प्रयोजनीय'। जो आत्मा के लिए प्रयोजनीय है, उसे पुरुषार्थ बोलते हैं। सर्वप्रथम धर्म पुरुषार्थ से जीवन की शुरुआत होती है। जो आचरण, व्यवहार आप अपने लिए पसंद करते हैं वैसा आचरण, व्यवहार दूसरे के प्रति करना यह 'धर्म' है। जो प्राणियों को संसार के दुःखों से निकालकर के उत्तम सुख में धारण करे उसे धर्म कहते हैं। दान, पूजा, दया, करुणा, वात्सल्य, प्रेम, स्नेह, भाईचारा यह सभी ज्ञान के अंग हैं।

अर्थ पुरुषार्थ : आजीविका निर्वाह के लिए न्यायोपार्जित युक्ति से धन का अर्जन करना 'अर्थ पुरुषार्थ' है।

काम पुरुषार्थ : विवाह मात्र भोग विलास का साधन नहीं अपितु संस्कृति और सभ्यता की पवित्र परम्परा को अग्रसर बनाये रखने के लिए या योग्य संतान को प्रसूत करना जो देश, समाज और राष्ट्र को गौरवान्वित कर सके।

मोक्ष पुरुषार्थ : कर्मों से मुक्त हो जाने का नाम 'मोक्ष पुरुषार्थ' है। ऐसा पुरुषार्थ

करना जिससे राग-द्वेष-मोह आदि से आत्मा अलग हो जाये और जिस परमपद को श्रीराम ने पाया उस पद को पा सके, इसका नाम मोक्ष पुरुषार्थ है।

चार प्रकार के आश्रम भारतीय संस्कृति के मूल आधार स्तंभ हैं।

ब्रह्मचर्य आश्रम : विद्यार्थी जीवन में विषय-वासनाओं का स्पर्श नहीं होने देना, चाहे आप घर में रहें या गुरुकुल में रहें।

गृहस्थ आश्रम : सामाजिक एवं धार्मिक मर्यादा को पालन करते हुए अपना जीवन यापन करना 'गृहस्थाश्रम' है।

वानप्रस्थ आश्रम : जब आपकी संतान कार्यदक्ष हो जाये तब घर में वैरागी हो जाना, धर्म की प्रवृत्ति में तत्पर हो जाना 'वानप्रस्थ आश्रम' है।

संन्यास आश्रम : राग-द्वेष-मोह को त्यागकर, परिवार से विदा लेकर वन की ओर प्रस्थान कर जाना और वन में ही साधना करते हेतु जीना 'संन्यास आश्रम' है। यदि मानव सन्यास आश्रम में प्रविष्ट न हो तो तीन काल में परमात्मा नहीं बन सकता।

ऐसे चौथे पुरुषार्थ को सिद्ध करने वाले, मानवता के परम निधि, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के लिए आदर्शों की खुशबू ने मात्र भारतवर्ष को ही सुभाषित नहीं किया अपितु अखिल विश्व से आने वाली हवाएँ उनके आदर्शों को अपने सिर पर उठाकर के अपने-अपने देश ले गयी। श्रीराम का पावन गौरवगान अखिल विश्व की संस्कृतियों में और जगत् के कोने-कोने को सुभाषित कर रहा है, इसी क्रम से आगे भी करता रहेगा। जब तक सूरज और चाँद इस आकाश मण्डल में हैं तब तक श्रीराम के आदर्श इस विश्व के लिए पावनता का संदेश देते रहेंगे। उन्हीं श्रीराम को लेकर, उनके मंगलमयी आदर्शों को लेकर अनेकों रामकथाएँ उपलब्ध हैं। मुझे इस बात का खेद है जब श्रीराम हुये तब कोई राम ग्रंथ उनके लिए भेंट नहीं किया गया, कोई रामायण लिखकर उनको भेंट नहीं की गई। यदि श्रीराम को रामायण भेंट कर देते तो शायद अनेक प्रकार की रामायण इस धरती पर हमें देखने को नहीं मिलती। लेकिन प्रत्येक भक्त को अधिकार है अपनी प्रज्ञा के अनुसार आराध्य के गुणगान करने का।

अभी अद्भुत रामायण, आनन्द रामायण, तिब्बती रामायण, खेतालि रामायण, शेरत राम रामायण, हिन्दू सम्प्रदाय में प्रचलित वाल्मीकि रचित योग प्रशिष्ट रामायण और तुलसीदास रचित रामचरित मानस अन्य और भी कई अनेकों रामायण उपलब्ध हैं। यदि छोटी-छोटी रामकथाएँ संग्रहित की जायें तो उनकी संख्या सैकड़ों नहीं, दो हजार तक पहुँच जायेगी।

श्रमण संस्कृति में श्रीराम को भगवान महावीर स्वामी ने मुक्त परमात्मा कहा। श्रीराम ने चतुर्थ आश्रम में वानप्रस्थ होकर चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्ष को सिद्ध किया। ऐसे मुक्त परमात्मा का नाम स्मरण मात्र से मानव का कल्याण होता है। जब नाथूराम गोडसे ने राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को गोली मार दी तभी हमारे देश के राष्ट्रपिता ने राम-राम-राम उच्चारण करते हुये अपने प्राण त्याग दिये और जिस राम के नाम से मानवता का ही नहीं पशु-पक्षियों का कल्याण होता है, ऐसे राम के जीवन पर आधारित राम ग्रंथ रामायण जैन धर्म (दर्शन) में भी उपलब्ध है। हेमचन्द्र सूरि द्वारा रचित जैन रामायण, यह दिगम्बर आम्नाय में परम पूजनीय आचार्य श्री रविषेण स्वामी द्वारा आज से (1300) तेरह सौ वर्ष पूर्व पद्म पुराण नामक ग्रंथ रचा, जिसमें राम के महान् आदर्शों का उल्लेख किया गया। सोमदेव के द्वारा रचित राम कथा और भी अन्य राम कथाएँ उपलब्ध हैं।

हरिवंश पुराण में, उत्तर पुराण में, महापुराण में, तिलोयपण्णति ग्रंथ में त्रिलोकसार में जितने भी जैन ग्रंथ हैं, सिद्धान्त ग्रंथ हो, प्रथमानुयोग के ग्रंथ हो, श्रीराम की यह पावन पंक्तियाँ करने का श्रेय सभी जैन मुनियों ने लिया है। आप यह नियम से जानते हैं कि हाथ की पाँच अँगुलियाँ एक समान नहीं होती। कोई छोटी होती है, तो कोई बड़ी होती है। जब हमारे हाथ की अँगुलियाँ एक समान नहीं होती तो फिर विविध कवियों, लेखकों, साधकों के द्वारा लिखी गयी अनेकों रामायण एक समान नहीं हो सकती हैं। एक माँ एक ही आटे से पाँच रोटियाँ बनाती हैं, पर सभी रोटियाँ एक समान नहीं बनती हैं। हो सकता है विभिन्न रामायण के अन्तर्गत अनेक प्रकार के विषय मिल सकते हैं। लेकिन जो कथा

होती है '**कथ्यते इति कथा**' जो कही जाती है वह कथा है और फिर यह जो कथा है, यह तो मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की कथा है।

भारत देश में कुछ कथाएँ ऐसी भी हैं : पंचतंत्र की कथाएँ, हितोपदेश की कथाएँ। ये जो कथाएँ अपने आप में कुछ नये घर की हैं जिन्होंने कभी शेर का जाल नहीं काटा होगा। कभी चूहे ने शेर का जाल काटा होगा क्या? क्या शेर के पंजे के नीचे कोई चूहा पहुँच सकता है? लेकिन कथा रहस्यवादी हुआ करती हैं, कथा का प्राण रहस्य हुआ करता है। कथा शरीर है और रहस्य उसकी आत्मा है। उत्तम श्रोता कथा कम सुनते हैं, रहस्य की ओर ज्यादा पहुँचते हैं। रहस्य को समझे बगैर कथा का सुनना मुर्दे से वार्तालाप करने के समान होगा। इसलिए कथा के एक-एक सूत्र के रहस्य को समझने की परम आवश्यकता है।

बुद्धिमान व्यक्ति रहस्य तक पहुँचाते हैं। हमें शरीर को नहीं देखना, हमें आत्मा को देखना है। कथा के अंदर रहस्य को निकालना ही हमारा परम ध्येय होगा। जब हम भारतीय कथाओं के रहस्य में प्रवेश करते हैं तो वे कथाएँ हमारे जीवन को जीवन्त प्रेरणादायी सिद्ध होती हैं। भारतीय कथाएँ विश्व की समस्त कथाओं का आधार स्तम्भ व प्रेरणादायी स्तम्भ है। श्रीराम के जीवन चरित्र में वाल्मीकि रामायण आपने सुनी होगी। वाल्मीकि रामायण छब्बीस हजार श्लोक प्रमाण रामायण है, इस रामायण का प्रथम काण्ड 'वैराग्य काण्ड' है।

मैंने जब प्रथम काण्ड को वैराग्य काण्ड पढ़ा तो मैं विस्मय में पड़ गया। पहले जन्म होना चाहिये था या और कुछ होना चाहिए था। लेकिन जब जन्म हुआ नहीं और वैराग्य का काण्ड आ गया। ये वाल्मीकि जी के संतों पे वचन अंतस्थ आत्मा से निकलते हैं। वैराग्य कथा का सार वैराग्य है, कथा का सार भाग नहीं है। कथा का सार त्याग और विराग है। वाल्मीकि रामायण में वाल्मीकि जी लिखते हैं :

न मैं राम हूँ, न मेरे अंदर भोगों की इच्छा है, मैं शांति का परम इच्छुक हूँ। जिस तरह

की शांति जिनेन्द्र देव ने प्राप्त की है वही परम शांति मैं चाहता हूँ। वाल्मीकि रामायण की ये दो पंक्तियाँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। जब हम भागवत को उठाकर देखते हैं तो जिन शब्द आता है। जब ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद इन तीनों वेदों में 'जिन' शब्द आता है। आदिनाथ स्वामी का नाम वेदों में मिलता है, अजितनाथ स्वामी का नाम वेदों में उपलब्ध है। 'अरिष्ट नेमि जिनाय' ये नाम भी वेदों में उपलब्ध है। योग प्रतिष्ठा में, विष्णु पुराण में और अन्य वैदिक ग्रन्थों में भी जिन शब्द आया है। 'जिन' शब्द को जाने बिना कथा का शुभारम्भ प्रसारित नहीं हो पाता।

जिन्होंने इन्द्रियों को, कषायों को और कर्मरूपी शत्रुओं को जीत लिया है वह 'जिन' है। जन्म से महापुरुष हो सकता है पर जन्म से जिन नहीं होता है, जन्म से परमात्मा नहीं हो सकता है। मानवता का चरम विकास परमात्मा है '**जिन**'। क्रोध, मान, माया, लोभ का विजेता पुरुष 'जिन' होता है। जैन कौन हैं? जिनका देवता 'जिन' है वह जैन है। जो जिनेन्द्र भगवान को माने वह जैन है। जैन जाति नहीं है अपितु जैन धर्म (मत, सम्प्रदाय) है। जिनेन्द्र भगवान के द्वारा प्रतिपादित धर्म 'जैन धर्म' है, वह ही 'जिनधर्म' है। हिन्दू कौन है? जो सदैव हिंसा से दूर रहता है वह हिन्दू है।

धर्म के बीज पचपन में नहीं बचपन में बोये जाते हैं। वैराग्य पचपन का विषय नहीं, वैराग्य बचपन का विषय है। इसलिए वाल्मीकि रामायण में सर्वप्रथम राम की भावना को आत्म शांति का उद्देश्य बताया।

*****

सम्पादक

धर्मानुबन्धिनी कथा

जो पुरुष यशरूपी धन का संचय और पुण्य चाहते हैं उनके लिए धर्मकथा को निरूपित करने वाली यह **जैन रामायण** मूलधन के समान है।

जैन रामायण मात्र एक धार्मिक ग्रंथ ही नहीं अपितु यह ग्रंथ पारिवारिक सौहाद्र को लिए हुए है। पद्मपुराण अर्थात् जैन रामायण के माध्यम से परम पूज्य आचार्य भगवन्त रविषेण स्वामी जी ने जन-जन का कल्याण किया है।

राम का जीवन कदम-कदम पर अनेक घटनाओं से भरा हुआ है। राम अपने पिता राजा दशरथ के आज्ञाकारी पुत्र होने के साथ ही भ्रातप्रेम से परिपूर्ण थे। भरत का राज्य भली प्रकार से वृद्धिंगत हो सके इसलिए आपने वनवास में रहना उचित समझा।

पतिभक्ता सीता एवं भ्रातृस्नेह से परिपूर्ण लक्ष्मण ने वनवास के समय उनका साथ देकर एक आदर्श भाई का कर्तव्य निभाया।

रावण ने दण्डक वन में सती सीता का छल से अपहरण किया था। लेकिन राम ने छल के बदले छल का प्रयोग न कर धर्म युद्ध के माध्यम से सीता को पुन: प्राप्त किया।

राम का राज्य राम-राज्य था। प्रजा की प्रसन्नता और न्याय की सुरक्षा ही उनका मुख्य ध्येय था। इसलिए कुछ लोगों के द्वारा लोकापवाद करने पर राम ने सीता का परित्याग कर दिया।

जब सीता को वापिस लाने का विचार किया गया तब राम ने कहा-सीता को पहले अपनी निर्दोषता सिद्ध करना होगी, तभी स्वीकार करूँगा।

पति आज्ञाकारिणी सीता ने अग्नि परीक्षा देकर निर्दोषता सिद्ध की और

मोक्षमार्ग पर अग्रसर हुई। उसी तरह जीवन में अनेकों संकटों को पार कर राम ने अभिराम पद को प्राप्त किया।

ऐसे प्रेरणादायी पवित्र प्रवचनों का पावन अमृत मैंने इस शास्त्ररूपी अमृत-कलश में पाया है। जो आप सभी भव्यात्माओं के लिए सहृदय सादर अर्पण है। प्रिय पाठको! आप पूर्वाचार्यों तथा वर्तमान आचार्य भगवन्त मेरे गुरुवर के श्रम को अवश्य सार्थक करेंगे। एक बार इस शास्त्र को पढ़कर, सुनकर अथवा सुनाकर। इस हेतु मैंने गुरुदेव के आशीर्वाद से सम्पादन करने का सौभाग्य पाया है, जो आचार्य भगवन् के "**रजत रत्नत्रय महोत्सव**" के पूर्व उपलक्ष्य में आपके करकमलों में शोभायमान है। यह शास्त्र आपको सदैव आत्मोन्नति का सुमार्ग प्रदान करे।

शुभं भूयात्

-श्रमण शुद्धात्मसागर

स्वाध्याय - महिमा

प्रिय आत्मन्!

जिनवचन रात-दिन पढ़ना चाहिए।

किस प्रकार के जिनवचन पढ़ना चाहिए? इस जिज्ञासा का समाधान देते हुए आचार्य भगवन् श्री शिवार्य जी भगवती आराधना ग्रन्थ के शिक्षाधिकार में लिखते हैं- निपुण, विपुल, शुद्ध, अर्थपूर्ण, सर्वोत्कृष्ट, सर्व हितैषी, भाव कलुषता को हरने वाला जिनवचन दिन-रात पढ़ना चाहिए। जिनवचन की शिक्षा में जो गुण लाभ हैं उन्हें प्रकट करते हैं -

1. स्वाध्याय से आत्म हित का ज्ञान होता है।
2. भाव संवर होता है।
3. नवीन - नवीन संवेग (धर्मरुचि) होता है।
4. रत्नत्रय में निश्चलता होती है।
5. स्वाध्याय तप होता है।
6. व्रत, संयम पालन की भावना दृढ़ होती है।
7. दूसरों को उपदेश देने की कुशलता आती है।
8. ज्ञान के द्वारा सप्त तत्त्व, नौ पदार्थ जाने जाते हैं।
9. हित और अहित का विवेक प्रकट होता है।
10. हित में प्रवृत्ति और अहित से निवृत्ति होती है।
11. आत्मा का हित आगम के अध्ययन से जाना जाता है।

12. विनय पूर्वक स्वाध्याय करनेवाला साधु का मन एकाग्र होता है।

13. स्वाध्याय करनेसे पंच इन्द्रियाँ वश में होती है।

14. स्वाध्याय करने से त्रि गुप्ति का पालन होता है।

15. अतिशय अर्थ से भरे अपूर्व, अश्रुत तत्त्व का लाभ होता है।

16. प्रति समय नया-नया संवेग भाव बढ़ने से धर्मश्रद्धा से चित्त आनंदित होता है।

17. गुणों की वृद्दि होती है।

19. दोषों को हानि होती है।

20. श्रद्दान, ज्ञान, तप और सँयम में स्थिरता आती है।

21. भाव शुद्दि बढ़ती है।

22. स्वाध्याय तप कर्म निर्जरा का सर्वश्रेष्ठ हेतु है।

23. लाख-करोड़ भव के कर्म भी मुनिराज स्वाध्याय तप के द्वारा अन्तर्मुहूर्त में नष्ट करते हैं।

24. स्वाध्याय करने से ज्ञानाराधना होती है।

25. ज्ञानाराधना होने से समाधि मरण सधता है।

26. स्वाध्याय करने से स्व-पर का उद्धार होता है।

27. तीर्थंकर भगवान की आज्ञा का पालन होता है।

28. स्वाध्याय करने से वात्सल्य बढ़ता है।

29. स्वाध्याय करने से प्रभावना होती है।

30. श्रुत तीर्थ का प्रवर्तन होता है।

31. मोक्षमार्ग निर्बाध होता है।
32. आत्म ध्यान का लाभ आसान हो जाता है।

उपरि उक्त कारणों, गुणों, लाभों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक भव्य जीव को आदर पूर्वक स्वाध्याय प्रवचन करना चाहिए।

सन्दर्भ- भगवती आराधना

गाथा- 98 से 110 तक

सम्यग्ज्ञान के दस अतिशय

1. आत्म स्वभाव भूतं ज्ञानमालम्बनात् एव भवति पद प्राप्ति।
2. नश्यति भ्रान्तिः।
3. भवति आत्मलाभः।
4. अनात्म परिहारः सिद्धति।
5. कर्म न मूर्च्छति।
6. राग द्वेष मोहाः न उत्पलवन्ते।
7. न पुनः कर्म आस्रवति।
8. न पुनः कर्म बध्यते।
9. प्रागबद्धं कर्मोपभुक्तं निर्जीयते।
10. कृत्स्न कर्माभावात् साक्षान्मोक्षो भवति।

अर्थ-

1. आत्मस्वभावरूप ज्ञान का आलम्बन करने से निज पद की प्राप्ति होती है।
2. भ्रम नष्ट होता है।
3. आत्म स्वरूप का लाभ होता है।
4. अनात्म भावना का त्याग होता है।
5. मोह भाव नहीं जागता।
6. राग-द्वेष मोह भाव उत्पन्न नहीं होते।
7. नवीन कर्म का आस्रव नहीं होता।
8. नवीन कर्म का बंध नहीं होता।
9. पुराना बँधा कर्म निर्जरा को प्राप्त होता है।
10. सम्पूर्ण कर्म का नाश हो जाने से मोक्ष होता है।

आ. अमृत चन्द्र

हे भव्य! तू ऐसा जानकर इस सम्यग्ज्ञान रूप स्वाध्याय में सदाकाल लीन रहो, रुचि भाव रखो, संतुष्ट रहो, अन्यत्र न भटको इसी में तृप्त रहो, अन्य कुछ मत चाहो, ऐसा अनुभव करने से आपके लिए उत्तम सुख होगा॥

आ. अमृत चन्द्र
समयसार 204.

शास्त्र स्वाध्याय का प्रारम्भिक मंगलाचरण

ॐ नमः सिद्धेभ्यः।। ॐ जय जय जय नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!! नमोऽस्तु!!!

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।

ओकारं बिन्दुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।

कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः।

अविरल–शब्दघनौघ–प्रक्षालित–सकलभूतल–मलकलंक ।

मुनिभि–रुपासित–तीर्था: सरस्वती हरतु नो दुरितान् ।।

अज्ञान–तिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जन–शलाकया।

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

श्री परमगुरवे नमः। श्री परम्पराचार्यगुरवे नमः। सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमनः प्रतिबोध–कारकं पुण्यप्रकाशकं पापप्रणाशकमिदं शास्त्रं श्रीपद्मपुराण नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्री सर्वज्ञदेवास्तदुत्तर–ग्रन्थकर्तारः श्रीगणधरदेवाःप्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोऽनुसार–मासाद्य आचार्य श्रीरविषेणस्वामिना विरचितं। तदुपरि प्रवचनम् जैन रामायणम् शास्त्रम् श्रोतारः सावधानतया श्रण्वन्तु।

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी।

मंगलं कुंदकुंदाद्यो, जैन धर्मोऽस्तु मंगलं।।

सर्वमंगल–मांगल्य, सर्वकल्याणकारकम्।

प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम्।।

जिनवाणी भक्ति

श्वास–श्वास मे तुझे बसायें, हे जिनवाणी माँ!
बार–बार हम शीश झुकायें, हे जिनवाणी माँ!।।

मूल अर्थ कर्त्ता हैं तेरे, तीर्थंकर स्वामी।
उत्तर ग्रन्थ रचयिता तेरे, श्री गणधर स्वामी।।
हम सब श्रोता सुनने आये, श्री जिनवाणी माँ।
बार–बार हम शीश झुकायें, हे जिनवाणी माँ!।।
श्वास...........।।1।।

ग्वाला को भी कुन्दकुन्द सा, संत बनाती माँ।
ग्रन्थ सिखा निर्ग्रन्थ बना, अरिहन्त बनाती माँ।।
तीर्थंकर की दिव्य देशना, मोक्ष दायिनी माँ।
बार–बार हम शीश झुकायें, हे जिनवाणी माँ!।।
श्वास...........।।3।।

धर्म सभा में आने वाले, समवसरण जाते।
धर्म देशना सुनने वाले, दिव्यध्वनि पाते।।
गुरु मिले तो प्रभु मिलेंगे, कहती वाणी माँ।
बार–बार हम शीश झुकायें, हे जिनवाणी माँ!।।
श्वास...........।।

श्वास–श्वास मे तुझे बसायें, हे जिनवाणी माँ!
बार–बार हम शीश झुकायें, हे जिनवाणी माँ!।।

अनुक्रमणिका

प्रथम पर्व

1. भगवान ऋषभदेव 2
2. वंशोत्पत्ति 4
3. रावण का जन्म 8
4. दशानन नाम क्यों 9
5. रावण नाम क्यों पड़ा 10
4. हनुमान का जन्म 11

द्वितीय पर्व

1. काल विभाजन 15
2. राम जन्म के पूर्व माँ ने देखे स्वप्न 18
3. श्रीराम का जन्म 18
4. नामकरण संस्कार 19
5. लक्ष्मण जन्म के पूर्व माँ ने देखे स्वप्न 20
6. राम-लक्ष्मण, रावण की आयु एवं शरीर की ऊँचाई 21
7. राम-लक्ष्मण की शिक्षण पद्धति 22
8. सीता का जन्म एवं शिक्षामयी बाल्यकाल 26
9. सीता का स्वयंवर 30

तृतीय पर्व

1. श्रीराम-सीता का विवाह 32
2. माँ विदेहा का विदाई से पूर्व सीता को सम्बोधन 37

चतुर्थ पर्व

1. श्री राम-सीता का विवाहोपरांत अयोध्या में प्रवेश 41
2. राजा दशरथ का वैराग्य 42
3. रानी कैकयी द्वारा भरत के लिए राज्य माँगना 43
4. दशरथ द्वारा राम को राज्य देने की असमर्थता प्रकट करना। 44
5. राम का वनगमन 49

6. भरत के द्वारा राम को रोकने का प्रयत्न करना। राम के नहीं मानने पर राम की खड़ाऊ लेकर अयोध्या में वापस आना। 49
7. प्रजानन को सोता छोड़ राम-लक्ष्मण का सरयू नदी के किनारे से विहार करना 51
8. माता कैकयी का भरत को लेकर राम को वापस लाने के लिए प्रस्थान करना। 52
9. चित्रकूट वर्णन 55
10. विहार के मनोरम एवं शिक्षाप्रद दृश्य 55

पंचम पर्व

1. राम-लक्ष्मण के द्वारा कुलभूषण-देशभूषण मुनि का उपसर्ग दूर करना 58
2. राम का सवरी की कुटिया में पदार्पण 60
3. राम-सीता द्वारा आहारदान देना एवं जटायु पक्षी का चित्रण 60
4. लक्ष्मण को खड्गहास की प्राप्ति होना 62
5. राम-लक्ष्मण का खरदूषण से युद्ध होना 64
6. रावण द्वारा सीता का हरण करना। जटायु द्वारा सीता की रक्षा का प्रयत्न करना 65
7. जटायु पक्षी का उपचार एवं समाधिमरण 66
8. अशोक वाटिका में सीता 70

षष्ठम पर्व

1. राम-लक्ष्मण द्वारा सीता की खोज 72
2. राम-सुग्रीव मिलन 73
3. रत्नजटी ने बताया सीताहरण का व्रतांत 73
4. लक्ष्मण के द्वारा कोटिशिला का उठाया जाना 74
5. राम का संदेश लेकर हनुमान का लंका जाना एवं सीता को राम का संदेश देना 76
6. वापिस आकर हनुमान ने राम को सीता का सब समाचार सुनाया एवं सीता का चूड़ामणि राम को अर्पित करना 78

सप्तम पर्व

1. सेतु निर्माण एवं श्रीराम का लंका गमन 81
2. राम के दूत का लंका जाना 82
3. रावण और विभीषण का वाक् युद्ध 83
4. युद्ध प्रारम्भ 84
5. शक्ति लगने से लक्ष्मण का मूर्छित हो जाना 86
6. विशल्या द्वारा शक्ति का निवारण 87
7. युद्ध का सातवाँ दिन 88
8. लक्ष्मण द्वारा रावण का मरण 89

अष्टम पर्व

1. रावण का अंतिम संस्कार 92
2. इन्द्रजीत, मेघनाद, कुम्भकर्ण और मन्दोदरी आदि का जिनदीक्षा धारण करना एवं निर्वाण प्राप्ति 93
3. राम-लक्ष्मण का लंका में प्रवेश एवं अशोक वाटिका में राम-सीता का मिलन 94
4. राम-लक्ष्मण-सीता का लंका में प्रवास 95
5. आकाश मार्ग से नारद का अयोध्या में आना एवं माता कौशल्या के दु:ख का कारण पूछना 97
6. नारक का लंका पहुँचकर राम को माता कौशल्या का संदेश देना 98
7. राम के आगमन की पूर्व सूचना भरत को 99
8. अयोध्या में राम आगमन की तैयारियाँ 101

नवम पर्व

1. राम के द्वारा सीता के लिए विशेष स्थानों का परिचय कराना 103
2. अयोध्या के समीप आने पर भरत के द्वारा राम-लक्ष्मण-सीता का स्वागत करना। कौशल्या आदि चारों माताओं के चरण स्पर्श करना। माताओं द्वारा आशीर्वाद प्रदान करना। 103

3. अयोध्या में कुलभूषण-देशभूषण केवलीओं का आगमन होना एवं भरत के द्वारा संयास ग्रहण करना। 104
4. विद्याधर राजाओं द्वारा राम को राज्य सँभालने का निवेदन करना 106
5. सीता का स्वप्न दर्शन 107
6. सीता को तीर्थक्षेत्रों की वन्दना करने का दोहला उत्पन्न होना 108
7. प्रजाजनों के द्वारा राम से सीता विषयक लोक-निन्दा का वर्णन करना 108
8. सीता का वनवास 110
9. रोती हुई सीता के लिए राजा वज्रजंघ द्वारा सान्त्वना देना। 113
10. सीता के द्वारा वज्रजंघ को अपना सब वृतान्त सुनाना और वज्रजंघ का उसे धर्मबहिन स्वीकार करना। 113
11. पालकी में बैठकर सीता का पुण्डरीकपुर पहुँचना 115

दसवाँ पर्व

1. लव-कुश का जन्म होना एवं शिक्षा अध्ययन करना 117
2. अनंगलवण और मदनांकुश का विवाह 118
3. नारद के द्वारा अनंगलवण और मदनांकुश को राम-लक्ष्मण का परिचय कराना 119
4. नारद के द्वारा सीता के परित्याग का उल्लेख करना 120
5. लव-कुश का राम-लक्ष्मण से युद्ध करने का निश्चय करना। युद्ध का निश्चय सुन सीता का अपना सम्पूर्ण वृत्तांत पुत्रों को सुनाना 121
6. लवणांकुश और राम-लक्ष्मण का युद्ध 122
7. सिद्धार्थ द्वारा राम-लक्ष्मण के समक्ष दोनों कुमारों का रहस्य प्रकट करना। पिता-पुत्रों का समागम होना। 124

ग्यारहवाँ पर्व

1. हनुमान आदि राजाओं के द्वारा सीता को वापिस लाने की प्रार्थना करना 126
2. हनुमान आदि द्वारा सीता को पुण्डरीकपुर से वापस लाना 127

3. सर्वभूषण मुनिराज को केवलज्ञान होना 129
4. सीता की अग्नि परीक्षा 130
5. राम का सीता से क्षमा माँगना एवं सीता का आर्यिका दीक्षा लेना 132
6. कृतान्तवक्त्र सेनापति का जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करना। 133
7. आर्यिका सीता का समाधिमरण होना एवं अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र होना 135

बारहवाँ पर्व

1. सौधर्म इन्द्र की सभा में'स्नेह'विषय पर चर्चा होना 137
2. दो देवों के द्वारा राम–लक्ष्मण के स्नेह की परीक्षा करना एवं लक्ष्मण की मृत्यु होना 138
3. राम का करुण विलाप 140
4. विद्याधर राजाओं का राम को सम्बोधन देना एवं राम का लक्ष्मण के निष्प्राण शरीर को लेकर फिरना 141
5. कृतान्तवक्त्र और जटायु के जीव द्वारा राम को सम्बोधित करना एवं राम के द्वारा लक्ष्मण के शव का दाह संस्कार करना 142
6. राम की जैनेश्वरी दीक्षा 145
7. महामुनि राम का चर्या के लिए नगर में आना किन्तु क्षोभ हो जाने के कारण बिना आहार किये ही वन में लौट आना 147
8. मुनिराज राम का पाँच दिन का उपवास कर 'वन में ही आहार मिलने पर ग्रहण करूँगा' ऐसा नियम लेना 149
9. सीता के जीव प्रतीन्द्र का अवधिज्ञान से जानना की राम इस भव में मोक्ष जाने वाले है। 151
10. प्रतीन्द्र द्वारा राम पर उपसर्ग करना एवं राम को केवलज्ञान होना 152
11. राम का मोक्षगमन 154

प्रथम पर्व

भगवान ऋषभदेव एवं वंशोत्पत्ति

भगवान ऋषभदेव

भारतीय संस्कृति में मनु का नाम सभी जानते हैं। मनु की संतान को मनुज कहते हैं। अंतिम मनु नाभिराय हुये, जिनकी संतान आदि ब्रह्मा, आदि देव, आदिनाथ स्वामी हुये। इन्हीं का दूसरा नाम ऋषभदेव भी है। इस्लाम सम्प्रदाय में इन्हीं 'अंतिम नाभिराय मनु' के लिए 'नाभि' के नाम से पुकारा जाता है और आदि ब्रह्म ऋषभदेव के लिए 'ऋषभ' नाम से जाना जाता है। नाभिराय के पुत्र ऋषभनाथ का जन्म भारत देश की प्राण नगरी अयोध्या नगरी में हुआ। ऋषभनाथ जन्म के पश्चात् बाल क्रीड़ा करते हुये युवा अवस्था को प्राप्त हुये। इन्द्र ने ऋषभदेव का पाणिग्रहण नंदा और सुनंदा नामक दो राज कन्याओं के साथ कराया। ऋषभदेव के जीवन में भरत और बाहुबली ये दो पुण्य पुत्र और ब्राह्मी और सुंदरी ये दो कन्या रत्न प्राप्त हुये।

भरत से ही पुत्र आगे चलकर 'भरत चक्रवर्ती' बने। भरत पराक्रम और शौर्य के धारक महान् प्रतापी जिसने अपने पुरुषार्थ के द्वारा षट्खण्ड पृथ्वी को जीत लिया था। आदि ब्रह्मा के पुत्र भरत के नाम से इस देश का नाम भारत पड़ा। आदि ब्रह्मा आदिनाथ स्वामी का राज्य अवस्था में अनेकों वर्ष का समय व्यतीत होता है। तिरासी लाख वर्ष पूर्व बीत जाने पर एक दिन उनका जन्मोत्सव मनाया जा रहा था। **सौधर्मेन्द्र** आज्ञा लेता है, हे स्वामी! मैं चाहता हूँ आपके जन्मोत्सव के अवसर पर स्वर्ग की अप्सरा नीलांजना स्वयं नृत्य प्रस्तुत करे और आपके सभासद प्रसन्नता को प्राप्त हों। आदिनाथ स्वामी ने ओम् बोलकर स्वीकृति प्रदान की। इन्द्र नीलांजना जैसी रूपसी देवी को लेकर सभा में उपस्थित होता है। तत्पश्चात् नीलांजना का नृत्य प्रारम्भ हुआ। कुछ क्षण व्यतीत होते हैं कि नृत्य के मध्य में एक विस्मयकारी दृश्य आ जाता है जो किसी ने कभी नहीं देखा होगा। वह देवी नीलांजना नृत्य करते-करते मरण को प्राप्त हो जाती है। इंद्र तत्काल दूसरी नीलांजना उपस्थित कर देता है। देव हो या देवी, मरण के पश्चात् उनका शरीर सीधा कपूर की भाँति उड़ जाता है। लेकिन आदिनाथ स्वामी जन्म से तीनों ज्ञान के धारी थे। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान। आदिनाथ स्वामी ने जान लिया कि ओ हो!

जहाँ देवों का शरीर भी, देवों का जीवन भी निश्चित नहीं है वहाँ पर हमारे जीवन की क्या स्थिति होगी? वह विचार करते हैं :

क्षणं वित्तं क्षणं चित्तं

धन-पैसा क्षण भर के लिए भी रुकने वाला नहीं है। मनुष्य का चित्त इतना चंचल है कि वह भी क्षण भर के लिए एक समान नहीं है। जब देवों का जीवन ही इस तरह विध्वंसी है तो फिर मनुष्यों की क्या स्थिति होगी? महाराज दया कर सकते हैं, करुणा कर सकते हैं लेकिन यमराज किसी पर दया और करुणा नहीं करता। इसलिए धर्म के लिए शीघ्र गमन करना चाहिये। वह चिंतन में डूब जाते हैं :-

जीवन है पानी की बूँद कब मिट जाये रे।
होनी-अनहोनी कब क्या घट जाये रे।।

आदिनाथ स्वामी विचार शृंखला में डूब जाते हैं। स्मृति कक्ष में प्रवेश कर जाते हैं, समृति कक्ष में प्रवेश करते ही अन्तरंग से वैराग्य की लहरें प्रस्फुटित होने लगती है। महापुरुषों के लिए जरा सा भी निमित्त मिल जाये तो वह वैराग्य की दिशा में आगे बढ़ जाते हैं। जिनका पूर्वजन्म का सातिशय पुण्य रहता है। वह बिना निमित्त के ही वैराग्य पथ की ओर बढ़ जाते हैं। लेकिन जब निमित्त मिल जाये तो कहना ही क्या है? उनके वैराग्य के लिए न तो बचपना और ना ही वृद्धपना कोई उम्र नहीं है। वैराग्य का उम्र से कोई प्रयोजन नहीं है, जिस समय तुम्हारे जीवन में वैराग्य आ जाये उसी समय समझ लेना कि वास्तविक धर्म का जन्म हो गया और आदिनाथ स्वामी के जीवन में वह वैराग्य प्रस्फुटित होता है।

ज्योंही वैराग्य होता है आदिनाथ स्वामी भरत और बाहुबली को बुलाते हैं। अपने सिर का मुकुट भरत को पहनाकर भरत का राज्यतिलक कर देते हैं। अयोध्या नरेश सम्राट भरत चक्रवर्ती इस भारत देश पर राज्य करेंगे। लघु पुत्र बाहुबली के लिए पोदनपुर का राज्य प्रदान कर देते हैं। वैराग्य वृद्धि होते ही पंचम स्वर्ग के देव, ब्रह्म स्वर्ग के देव

लौकान्तिक देव आते हैं और वैराग्य की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं। यदि सद्गुणों की प्रशंसा की जाये तो वह प्रशंसा सातिशय पुण्य को वर्द्धन करने वाली होती है। आदिनाथ स्वामी वैराग्य के पथ पर बढ़ जाते हैं, यह नहीं सोचते कि मेरी अवस्था क्या है?

जीवन के किसी भी पल में वैराग्य उपज सकता है।
संसार में रहकर प्राणी संसार को तज सकता है।।
कहीं दर्पण देख विरक्ति, कोई मृतक देख बैरागी।
बिन कारण दीक्षा लेता वो पूर्वजन्म का त्यागी।।
निर्ग्रंथ साधु ही इतने सद्गुण से सज सकता है।
संसार में रहकर प्राणी संसार को तज सकता है।।

वैराग्य आते ही आदिनाथ स्वामी निकल जाते हैं। चतुर्थ आश्रम सन्यास की ओर, चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्ष की सिद्धि के लिए। देव लोग पालकी में बैठाकर उन्हें जंगल की ओर ले जाते हैं। जंगल में जाकर आदिनाथ स्वामी सब कुछ त्याग कर देते हैं और यथाजात बालक अवस्था को प्राप्त करते हैं। जैसे बालक निर्विकार होता है उसी तरह सब कुछ त्याग करके वह निरारम्भ, निस्परिग्रही साधु अवस्था को प्राप्त करते हैं। ज्योंही साधना में बैठते हैं उसी समय आदिनाथ स्वामी के दो पोते नमि और विनमि वहाँ आ जाते हैं। बालक तो बालक ही होते हैं, बोलते हैं- स्वामी जी! स्वामी जी! बाबाजी! आपने भरत जी के लिए अयोध्या का राज्य दिया, बाहुबली जी के लिए पोदनपुर का राज्य दिया और हमारे लिए कुछ नहीं दिया, हमारे लिए भी दो न कुछ। आदिनाथ स्वामी ध्यान मुद्रा में बैठे थे। तभी नागेन्द्र उपस्थित होता है।

वंशोत्पत्ति

नागेन्द्र वृद्ध का रूप धारण करके उपस्थित होता है और नमि-विनमि से कहता है : आपके दादा आदिनाथ स्वामी ने सन्यास ले लिया है, अब आपको कुछ नहीं दे पायेंगे। बालक नमि व विनमि कहते हैं- वृद्ध बाबाजी आप न्याय-नीति के ज्ञाता लगते हैं,

लेकिन आप फिर भी भूल कर रहे हैं, कि दो के बीच बोलने वाला कौन कहलाता है?

नागेन्द्र कहते हैं- मैं न्याय-नीति को अच्छी तरह से जानता हूँ। उस नीति का प्रयोग करते हुए बोले- आदिनाथ स्वामी जब दीक्षा ले रहे थे, उसके पूर्व काफी इंतजार किया। जब आप लोग नहीं पधारे तो स्वामी जी ने मुझे आज्ञा दी, कि यदि दो बालक आयें तो उन्हें संदेशा दे देना और यदि आप संदेशा सुनना चाहें तो सुनें, नहीं तो मैं चलता हूँ। दोनों बालक हाथ जोड़कर, संदेश सुनने को उत्सुक होकर वृद्ध बाबाजी से कहते हैं- क्या हमारे दादाजी ने हमें याद किया? अच्छा तो ठहरिये और हमारे दादा का संदेश अवश्य सुनाइये।

नागेन्द्र कहते हैं- आपके दादाजी ने विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी व दक्षिण श्रेणी प्रदान करने की स्वीकृति दी है। मैं आपको वहाँ पर ले चलने के लिए आया हूँ। वृद्ध दोनों बालकों को विजयार्ध की दोनों श्रेणियों में ले जाता है।

वंश की उत्पत्ति का यह प्रसंग बतलाना अति आवश्यक है, क्योंकि एक राजा ने सुन्दर महल बनवाया। उस महल के बनने में सिर्फ 15 दिन का समय लगे, ऐसी राजा की आज्ञा थी। वह महल मात्र पहली बारिश में पानी के बहाव एवं हवाओं के वेग को सह नहीं पाया, सो महल गिर गया। राजा ने पूछा कि- यह महल इतना शीघ्र क्यों ढह गया? तो जवाब मिला, राजन्! आपकी आज्ञा से 15 दिन में महल तो बना दिया पर महल की नींव (आधार) नहीं रखी सो गिर गया। इसलिए वंशोत्पत्ति का प्रसंग रामकथा की नींव है।

आदिनाथ स्वामी का संन्यास काल चल रहा है, गाँव दर गाँव आहारचर्या के लिए निकलते हैं। छः माह बीत गये, उनको आहार नहीं मिलता है। सभी लोग पड़गाहन करते हैं, पर दिगम्बर साधु की विधि अनोखी होती है। परिपूर्ण शुद्ध, बिना बुलाये जाते नहीं, बार-बार बुलाने पर भी उनके अनुसार विधि मिलती है, तो आहार लेते हैं।

चूँकि आदिनाथ स्वामी के पड़गाहन की विधि किसी को मालूम नहीं थी और कर्म

ऐसी चीज है जो किसी को नहीं छोड़ता। कर्म ने तीर्थंकर महापुरुषों को भी नहीं छोड़ा। पूर्व में आदिनाथ स्वामी ने बैल के मुख को सींका से बाँधने की विधि बतलाई थी। इसी से उनके छः माह तक अन्तराय कर्म का बन्ध हो गया।

छः माह के पश्चात् आदिनाथ स्वामी हस्तिनापुर की ओर विहार करते हैं, उसी समय हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस व सोम को सुखद स्वप्न दिखाई देते हैं। स्वप्न में देखते हैं कि एक महान् मानव इस ओर चले आ रहे हैं। राजा सोम और श्रेयांस स्वप्न का फल मंत्री से पूछते हैं। मंत्री कहता है : हे राजन्! आपके सातिशय पुण्य प्रताप से आदि ब्रह्मा (आदिनाथ) मुनिराज आपके महल पधारने वाले हैं। उन मुनिराज की आहारचर्या आपके यहाँ सम्पन्न होगी। पूर्वजन्म में राजा श्रेयांस ने मुनिराज को आहार दान दिया था, जो जाति स्मरण के प्रभाव से याद आ जाता है।

आदिनाथ स्वामी का पड़गाहन हुआ। राजा ने अश्रुजल से चरण पखारे और केशों से उनके चरण का पाद-प्रक्षालन किया। आहार में आदिनाथ स्वामी ने तीन अंजुलि गन्ने का रस लिया। गन्ने को इक्षु (ईख) भी कहते हैं। उस समय की इस घटना से आदिनाथ स्वामी का वंश इक्ष्वाकु वंश कहलाया। **आहारदान दिवस अक्षय तृतीया ''आखा तीज'' कहलायी।** आदिनाथ स्वामी के पुत्र भरत हुये और भरत का पुत्र अर्ककीर्ति हुआ। अर्ककीर्ति शौर्य और पराक्रम से युक्त था। अर्क कहते हैं सूर्य को, इसलिए एक और वंश प्रसिद्ध हुआ '**सूर्यवंश**'। राजा सोम के यहाँ आदिनाथ स्वामी का आहार सम्पन्न हुआ था, तब से **सोमवंश** भी प्रसिद्ध हुआ। सोम कहते हैं चन्द्रमा को, तभी **चन्द्रवंश** की ख्याति हुई।

इसी क्रम में नामि-विनमि जो विजयार्ध की श्रेणियों में रहते थे। वे उस समय के वैज्ञानिक थे, जो विद्या के बल से भोजन करते थे, विद्या के बल से आकाश में गमन किया करते थे, तो नमि-विनमि का वंश विद्याधर वंश कहलाया। उसी विद्याधर वंश में दो और वंश हुए। विद्याधर वंश की अनेकों जातियाँ थीं। जैसे : रीछ, गन्धर्व, किन्नर, राक्षस इत्यादि। उनमें जो राक्षस जाति थी, उन राक्षसों का इन्द्र भीम। उस भीम से राक्षस

द्वीप की राजधानी लंका और पाताल लंका। लंका रहने का स्थान था और पाताल लंका उनकी सुरक्षा का स्थान था। वह दोनों मेघवाहन के लिए दिया और नौलखा हार भी दिया। उस समय राक्षस नाम का राजा भी हुआ और उसी के नाम से इस धरती पर **राक्षस वंश** हुआ। इन्हीं वंशों की परम्परा में **वानर वंश** भी प्रसिद्ध हुआ। धवलकीर्ति ने जब अपनी कन्या का पाणिग्रह किया श्रीकंठ से। तब श्रीकंठ के लिए उसने अपने राज्य का एक हिस्सा वानर द्वीप उसे भेंट में प्रदान किया। वानर द्वीप एक ऐसा स्थान था जहाँ पर अनेक प्रकार के वानर रहा करते थे। श्रीकंठ मनोवेगा रानी के साथ वहाँ रहने लगते हैं। श्रीकण्ठ बड़ा करुणालु, दयालु, प्रजावत्सल, धर्ममूर्ति था। परोपकार में धर्म समझता था। राजा श्रीकण्ठ पशु-पक्षियों सहित वानरों को बहुत प्रेम करता था। बन्दरों के लिए समुचित भोजन व्यवस्था करवाता। जो-जो बन्दर सुन्दर लगते उनके चित्र बनवाकर दीवारों पर लगवाता। इसी क्रम में कालचक्र बदलता रहता है। **समय और सिंधु की लहरें किसी की प्रतीक्षा नहीं करती है।** इसी श्रीकण्ठ के कुल को गौरवान्वित करने वाला अमरप्रभ नाम का राजा हुआ। अमरप्रभ राजा ने देखा कि चित्रों में जगह-जगह वानर ही वानर नजर आते हैं। जैसे- पत्थर की शिलाओं पर वानर का चित्र, दीवारों पर भी वानरों के चित्र। अमरप्रभ राजा ने मंत्री से पूछा- मंत्री जी! हमारे राज्य में वानरों के चित्र जगह-जगह क्यों बने हैं? मंत्री ने कहा- ये हमारे पूर्वजों की निशानी है, विरासत है। हमारे पूर्वजों में श्रीकण्ठ नाम का राजा हुआ, जो वानरों से बहुत प्रेम करता था। इतना प्रेम करता था कि वानरों की पूरी देखभाल। वानर भी उससे उतना ही प्रेम करते थे। वानर उसके पास जाकर खेलना पसंद करते थे।

अमरप्रभ सोचता है कि ये हमारी विरासत है तो **विरासत का सम्मान और संरक्षण अति आवश्यक है।** वह आदर भाव से उन चित्रों के लिए सुव्यवस्थित स्थान देते हैं और अपने मुकुट में और समस्त सेना के मुकुटों में वानर का चिन्ह अंकित कर लेता है। छत्र में, चंवर में, ध्वज-पताकाओं में, नगर के मुख्य मार्ग, बाजारों में भी वानर का चित्र अंकित कराकर, वानर चित्र के प्रति श्रद्धा भाव दर्शाता है। अब उनके वंश की सेना को

देख कर लोग दूर से ही अनुमान लगा लेते हैं कि ये तो वानर वंश की सेना है। इस तरह धरती पर वानर वंश प्रसिद्ध हुआ। इस क्रम में आज से लगभग एक लाख वर्ष पूर्व भगवान मुनिसुव्रत के काल में राजा रघु उत्पन्न हुए। राजा रघु पराक्रमी होने से, प्रजा का उनके प्रति सम्मान व मोह अधिक था। सत्य वचन के प्रतिष्ठापक राजा रघु का वंश '**रघुवंश**' के नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ।

जब समस्या ही नहीं होगी तो समाधान कहाँ से आयेगा? जब अँधकार ही नहीं तो दीपक जलाने से क्या प्रयोजन? रावण का जन्म एक समस्या है और श्रीराम उस समस्या का समाधान है। इसलिए रावण का जन्म पहले हुआ और श्रीराम का बाद में। आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है। श्रीराम हमारी आवश्यकता है और रावण एक समस्या।

रावण का जन्म

राजा सुकेत के तीन पुत्र थे : माली, सुमाली और माल्यवान। माली का युद्ध इंद्र राजा से हुआ और माली की हार हुई। माली की युद्ध में मृत्यु हो जाती है। सुमाली और माल्यवान लंका को त्याग कर पाताल लंका में रहने लगे।

जब कोई बालक गर्भ में आता है तो माँ के लिए दोहला (विचार) आते हैं। तो इन्द्र की रानी के लिए दोहला हुआ। यह इन्द्र मनुष्य ही था, ना कि देव। इन्द्र ने अपना नाम तो इंद्र रखा ही था, महल का नाम वैजयन्त, हाथी का नाम ऐरावत, सभा का नाम सुधर्मा, नर्तकी का नाम उर्वशी व तिलोत्तमा और नागरिकों को देव सम्बोधन करता। मंत्री का नाम बृहस्पति और सेनापति का नाम **ऋणकेश**, लोकपाल के नाम सोम, वरुण, कुबेर, यम रखा। रानी का नाम शची रखा। इस तरह से इंद्र ने अपने राज्य का विस्तार कर लिया और विजयार्ध की श्रेणियों को जीत लिया। सुमाली लंका में आकर रहने लगा और सुमाली के रत्नश्रवा नाम का पुत्र हुआ। यह रत्नश्रवा ही रावण के पिता व सुमाली रावण के दादा होंगे। रत्नश्रवा का विवाह केकसी के साथ हुआ। केकसी एक रात्रि में तीन स्वप्न देखती है, **पहले स्वप्न** में क्रोध से उद्धत हाथी मेरे मुख में प्रवेश कर

रहा है, **दूसरे स्वप्न** में उगता हुआ सूरज प्रचण्ड रश्मियों के साथ, **तीसरे स्वप्न** में पूर्ण चन्द्रमा। प्रात: होते ही रानी केकसी राजा रत्नश्रवा से तीनों स्वप्नों के फल को जानने के लिए कहती है। स्वामी मुझे क्रमश: फल जानना है, इस पर रत्नश्रवा कहते हैं : हे प्रिये! तुम्हारे गर्भ में एक पुत्र आ चुका है, जो पहले स्वप्न के अनुसार अत्यन्त पाप कार्य करने में उद्धत होगा। दूसरे स्वप्न के अनुसार उगते हुए सूर्य की तरह पूरी सृष्टि को लाभ देने वाला होगा। तीसरे स्वप्न के अनुसार चन्द्रमा की भाँति शीतलता देने वाला, अमृत बिखेरने वाला व कल्याणकारी होगा।

गर्भस्थ शिशु के अनुसार माँ के परिणाम होने लगते हैं। रानी केकसी पल-पल, क्षण-क्षण में क्रोध करने लग जाती, थोड़ी-थोड़ी बात पर हट करने लग जाती और रानी को दोहला होता है कि मैं कुल्हाड़ी में अपना मुख देखूँ। 9 माह पश्चात् पाताल लंका में जहाँ मणियों का प्रकाश फैला होता है, वहाँ पुत्र का जन्म होता है। लेकिन पाप कर्म वाला पुत्र होने से मणियों का प्रकाश भी सघन अँधकार में बदल जाता है।

अँधकार तब छा गया, रावण लीना जन्म।
मानव जग में फिर हुआ, पाप तिमिर का जन्म।।

रावण का जन्म होते ही कई अपशकुन होते हैं। चारों ओर अँधेरा छा जाता है, काँच के बर्तन अपने आप ऊपर से नीचे की ओर गिरते हैं, कई अशुभ आवाजें सुनाई देने लगती हैं। पुत्र चाहे कैसा ही हो? माँ उसका पालन-पोषण करती ही है।

दशानन नाम क्यों?

वह बालक पालने में झूलते-झूलते देखता है कि सामने कुछ टँगा हुआ है। बालकों को जो वस्तु अच्छी लगती है, उसे पाने की कोशिश करते हैं, चाहे वह दीपक की लौ ही क्यों न हो? उस बालक रावण ने सामने टँगे हुए हार (नौलखा) को पकड़ ही लिया। नौलखा हार की विशेषता थी कि उसमें नौ मणियाँ लगी थीं। और उस हार की 1000 देव रक्षा करते थे। इतना वजनदार था कि कोई उसे उठा नहीं पाता था। वह बालक पूर्वजन्म में की गई तपस्या से बहुत शक्तिशाली था। बालक के हार उठाते ही उसमें

बालक के 9 मुख दिखाई देने लगे और एक स्वयं भी। इस तरह से 10 मुख वाला, अरे ये तो दशानन है। जो नाम बचपन में दे दिया जाता है वह बाद में प्रसिद्ध हो जाता है, इसलिए रावण को **दशानन** भी कहते हैं। विद्या आदि के प्रभाव से रावण कभी 10 मुख, तो कभी 100 मुख और कभी-कभी 1000 मुख भी बना लेता।

रानी केकसी के दूसरा पुत्र **कुम्भकर्ण** हुआ, तीसरी संतान पुत्री के रूप में **चंद्रनखा** (जिसे वाल्मीकि रामायण में **सूर्पणखा** कहा है), चौथी संतान **विभीषण** के रूप में पुत्र हुआ। इस तरह केकसी के तीनों पुत्र वन में जाते हैं और साधना करते हैं। रावण के लिए एक हजार विद्‍याएँ सिद्ध होती हैं, कुम्भकर्ण के लिए पाँच, विभीषण के लिए चार विद्याएँ सिद्ध होती हैं। इसके साथ रावण अनेकों विद्‍याएँ सिद्ध कर लेता है और इंद्र राजा से युद्ध कर पराजित कर देता है।

रावण का विवाह राजा मय की पुत्री मंदोदरी से होता है। कुम्भकर्ण का विवाह तडिन्माला कन्या से, विभीषण का विवाह राजीव कन्या से होता है। चंद्रनखा के विषय में अनेक उल्लेख मिलते हैं, एक तो खरदूषण के विषय में उल्लेख मिलता है।

रावण नाम क्यों पड़ा?

आइये इस विषय में देखते हैं:- कैलाश पर्वत जिसे बद्रीनाथ बोलते हैं, अष्टापद भी बोलते हैं। एक बार वहाँ मुनिराज तपस्या कर रहे थे तो रावण का विमान मुनिराज के ऊपर आकर रुक गया। तभी रावण क्रोधित हो उठता है, कौन है? जिसने मेरा विमान रोक दिया, इतना कहकर रावण विमान को पर्वत के नीचे उतार लेता है और देखता है, वहाँ मुनिराज तपस्या कर रहे हैं। रावण को पूर्व बैर होने से क्रोध आ जाता है और मुनि पर उपसर्ग का भाव मन में लाकर पर्वत उठाता है पर्वत पर रहने वाले जीव-जन्तुओं की रक्षा का भाव मुनि के मन में आता है, तभी मुनिराज पर्वत को अँगूठा लगा देते हैं और पर्वत नीचे की ओर दबने लगता है और रावण रोने लगता है। रावण के रोने की आवाज सुनकर मंदोदरी रानी आदि आकर मुनिराज से निवेदन करती है : हे मुनिराज! आप तो दया के सागर हैं, मुझे पति की भिक्षा दे दीजिए। मुनिराज पैर के अँगूठे को ढीला कर देते हैं। उसी दिन से रोने के कारण रावण नाम से सृष्टि पर प्रसिद्ध हुआ।

हनुमान का जन्म

अंजना सुत, पवनपुत्र हनुमान को कहा जाता है। माता अंजना सीताजी के समान पतिव्रत धर्मपरायण, धर्मशीला स्त्री रहीं। हनुमान जैसे पराक्रमी पुत्र को जन्म देने वाली माँ कोई सामान्य स्त्री नहीं हो सकती। विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में आदित्यपुर एक नगर था। जहाँ राजा प्रह्लाद और रानी केतुमती के पुत्र पवन कुमार हुये थे। एक और नगर था महेन्द्रपुर। यहाँ के राजा महेन्द्र और रानी मनोवेगा थी। राजा महेन्द्र और रानी मनोवेगा के एक पुत्री अंजना थी। राजा महेन्द्र अपनी पुत्री अंजना के लिए विवाह पूर्व योग्य वर खोज रहे थे, खोजते-खोजते कैलाश पर्वत पर पहुँच गये। वहाँ राजा प्रह्लाद आया हुआ था। राजा प्रहलाद और राजा महेन्द्र दोनों मित्रों की मुलाकात होती है। राजा महेन्द्र पुत्री अंजना के विवाह के लिए राजा प्रह्लाद से चर्चा करते हैं कि आपके वानरवंशी पुत्र पवनकुमार से पुत्री अंजना का पाणिग्रहण हो जाये तो उचित रहेगा। राजा प्रह्लाद विवाह के लिए स्वीकृति दे देते हैं। दोनों का पाणिग्रहण संस्कार हो जाता है। समय व्यतीत होता है, अंजना और पवन कुमार के अतुल्य बलशाली, पराक्रमी, चरमशरीरी, मोक्षगामी (उसी भव से मोक्ष जाने वाले), इस सृष्टि पर आराध्य के रूप में, महान् पुत्र का जन्म होता है। बालक हनुमान का जन्म गुफा में हुआ था, पर महापुरुष के जन्म होने से गुफा में मणियों सा प्रकाश छा जाता है। जब **महान् पुरुष जन्म लेते हैं, तो अँधेरे को रोशनी में बदलते देर नहीं लगती और पापी पुरुष के जन्म पर रोशनी भी अँधकार रूप हो जाती है।** महापुरुष पाप को भी पुण्य में बदल देते हैं।

माँ अंजना, पुत्र को लेकर गुफा में है और गुफा के द्वार पर बसन्तमाला बैठी होती है। तभी आकाश मार्ग से होते हुए अंजना का मामा प्रतिसूर्य जा रहा था। प्रतिसूर्य बच्चे के रोने की आवाज सुनता है और सोचता है इतने सघन वनमें बच्चा कहाँ से आ गया? उसने विमान नीचे उतारा। माँ अंजना की मुसीबतें कम नहीं थी, फिर ये कौन सी मुसीबत आ गई? प्रतिसूर्य गुफा के बाहर बैठी दासी बसन्तमाला से पूछता है। दासी कहती है-

राजा महेन्द्र की पुत्री व राजा प्रह्लाद की पुत्रवधु अंजना अंदर है, अंजना ने पुत्र रत्न को जन्म दिया है। ज्योंही प्रतिसूर्य सुनता है, अंजना-अंजन। वह तो मेरी भांजी है। माता अंजना भी प्रतिसूर्य को पहिचान लेती है, ये तो मेरे मामा हैं। **जहाँ धर्म होता है, वहाँ जंगल में भी मंगल हो जाता है, वन में भी सहारा मिल जाता है।**

माता अंजना, मामा से पुत्र के विषय में पूछती है- यह पुत्र कैसा होगा? मामा कहते हैं- यह पुत्र इतने शुभ मुहूर्त में हुआ है, यह महान् पुरुष होगा व नियम से मोक्षगामी होगा। मामा कहते हैं- पुत्री! मेरे नगर चलो। इस पर अंजना सोचती है कि जंगल में पुत्र की रक्षा कैसे होगी? इसलिए वह मामा के साथ विमान में चलती है। मामा-भांजा (भांजी) का प्रेम अत्यन्त प्रगाढ़ होता है, मामा प्रतिसूर्य अंजना से वार्तालाप में कुशलक्षेम पूछते हैं। बालक हनुमान विमान में लगी हुई छोटी-छोटी घंटियों को देख रहे थे और उन्हें पकड़ने की कोशिश करते हैं। इस पर अंजना हनुमान का हाथ हटाती है, तो बालक हनुमान और जोर लगाते हैं एवं बालक हनुमान विमान से नीचे गिर जाते हैं।

अंजना सोचती है, अभी पुत्र को जन्मे तीन दिन ही हुए हैं और पुत्र नीचे गिर गया। प्रतिसूर्य विमान को धीरे-धीरे नीचे उतारता है। देखता है कि पुत्र हनुमान उस पर्वत खण्ड पर किलकारी मारता हुआ खेल रहा है। प्रतिसूर्य के मुख से शब्द निकलते हैं :-

जिनके गिरने से हुआ, पर्वत रेत समान।
हनन किया है मान का, पड़ा नाम हनुमान।।

बालक के गिरने से पर्वत रेत सा हो गया, क्योंकि बालक चरमशरीरी वज्रवृषभ-नाराच संहनन का धारी था। जिस प्रकार वज्र के प्रहार से पर्वत कण-कण हो जाता है, इसी कारण से बालक हनुमान का नाम बज्रांग (बजरंग) बली भी पड़ा। इसलिए अंजनि सुत, पवन पुत्र हनुमान, बजरंगबली इत्यादि नामों से जाना जाता है। **हनुवृत द्वीप में उनका पालन हुआ इसलिए भी उन्हें हनुमान कहते हैं।** हनुमान शौर्य, वीर्य, बल,

पराक्रम अनेक गुणों के धारक थे। वाल्मीकि रामायण में हनुमान के बारे में बताया : **मनोजवं** – महान् सुन्दरता के धारक। **वायुवेग** – जो वायु के समान गमन करने वाले हैं। **जितेन्द्रीय**–इन्द्रियों को जीतने वाले। **बुद्धिमतां** – बुद्धि के धारक। वानर वंश के शिरोमणि ऐसे रामदूत महान् पुरुष हुए। इस तरह हनुमान का जीवन प्राणीमात्र के लिए पावनमय जीवन है। सेवा भाव से ओत–प्रोत हनुमान, सच्चा भक्त बनने का संदेश देते हैं।

*****

द्वितीय पर्व

राम का जन्म
एवं
शिक्षा काल

काल विभाजन

प्रिय आत्मन!

आपकी अन्तरात्मा में प्राण प्रतिष्ठित शक्ति रूप परमात्मा को कोटि-कोटि प्रणाम। आपकी अन्तरात्मा में प्राण प्रतिष्ठित दया धर्म को कोट-कोटि वन्दन गुरु उपहार स्वीकार करें।

मेरा परिचय सिर्फ इतना ही है, जैसे कोई नन्हा सा बालक अपनी दोनों भुजाओं को फैलाकर समुद्र के विस्तार को बतलाना चाहे तो वह नन्हा बालक हास्य का पात्र होगा और समुद्र के विस्तार को बतला भी नहीं पायेगा। उसी तरह मर्यादा पुरुषोत्तम वीतरागी श्रीराम प्रभु जो गुणों के अपार समुद्र हैं, उनके गुणों की ये रामकथा बताने का साहस कर रहा हूँ ये मेरी मूर्खता की पहली निशानी है। फिर भी स्वपर कल्याण के लिए पूर्वाचार्य क्रम से में यह रामकथा कहता हूँ।

विश्व तीन भागों में विभक्त है - उर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। जहाँ देव, इन्द्र निवास करते हैं, ऐसे बैकुण्ठ को उर्ध्व लोक कहते हैं। मनुष्य, जानवर इत्यादि जहाँ रहते हैं, इसे मध्य लोक कहते हैं। इस लोक के नीचे (मध्य लोक के नीचे) अधो लोक है जहाँ नारकी जीव निवास करते हैं। मध्य लोक के मध्य में भरत क्षेत्र है, भरत क्षेत्र के मध्य में आर्यखण्ड है। आर्यखण्ड के मध्य में भारत देश है और भारत देश की प्राणस्थली अयोध्या नगरी है। यह अयोध्या शाश्वत तीर्थधाम नगरी है। जैन दर्शन में दो ही तीर्थ शाश्वत (सनातन) रूप में है। 1. अयोध्या नगरी 2. तीर्थराज सम्मेद शिखर। अयोध्या नगरी अपने आप में महान् है क्योंकि आदिनाथ आदि तीर्थंकरों का जन्म इसी अयोध्या नगरी में हुआ तथा

युद्ध नहीं होते जहाँ, पड़ा अयोध्या नाम।
जन्मभूमि श्री पद्म की, जय-जय-जय श्रीराम।।

जहाँ पर किसी भी प्रकार के युद्ध नहीं होते हैं, जो नगरी युद्ध के योग्य नहीं है अथवा

जो भूमि (नगरी) किसी भी योद्धा के द्वारा जीती नहीं जा सकती, ऐसी **अयोध्या नगरी है**। इस भूमि को अन्य दूसरे नामों में साकेत और अवधपुरी के नाम से भी जाना जाता है। **अवध शब्द का अर्थ है जो वध से रहित हो, जिस स्थान पर किसी भी जीव का वध नहीं किया जाता हो, वह नगरी है 'अवधपुरी'**।

जहाँ पर होते वध नहीं, अवधपुरी वह धाम।
जन्मभूमि श्रीराम की, जय–जय–जय श्रीराम।।

भारतीय संस्कृति की धारा दो संस्कृति से मिलकर बहती है, एक श्रमण संस्कृति, दूसरी वैदिक संस्कृति। श्रमण संस्कृति में श्रमण धर्म के प्रतर्वक चौबीस तीर्थंकर हुए और चौबीस तीर्थंकर क्षत्रिय कुल में पैदा हुए। सबसे बड़ी विशेष बात है कि जितने भी तीर्थंकर पैदा होते हैं, उन सब **प्रत्येक तीर्थंकर का जन्म कल्याणक अयोध्या नगरी में ही मनाया जाता है। इसके साथ ही अयोध्या नगरी में अन्य तीर्थंकरों के भी कल्याणक मनाये गये। इस नगरी को मात्र श्रीराम की जन्मभूमि ही नहीं अपितु यह कह सकते हैं कि यह नगरी भगवन्तों की 'पुण्य प्रसूता' जन्म नगरी है।** समय चक्र चलता जाता है, समय और सिंधु की लहरें किसी की प्रतीक्षा नहीं करती है। कालचक्र अपनी गति से चलता रहता है। घड़ी की सुइयाँ थम सकती हैं, लेकिन इस संसार में यदि किसी को रोका नहीं जा सकता तो वह है मात्र एक समय। समय कभी ना तो थकता है, ना रुकता है। यह कालचक्र सदैव गतिमान रहता है, इस काल के दो भेद होते हैं – 1. एक उत्सर्पणी काल 2. दूसरा अवसर्पणी काल। उत्सर्पणी काल – विकास का काल, अवसर्पणी काल – ह्रास का काल। उन्नति के काल को उत्सर्पणी काल कहते हैं, अवनति के काल को अवसर्पणी काल कहते हैं। जैसे घड़ी में एक से छः तक के काँटे क्रम से नीचे की ओर हैं, उसी तरह अवसर्पणी काल में ह्रास होता जाता है। अवसर्पणी काल में शरीर, रूप, वैभव, शक्ति, बल इत्यादि घटता–घटता जाता है। पहला काल सुखमा–सुखमा होता है, जिसमें सभी प्राणियों को सुख ही सुख प्राप्त होते हैं। दूसरा

काल सुखमा काल होता है, इसमें भी भोग भूमि रहने से सभी चीजें सुलभता से प्राप्त हो जाती है। सुखमा काल में मनुष्यों की आयु दो पल्य की रहती है, शरीर आदि की ऊँचाई क्रमशः ह्रास होती जाती है। तीसरा काल सुखमा-दुखमा आता है, जिसमें सुख की ही प्रधानता रहती है और दुःख गौण रहता है। चौथा काल दुखमा-सुखमा आता है। जिस काल में हम सभी विराजमान हैं, यह पंचम काल अत्यन्त दुखदायी काल बताया।

पहला काल चार कोड़ा-कोड़ी सागर का, दूसरा काल तीन कोड़ा-कोड़ी सागर का, तीसरा काल दो कोड़ा-कोड़ी सागर का, चौथा काल बयालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ा-कोड़ी सागर, पंचम काल इक्कीस हजार वर्ष का है, जिसमें से अभी तक ढाई हजार वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। साढ़े अठारह हजार वर्ष अभी शेष हैं। छठवाँ काल दुखमा-दुखमा (इक्कीस हजार वर्ष की आयु) आयेगा।

इस काल परम्परा में जब चतुर्थ काल आता है, इस चतुर्थ काल में अयोध्या नगरी में अनेकानेक पुण्य पुरुष पैदा होते हैं। प्रत्येक उत्सर्पणी व अवसर्पणी के महापुरुष अयोध्या नगरी में पैदा होते हैं। लेकिन यह हुण्डावसर्पणी काल का प्रभाव है कि मात्र आदिनाथ, अजितनाथ, अनन्तनाथ, अभिनन्दननाथ और सुमतिनाथ इन पाँचों तीर्थंकरों ने अयोध्या नगरी को **जन्मभूमि** बनाया। शेष तीर्थंकर अन्य-अन्य जगहों से जन्में। ऐसी पावन अयोध्या नगरी में राजा रघु निवास करते हैं। रघुकुल की पावन मर्यादा को प्रतिष्ठित करने वाली, राजा रघु के कुल में अनरण्य के सुपुत्र दशरथ का पाणिग्रहण कौशल राजा की रानी अमृतप्रभा की सुपुत्री **कौशल्या** के साथ सम्पन्न होता है। इसी के साथ राजा दशरथ के अन्य विवाहों का उल्लेख वाल्मीकि रामायण में तीन रानियों से होना बताया है और पद्म पुराण में चार रानियों से विवाह होने का उल्लेख मिलता है। यह बात आज से सत्तर हजार वर्ष पूर्व की चल रही है। राजा दशरथ की दूसरी रानी **सुप्रभा**, तीसरी **कैकयी** और चौथी रानी **सुमित्रा** है। माता **कौशल्या** रात्रि के अंतिम प्रहर में निद्रामग्न थी, उसी समय मांगलिक स्वप्नों को देखती है। जगकल्याणी माता विनयशील, पति सेवा पारायण, सुसंस्कार सम्पन्न, ज्ञान-विज्ञान की प्रतिमूर्ति थीं। प्रत्येक कार्य को कुशलता के साथ करने से '**कौशल्या**' नाम मिला।

राम जन्म के पूर्व माँ ने देखे स्वप्न

माँ कौशल्या के द्वारा देखे गये सुस्वप्न क्रमशः इस प्रकार से हैं : 1. अत्यन्त शांत एवं उच्च **ऐरावत हाथी** 2. अत्यन्त पराक्रमी **केसरी सिंह** 3. अनेकों किरणों से सृष्टि को प्रकाशित करने वाला **उदीयमान सूर्य** 4. शीतल अमृत को झराने वाला **पूर्ण चन्द्रमा**।

स्वप्न फलादेश– माता कौशल्या के ये चारों स्वप्न सम्पूर्ण सृष्टि के लिए कल्याणकारी थे। रानी कौशल्या स्वप्न का फल जानने हेतु राजा दशरथ से निवेदन करती है। राजा दशरथ प्रसन्नचित्त हो जाते हैं, गद्‌गद् हो जाते हैं, फूले नहीं समाते हैं। वह कहते हैं– स्वप्न में जो **उच्च ऐरावत हाथी देखा है** इससे आपका पुत्र स्वाभिमानी, शक्तिशाली एवं शांत परिणामी होगा। **केसरी सिंह देखने का फल है** कि यह बालक अत्यन्त पराक्रम का धारी होगा। **उदीयमान सूर्य से तात्पर्य है कि** आपकी संतान पापकर्म को सम्पूर्ण नाश करने वाली होगी। चौथे स्वप्न में आपने **पूर्ण चन्द्रमा देखा है** इसका अर्थ है, जिस तरह से चन्द्रमा से शीतलता का अमृत झरना झरता है, उसी तरह पुण्य पुत्र के जीवन से, वचनों से, दया–करुणा रूपी झरना झरता रहेगा। स्वप्नों के इतने महान् फलों को सुनकर कौशल्या माँ हर्ष से भर जाती है, उसकी प्रसन्नता कई गुना बढ़ जाती है। आनन्द की हिलोरें उसके हृदय में उठ जाती हैं। धन्य है मेरी मातृत्व तपस्या, धन्य है मेरा जीवन। ऐसा जगत् का कल्याणकारी, धर्म का धारक पुत्र इस जीवन में उत्पन्न होगा।

श्रीराम का जन्म

वह माँ कौशल्या अपनी दैनिक क्रियाएँ कभी ध्यान, पूजा, अर्चना, उपासना, सामायिक, स्वाध्याय, वैराग्य भावना, स्तुतियाँ, आराधनाएँ करती एवं अपने चित्त को प्रभु में लगाती। इस क्रम से छः माह व्यतीत होते हैं। एक दिन रानी कौशल्या के लिए दोहला होता है। दोहला से तात्पर्य दो को हल करने वाला। पुत्र और माँ इन दोनों के विचारों से जो विचार उत्पन्न होते हैं, उन्हें दोहला बोलते हैं। वह भगवान का दर्शन करे, भगवान की पूजा–पाठ करे, इस तरह का दोहला कौशल्या माँ को होता है। रानी

कौशल्या पहले से ही पूजा–भक्ति करने वाली थी, पर अब कहना ही क्या है? वह ज्यादा से ज्यादा समय पूजा–पाठ में लगाती। ऐसे ही नौ माह व्यतीत हो जाते हैं। इस भारतवर्ष को परम पवित्र करने वाला, इस वसुंधरा का कल्याण करने वाला, अष्टम बलभद्र के रूप में अवतरित होने वाले, अयोध्या के ही नहीं, अपितु समग्र सृष्टि के राजा बनने वाले, सभी प्राणियों के हृदय के राजा बनने वाले माता कौशल्या की पुण्य कुक्षी से मर्यादा पुरुषोत्तम बनने वाले बालक का जन्म अयोध्या नगरी में हुआ और समस्त नगरी में राम–राम नाम की जय–जयकार गुंजायमान होने लगती है। सारे प्रजाजन प्रफुल्लित होकर राजा दशरथ के पास बधाइयाँ देने पहुँचते है। राजा दशरथ भी नागरिकों को अनेक प्रकार के उचित वस्त्र–आभूषण प्रदान कर उनका स्वागत–सम्मान करते हैं।

नामकरण संस्कार

माँ ने बालक का अभी तक कुछ नाम नहीं रखा है। माँ ने बालक के हृदय पर कमल की पँखुड़ी का चित्र देखा। कमल को पद्म भी कहते हैं, इसलिए माँ ने बालक को '**पद्म**' नाम से पुकारा। वैदिक संस्कृति और श्रमण संस्कृति कहती है जन्म के 45 दिन बाद गुरु मुख से बालक का नाम रखा जाना चाहिए।

पैंतालीस दिन का समय बीतता है, माँ कौशल्या बालक को लेकर जिनमंदिर जाती है, भगवान के दर्शन करती है। मुनिराज वहाँ उपस्थित है। माँ कौशल्या मुनिराज को प्रणाम करती है और कहती है– हे महात्मा! आपके पुण्य आशीर्वाद से, पुण्य अनुकम्पा से यह पुत्ररत्न मुझे प्राप्त हुआ है। हे मुनिराज! आप इस बालक का नामकरण कीजिये। माँ बालक को मुनिराज के समीप रख देती है। वह मुनिराज बालक की ओर दृष्टि करते हैं। मुनिराज और बालक एक समान लग रहे थे, मात्र आयु को छोड़कर दोनों में कोई अन्तर नहीं था। मुनिराज अवधिज्ञानी थे, अवधिज्ञान से मुनिराज जान लेते हैं। यह राजा दशरथ का कुल क्षत्रिय कुल है। यह बालक क्षत्रिय कुल को संवर्धित करने वाला, क्षत्रिय धर्म को निभाने वाला, सब की रक्षा करने वाला है। इस क्षत्रिय कुल में बीस तीर्थंकर हो चुके हैं, चार तीर्थंकर और पैदा होंगे। बीस तीर्थंकर के बाद यह बालक पैदा

हुआ है। वह मुनिराज कुशल प्रज्ञा के द्वारा निर्णय करते हैं। इस बालक का नाम ऐसा रखा जाना चाहिए। जिसके मात्र नाम लेने से हजारों पाप नष्ट हो जायें, सब प्रकार का रोग, शोक, दु:ख, चिंता दूर हो जाये। इस क्षत्रिय कुल में ऋषभनाथ से लेकर महावीर स्वामी तक चौबीस तीर्थंकर होने वाले हैं। ऋषभनाथ का 'र' अक्षर तथा यह बालक अरिहंत बनने वाला होने से 'अ' और महावीर स्वामी का 'म' अक्षर को लेकर के मुनिराज बालक का नाम 'राम' रख देते हैं।

राम नाम में हैं छुपे, चौबीसों भगवान।
धन्य राम का नाम है, जय-जय-जय श्रीराम।।
रा अक्षर से जानिये, ऋषभदेव का नाम।
म अक्षर महावीर का, जय-जय-जय श्री राम।।

मात्र ढाई अक्षर का नाम, ढाई द्वीप के लिए कल्याणकारी हो गया। राम शब्द के अन्य अर्थ हैं - सुन्दर, अभिराम, लालित्य, हर्ष को देने वाला और ऋषभनाथ से महावीर तक धर्म परम्परा में पैदा होने वाला इत्यादि। **इस तरह राम जन्में तो बसन्त बनकर, रहे तो सन्त बनकर और गये तो भगवन्त बनकर।**

ऐसे बालक राम का माँ कौशल्या पालने में धर्म गीत सुनाकर बड़े अच्छे से पालन-पोषण करती है। माँ ही बालक का **प्रथम गुरु हुआ करती है, वह माँ महान्-महान् संस्कार अपनी संतान को देती है।**

लक्ष्मण जन्म के पूर्व माँ ने देखे स्वप्न

सुमित्रा माँ ने भी रात्रि के समय पाँच शुभ स्वप्न देखे। 1. **सिंह** 2. **पर्वत पर सिंहासन** 3. **गम्भीर समुद्र** 4. **उगता हुआ सूर्य** 5. **चक्ररत्न**। माँ सुमित्रा ने स्वप्नों के फल को जानने के लिए दशरथ से कहती है। दशरथ जी कहते हैं- आपने स्वप्न में जो सिंह देखा है उसका फल है आपका जो पुत्र होगा वह पराक्रमी होगा, पर्वत पर सिंहासन का फल है आपका पुत्र इस पृथ्वी पर राज्य करने वाला होगा, उगते हुए सूर्य के स्वप्न का फल है

आपकी संतान सारे जगत् को प्रकाशित करने वाली होगी, गम्भीर समुद्र की भाँति विशाल हृदय वाला होगा, अंतिम स्वप्न में जो चक्ररत्न है, उससे संतान चक्ररत्न का धारक नारायण होगा। माँ सुमित्रा स्वप्न के फल जानकर अत्यन्त प्रसन्न, उत्साहित होती है। इसका रोम-रोम पुलकित हो जाता है। माँ सुमित्रा अनेक धार्मिक क्रियाएँ करती हैं और नौ माह का समय पूर्ण हो जाता है।

एक दिन ब्रह्ममुहूर्त की मंगल बेला में अष्टम नारायण का जन्म होता है, ये लक्ष्मण ही पाप रूपी अँधकार को मिटाने वाले नारायण हुये। माँ कैकयी ने भी एक पुण्य पुत्र को प्रसूत किया, यह बालक परम विनय का धारक, कल्याण का कर्त्ता, दु:खों का हर्ता, परिग्रह मोह-ममता से दूर रहने वाला, घर में भी वैरागी रहने वाला, मातृसेवक, पितृभक्त, भ्राता सेवक '**भरत**' कहलाया।

इसी प्रकार रानी सुप्रभा ने ब्रह्ममुहूर्त की मंगलमयी बेला में पुत्र '**शत्रुघ्न**' को जन्म दिया। शत्रुघ्न का अन्य नाम **रिपुदमन** भी है। अर्थात् शत्रु का नाश करने वाले, अँधकार में दीप जलाने वाले ऐसे शत्रुघ्न राजा दशरथ के चौथे पुत्र होते हैं।

चारों बालक बाल्य अवस्था को प्राप्त होते हैं। अलग-अलग पुराणों के अनुसार किसी में विश्वामित्र के पास, किसी में वशिष्ठ के पास चारों बालक अध्ययन के लिए जाते हैं। पद्म चरित्र के अनुसार एर नामक विद्वान के पास इन चारों पुत्रों को शिक्षा के लिए रखा।

राम-लक्ष्मण, रावण की आयु एवं शरीर की ऊँचाई

श्रीराम के यौवन काल में ऊँचाई 16 धनुष की थी, एक धनुष में चार हाथ होते हैं। उनकी आयु 17 हजार वर्ष की थी। महापुरुष महाआयु के धारक होते हैं। इसी तरह लक्ष्मण की आयु 12 हजार वर्ष की और ऊँचाई 16 धनषु की थी और प्रतिनारायण के रूप में रावण की आयु 12 हजार वर्ष की और ऊँचाई 16 धनुष की थी। अगर आप श्रीराम की बात करें तो लगभग 25 वर्ष तक माँ की गोद में खेले होंगे, लगभग 75 वर्ष तक गुरु के पास शिक्षा के लिये रहे। श्रीराम का 100 वर्ष का कुमार काल रहा और

लगभग 300 वर्ष तक महामण्डलिक राजा रहे। साढ़े ग्यारह हजार वर्ष तक लक्ष्मण ने इस धराधाम पर राज्य किया, राम ने भी इतने ही समय तक राज्य किया।

राम-लक्ष्मण की शिक्षण पद्धति

बाल्यकाल से धीरे-धीरे बड़े होकर चारों भाई संसार को सहारा देने के लिए कुमार अवस्था को प्राप्त हुए। उन्हें अध्ययन के लिए ब्राह्मण विद्वान के पास भेजा गया। इनके गुरु अनुभवी, प्रज्ञा के धारक, धार्मिक थे। ऐसे महान् गुरु प्रिय बालकों को वात्सल्य के साथ शिक्षा देते थे। धन्य हैं ऐसे गुरु जो अँधकार से प्रकाश की ओर, पाप तिमिर से हटाकर पुण्य का प्रकाश प्रदान करते हैं। न पोथी है, न कलम है, न अध्ययन का अन्य कोई साधन। **अगर साधन हैं तो मात्र प्रकृति और उन गुरु का अनुभव।** गुरु उन बालकों को खिलते हुए पुष्प के पास ले जाते और बालकों से कहते, इन खिलते और विकसित पुष्पों की तरह हमेशा प्रसन्न रहना चाहिए।

गुरु उत्तम शिक्षा देते हुए कहते हैं - जीवन में शत्रु भी हैं तो मित्र भी हैं, सुख हैं तो दु:ख भी हैं, काँटे हैं तो फूल भी हैं, निन्दक हैं तो प्रशंसक भी हैं, दु:ख देने वाले हैं तो सुख देने वाले भी हैं। यदि निन्दक ना हो तो मनुष्य सद्गुणों को प्राप्त करने की चेष्टा ही न करे। देखो राम! यह अस्ताचल की ओर जाने वाला सूर्य संदेश दे रहा है जो प्रात:काल को उदय हुआ था, वह ही अस्त हो चला है। किसी का जीवन शाश्वत रहने वाला नहीं है। वह गुरु उन बालकों को कुएँ के पास ले जाते हैं और कहते हैं- बालकों! इस बर्तन को रस्सी के सहारे कुएँ में डाल रहा हूँ। यह बर्तन जब तक पानी के ऊपर सीधा रहता है तब तक भरता नहीं है। जैसे ही बर्तन झुकता है पानी उसमें भरने लगता है। गुरु बालकों को खेत में ले जाते हैं और कहते हैं- बालकों! देखो अगर बीज को पत्थर पर (सख्त जमीन पर) डालते हैं तो वह उगता नहीं, अगर उसी बीज को मुलायम नमी वाली भूमि में बोते हैं तो बीज समय लेकर अंकुरित हो जाता है। अत: जो व्यक्ति पानी के बर्तन की भाँति झुकना सीखे और मुलायम मिट्टी की तरह विनय धारण करे तो वही व्यक्ति विद्या अध्ययन के योग्य हो जाता है, उसी शिष्य में सद्गुण आते हैं।

आगे गुरु उन बालकों को फलों से लदे वृक्षों के पास ले आते हैं और कहते हैं– देखो शत्रुघ्न! कितने अच्छे–अच्छे फल लगे हैं, फलों से लदी वृक्षों की डालियाँ नीचे की ओर झुकी हैं और एक तरफ उस खजूर के पेड़ को देखो जिसमें फल भी नहीं हैं और छाया भी नहीं है। यह कलकल करती सरिता बह रही है, इसका उद्‌गम स्थल पतली धारा से होता है पर जैसे–जैसे आगे बढ़ती जाती है कितनी ही चट्टानों से गुजरती है और बढ़ते–बढ़ते विशाल रूप धारण कर लेती है, उसी तरह मनुष्य का जीवन छोटी सी शुरुआत से होता है और आने वाली बाधाओं की परवाह किये बिना निरन्तर बढ़ता रहता है। इसलिए जीवन में शुरुआत छोटे से कार्य से करो, बड़े कार्य से प्रारम्भ मत करो। **कुशलता से किये गये छोटे–छोटे कार्य ही मानव को महान् बनाते हैं।**

बालकों! कभी बिल्ली की तरह आवाज नहीं करना। बिल्ली जीवन के प्रारम्भ में बहुत आवाज करती है पर बड़ी होने पर उसकी आवाज मंद पड़ जाती है, उसी तरह अपने जीवन में अधिक अपव्यय से बचना ताकि शेष जीवन में तंगी से बचा जा सके। बालकों जीवन में मितव्ययता के साथ जीना। **दो–दो अक्षर का एकत्रित ज्ञान ही जीवन में गुणवान बनाता है।**

देखो बालकों! यहाँ नदी की धारा का पानी निर्मल है क्योंकि यह पानी निरन्तर बहता जा रहा है, उसी तरह से व्यक्ति अपने चिन्तन को गति देता रहे तो उसका मन कभी मलिन (मैला) नहीं होता। गुरु ऐसी शिक्षा देते हैं उस महान् शिक्षा में जीवन्त प्राण छुपे हुए थे।

आगे चलते हैं। देखो राम! इस सुन्दर गुलाब के पुष्प के पौधे में काँटे ही काँटे हैं, अनगिनत काँटों से घिरा ये पुष्प खिल रहा है, उसी तरह अपने जीवन में कठिनाइयों से बिल्कुल भी विचलित मत होना, सदैव अपनी प्रसन्नता बनाये रखना। जब तक इस फूल में सुगन्ध है तभी तक यह आदर पाता है, उसी तरह इस शरीर में जब तक प्राण हैं, जब तक धर्म है तब तक यह शरीर आदर के योग्य रहेगा। जिस तरह फूल में खुशबू है, तुम कष्टों से घिरने के बाद भी धर्म की खुशबू अपने जीवन में समाये रहना।

अब गुरु बालकों को पर्वत की श्रेणी पर ले जाते हैं। देखो बालकों! जहाँ से ये झरना झर रहा है, वहाँ कोई जल का तालाब या स्रोत नहीं है। लेकिन फिर भी बह रहा है। इस पर्वत में अनेक प्रकार के औषधि वाले वृक्ष हैं, जो सदा आरोग्य को देने वाले हैं। प्रिय बालकों! पर्वत की भाँति सदैव उदार बनो जो कुछ लेने में नहीं, अपितु बहुत कुछ देने में विश्वास रखता है। प्रिय राम! ये शिक्षा जीवन को जीवन्त बनाने वाली है–

चित्त उदार भला जिसका हो, निर्धन है कुछ पास नहीं।
धनवालों से ज्येष्ठ श्रेष्ठ नर, दे देता वह सब कुछ ही।।
जल बिन्दु भी पास न रखती, अचल मेरु की मालाएँ।
सागर से निकले ना बूँदे, गिरि से निकले सरिताएँ।।

राम कहते हैं– गुरुदेव! ये वृद्ध बाबा क्या कर रहे हैं? गुरु कहते हैं– ये पौधा लगा रहा है। राम कहते हैं– गुरुदेव! ये पौधा कब फल देगा? गुरु कहते हैं– बेटा! इसका फल सौ वर्ष बाद आयेगा। राम कहते हैं– गुरुदेव! इस वृद्ध बाबाजी की शेष आयु दस वर्ष की दिख रही है, इस पौधे के फल बाबाजी को खाने को नहीं मिलेंगे, फिर ये पौधा क्यों लगा रहे हैं? बालक राम के मुख से इस तरह के प्रश्न सुनकर गुरुदेव कहते हैं– राम! आप और हम किस वृक्ष की छाँव में खड़े हैं? राम कहते हैं– गुरुदेव! हम सभी आम वृक्ष की छाँव में खड़े हैं और उसके मीठे आम के फल भी खाये हैं। गुरुदेव कहते हैं– पुत्र! ये बताओ क्या ये वृक्ष हमने लगाया था? राम कहते हैं– नहीं गुरुदेव! हम में से किसी ने ये वृक्ष नहीं लगाया। गुरुदेव कहते हैं– जिस प्रकार ये वृक्ष हमारे द्वारा नहीं लगाया गया पर किसी उपकारी ने ये वृक्ष लगाये हैं। हमें उनके उपकार को कभी नहीं भूलना चाहिए। यदि उस उपकारी का ऋण चुकाना हो तो हमें भी वृद्ध बाबाजी की तरह उपकारी बनना होगा। पुत्र राम! तुम्हारा जन्मदिन आये तो तुम भी वृक्ष लगाते जाना और परोपकार की भावना, सदैव हृदय में जीवन्त रखना।

इस प्रकार गुरु ने राम को विश्वशांति के सूत्र, कर्त्तव्यनिष्ठ के सूत्र, सर्वधर्म समभावना,

जीवन जीने की कला आदि महान्–महान् शिक्षा प्रदान की। गुरु कहते हैं– देखो बालकों! यह बालक अपनी माता के चरणों में झुक रहा है, माँ बालक को आशीर्वाद दे रही है, यह झुकना ही माता के प्रति पहला कर्त्तव्य है। गुरुदेव बालकों को गुरुकुल में ले जाते हैं और मंगलमयी प्रार्थना करते हैं। सभी बालक सावधान मुद्रा में दोनों हाथ जोड़कर–

हमें आचार सिखलाती, हमारी पाठशाला है।
हमें व्यवहार सिखलाती, हमारी पाठशाला है।।
हमें मंदिर बुलाती वह, हमारी पाठशाला है।
प्रभु दर्शन दिलाती वह, हमारी पाठशाला है।।
छना पानी सदा पीना, सिखाती पाठशाला है।
कभी ना रात में खाना, सिखाती पाठशाला है।।
सदा आदर विनय करना, सिखाती पाठशाला है।
चरण छूकर नमन करना, सिखाती पाठशाला है।।
कभी अभिमान ना करना, सिखाती पाठशाला है।
सदा ही पाप से डरना, सिखाती पाठशाला है।।
बुरी आदत नहीं लाना, सिखाती पाठशाला है।
मिले अच्छाई तो पाना, सिखाती पाठशाला है।।
धर्म पालें सदा अपना, सिखाती पाठशाला है।
प्रभु का नाम नित जपना, सिखाती पाठशाला है।।

बालकों की यह प्रार्थना जन–जन का मन मोह लेती है। प्रार्थना के प्रत्येक शब्द, प्रत्येक स्वर में आचरण का सूत्र है। प्रार्थना के बाद गुरुदेव बालकों को ब्राह्मी लिपि व सुंदरी लिपि का अध्ययन कराते हैं–

'अ' से अक्षर ज्ञान करें, अरिहन्तों का ध्यान करें।
'आ' से बनता है आचार, सादा जीवन उच्च विचार।।

'अ' से अरिहंत बनता है, 'आ' से आचार बनता है। आज की शिक्षा प्रणाली में और श्रीराम की शिक्षा प्रणाली में कितना अन्तर है। प्राचीन शिक्षा प्रणाली उच्च आदर्श सिखाने वाली, महान् व्यक्तित्व बनाने वाली थी। वह गुरुदेव सभी बालकों को गिनती पाठ पढ़ाते। गिनती (गणित) पाठ में महान्-महान् अर्थ रहता है-

बोलो भैया पहले एक, प्रभु चरणों में मस्तक टेक।
बोलो भैया अब तुम दो, जिनवाणी की जय-जय हो।।
बोलो भैया अब तुम तीन, रत्नत्रय में साधु लीन।
बोलो भैया अब तुम चार, होंगे उत्तम सरल विचार।।
बोलो भैया अब तुम पाँच, पापों की आवे ना आँच।
बोलो भैया अब तुम छह, श्रावक के कर्त्तव्य यह।।
बोलो भैया अब तुम सात, बिस्तर छोड़ो जल्दी प्रातः।
बोलो रामा अब तुम आठ, मूल गुणों का पढ़ लो पाठ।।
बोलो रामा अब तुम नौ, नवदेवों को सदा नमो।
बोलो भैया अब तुम दस, दस लक्षण है मोक्ष की बस।।
ऐसी उच्च शिक्षा प्रणाली श्रीराम के जीवन में रही।

अयोध्या नगर के समीप एक सुन्दर नगर था, वह नगर अपने आप में धन-धान्य सम्पन्न, सुव्यवस्थित बसा हुआ था। गुरुदेव ने राम से पूछा- पुत्र राम! यह नगर बसा हुआ है या उजड़ा हुआ है? राम कहते हैं- गुरुदेव! इस नगर में धर्मात्मा लोग निवास करते हैं। इस नगर में साधु-महात्मा, जिनालय हैं, यह नगर बसा हुआ है। यह नगरी मिथिला नगरी के नाम से जानी जाती है।

सीता का जन्म एवं शिक्षामयी बाल्यकाल

मिथिला नगरी के राजा जनक हैं, रानी विदेहा है। रानी विदेहा अति पुण्यशाली थी। राजा जनक और रानी विदेहा ने इस पृथ्वी पर आचरण, त्याग, कर्त्तव्य, अनुशासन,

पति सेवा, गुणों की खान, इस मानव जगत् को सिखाने वाली, अनुपम क्षमा को धारण करने वाली पुत्री रत्न को प्राप्त किया। जिसका नाम इस संसार में सीता नाम से प्रसिद्ध हुआ। सी+ता = शील तत्त्व से सम्पन्न। शील रूपी सार जिसके जीवन में भरा था, ऐसी पुत्री रत्न माँ विदेहा की अलौकिक पुत्री थी।

आकाश में तारे कितने हैं? अम्बर से पूछिये, फूलों में सौरभ कितना है? भौरों से पूछिये, शीलवती सीता की महिमा मुझसे क्या पूछते हो? जानना है तो समस्त भारत के कण-कण से पूछिये। अगर भारत के कण-कण में सीता के सदाचरण की खुशबू ना होती तो भारत कभी का गारत बन जाता। सीता की माँ गुण उपदेशिका पिता महान् कल्याणकारी, परोपकारी, जनसमूह को आनन्द देने वाले थे। रानी विदेहा सीता को अनेक प्रकार की उत्तम शिक्षा देती हुई पालने में झूला झुलाती रहती :

सुद्धोसि बुद्धोसि निरंजनोसि, संसार माया परिवर्जतोसि।

हे पुत्री! तू शुद्ध है, तू बुद्ध है, तू निरंजन है, तेरे अंदर शक्ति रूप परमात्मा है। जैसे बीज के अंदर वृक्ष है, उसी तरह प्रत्येक आत्मा के अंदर परमात्मा बैठा हुआ है। यह जन्म तुझे उस परमात्मा को जगाने के लिए मिला है। कभी अरिहंत का, कभी सिद्ध का, कभी आदिनाथ का नाम उसे सुनाती। जब मिट्टी कच्ची होती है तो उसे अन्य आकृतियों से सजाया जा सकता है। पर एक बार घड़ा पक जाने पर उसका आकार बदलना कठिन है, उसी तरह माँ विदेहा उस नन्हीं सीता को सुसंस्कार के पाठ पढ़ाती ताकि सीता बड़ी होने पर आदर्श नारी बन सके।

माँ विदेहा ने सीता को पहला पाठ 'ओम्' का सिखाया। ॐ जो पंच परमेष्ठी का द्योतक है, ऐसा महान् मंत्र माँ ने सीता को सिखाया। क्षमाभाव धारण करने से सीता को 'पृथ्वी' भी कहते हैं। वाल्मीकि रामायण में सीता का जन्म, भूमि से होना बताया है, इसलिए सीता के 'भूमिजा' और 'पृथ्वीरत्न' नाम भी प्रसिद्ध हुए हैं। पृथ्वीरत्न के समान रानी विदेहा की पुत्री को बाल्यकाल में साध्वी के पास भेजा जाता है। वह साध्वी धर्म के

सूत्र, जीवन जीने के सूत्र, कष्टों को कैसे सहना है? आदि उत्तम शिक्षा सीता को सिखाती है। **सीता साध्वी से पूछती है– माँ! जीवन में कष्ट क्यों आते हैं?** माँ कहती है– पुत्री! **जीवन में सुख–दु:ख कर्म के उदय से आते हैं।** जब जीवन से दु:ख चला जाता है तो सुख का अनुभव होता है और सुख के चले जाने पर दु:ख होता है। सीता कहती है– माँ! बुझे हुए दीपक को क्यों जलाया जाता है? साध्वी कहती– बेटी! कोई दीपक कितनी ही बार क्यों न बुझे? आप सदैव दीपक को प्रज्ज्वलित करो, कोई व्यक्ति वृक्ष को कितना ही काटे लेकिन आप उसे पानी देते रहो, तो वह जीवन्त रहता है। आप कर्त्तव्य से कभी भी विमुख मत होइये। गिरे हुये को उठाने में ही जीवन की सार्थकता है। सीता पूछती है– माँ! ये नदी में क्या तैर रही है? साध्वी कहती है– पुत्री! **ये नाव हल्की होने से नदी में तैर रही है।** उसी तरह अहंकार छोड़कर जो मनुष्य विनय धारण करता है, वह सब जगह सम्मान पाता है। सीता कहती है– माँ! ये विपत्ति क्यों आती है? साध्वी कहती है– पुत्री! तुम इसे विपत्ति मत कहो अपितु सम्पत्ति कहो।

दु:ख ही मानव की सम्पत्ति, तू दु:ख से क्यों घबराता है?
दु:ख आता है तो जाता है, सुख आता है तो जाता है।।
सुख जाता तो दु:ख देकर, दुख जाता है तो सुख देकर।
सुख देकर जाने वाले से, रे मानव तू क्यों घबराता है?

पुत्री सीता! जीवन में कितने ही दु:ख आयें, उपसर्ग आयें। तुम इनसे विचलित मत होना, कोई प्रतिक्रिया मत देना अपितु समता भाव धरकर सहन कर लेना। **समता भाव धारण करने से बड़ी से बड़ी विपदा भी सम्पदा में बदल जाती है।**

होकर सुख में मग्न फूलें, दु:ख में कभी ना घबरावें।

पुत्री सीता! धर्म का पालन करते हुए, माता–पिता–गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए यदि प्राण भी जाते हों उसकी चिंता मत करना। लेकिन अपने माता–पिता–गुरु की आज्ञा का प्राणपन से पालन करना। अनुशासन का महत्त्व जीवन के लिए ही नहीं अपितु

राष्ट्रहित में बहुत महत्त्वपूर्ण है, इसलिए आत्मानुशासन का प्रावधान है। पुत्री सीता! अगर तुम किसी को एक अँगुली दिखाओगी तो तीन अँगुलियाँ तुम्हारे अपने तरफ भी होगी। दूसरे की तरफ अँगुली करना, हाथ उठाना ये सब हिंसा है। बेटी! **एक हाथ उठता है तो हिंसा, बैर, घृणा के लिए उठता है।** इसलिए तुम अपने **दोनों हाथ उठाकर आपस में मिला लेना। आपस में मिले हुए हाथ विनय, प्रेम, वात्सल्य, मिलन, व्यवहार के प्रतीक हैं।** ये सब सूत्र सर्वांगीण जीवन के लिए याद रखना। इस तरह सीता आर्यिका (साध्विका से) उत्तम और महान् शिक्षा ग्रहण करते हुए यौवन काल में प्रवेश करती है।

म्लेच्छ राजा जो राक्षसों की तरह महान् पापी थे, इन म्लेच्छ राजाओं ने राजा जनक और इनके भाई कनक को बन्दी बना लिया। राजा जनक ने राजा दशरथ को संदेश भेजा कि दशरथ नन्दन राम-लक्ष्मण को सहायता के लिए भेजा जाये, जिससे हमारे प्राण बच सकें। राम-लक्ष्मण म्लेच्छ राजाओं से युद्ध करते हैं और म्लेच्छ राजाओं को परास्त कर देते हैं। राजा जनक और कनक म्लेच्छ राजाओं के बन्धन से मुक्त हो जाते हैं।

सज्जन पुरुष अपने पर हुए उपकार को कभी नहीं भूलते हैं। राजा जनक को स्मरण रहता है कि दशरथ कुमार राम-लक्ष्मण ने मुझे बन्धन से मुक्त कराया, मेरा राज्य उन्हीं की कृपा से सुरक्षित है। राजा जनक विचार करते हैं कि मेरी प्राणप्यारी पुत्री सीता का पाणिग्रहण राम के साथ हो जाये तो यह मधुर मिलन युगों-युगों के लिए अमर हो जायेगा।

राम-सीता का विवाह सम्पन्न कराना राजा जनक के लिए इतना आसान नहीं था क्योंकि सीता गुणशीला, चरित्रशीला, युक्ति, बुद्धि, अनुशासन, ज्ञान, विनय, तप, संयम, शील, दया-करुणा, प्रेम-व्यवहार आदि सर्वगुण सम्पन्न थी। सभी सामन्त चाहते थे कि सीता उनके महलों की रानी बने। राजा जनक ने विचार किया कि अगर मैं सीता का विवाह सीधे ही राम से करता हूँ तो अन्य राजाओं में नाराजगी (द्वेषता) रह जायेगी। इसलिए राजा जनक ने स्वयंवर कराने का निर्णय लिया। राजा जनक जानते थे

कि राम बलभद्र हैं। बल, शक्ति, भद्र–शिष्टाचार। दुर्जनों का बल दूसरों को (निर्बलों को) सताने के लिए होता है जबकि राम का बल शिष्टाचार सम्पन्न होने से निर्बलों की (सज्जनों की) सहायता के लिए था।

सीता का स्वयंवर

राजा जनक के पास दो धनुष वज्रावर्त, सागरावर्त (जिन्हें वाल्मीकि रामायण में देव धनुष के नाम से जाना गया है) प्राचीन समय से रखे थे। इन धनुष की आकृति इतनी भयानक थी जैसे : साँपों की फुँकारे निकल रही हों, अग्नि ज्वालाएँ निकल रही हों। धनुष को मात्र देखने से कई लोगों की आँखें बंद हो जाती थी और वे मूर्छित होकर गिर पड़ते थे। लोग धनुष को देखकर थर–थर काँपने लगते थे। इस तरह स्वयंवर में सभी राजा धनुष को उठाने में असमर्थ हो जाते हैं। अन्त में श्रीराम धनुष के पास जाकर विनयपूर्वक, उच्च आदर्श सहित ऐसे उठाते हैं जैसे कोई श्रद्धा सहित माँ जिनवाणी को अपने हाथों में उठाता है। राम के धनुष उठाते ही पूरी स्वयंवर सभा तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठती है। धन्य है राम का पराक्रम, धन्य है राम की शक्ति, धन्य है राम की भक्ति, धन्य है राम की युक्ति। इससे पहले कि राम सिंहासन पर विराजमान हो, सीता आगे बढ़ती हुई अपने दोनों हाथों में रखी हुई पुष्पमाला को राम के कंठ में डाल देती है। उपस्थित जनसमूह अकस्मात् कह उठता है :

सिया के राम, सिया के राम, सियाराम, सियाराम।
राम, सियाराम, सियाराम, जय–जय राम ।।

अब राम के हाथों में पुष्पमाला दी जाती है कि आप भी सीता के कण्ठ में वरमाला डालें पर राम ने वरमाला अपने हाथ में नहीं ली अपितु अपने पिता दशरथ और माँ कौशल्या के सिंहासन की ओर बढ़ गये। माता–पिता से आशीर्वाद ले माला डाली।

*****

तृतीय पर्व

राम-सीता का विवाह

श्रीराम-सीता का विवाह

इष्ट परमात्मा की मंगलमयी आराधना में जोड़ लेंगे दोनों हाथ और झुका लेंगे अपना माथ !

ओ कार बिंदु संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः।।

आचाराणं विद्यातेन, कुदृष्टिनां च सम्पदां।
धर्मम् ग्लानिं परिप्राप्तः, मुच्छ्रयन्ते जिनोत्तमः।।

प्रथमं नत्वा गुरो देवं, भक्त्या नत्वा गुरोवचम्।
रामकथा करिष्यामि, वन्दे रामं जिनवरम्।।

वन्दे रामं जिनवरम् . . . . .

जिणो देवो, जिणो देवो, जिणो देवो, जिणो-जिणो।
दया धम्मो, दया धम्मो, दया धम्मो, दया सदां।।

अहिंसा के अधिपति, प्राणी मात्र के कल्याणकर्ता, विश्वशांति विधायक, विश्ववंदनीय, विश्वप्रभु भगवान महावीर स्वामी के पावन चरणों में कोटि-कोटि नमन्, नमन्, नमन्। जन्म-जरा-मृत्यु को जीतने वाले जगत् के कल्याणकारी, तीनों लोकों को, तीनों कालों को एक साथ जाने वाले वीतराग सर्वज्ञ देव, अठारह दोषों से रहित प्रभु श्रीराम के पावन चरणों में कोटि-कोटि प्रणाम, प्रणाम, प्रणाम।

भारतीय संस्कृति में जिनका स्थान भगवान से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण है, ऐसे संयम प्राणदाता परमपूज्य गुरुदेव विरागसागर जी के पावन चरणों में कोटि-कोटि वन्दन, वन्दन, वन्दन। रामकथा सत्संग में आगन्तुक सभी भक्तों का हार्दिक अभिनन्दन गुरु उपहार स्वीकार करें।

व्यथा मिटाये जन्म की, लाये पुण्य प्रसंग।
धन्य-धन्य जीवन करे, रामकथा सत्संग।।

गंगा–यमुना में नहा, धुल जाते ज्यों अंग।
पाप–मैल मन धो रहा, रामकथा सत्संग।।
चारों तीरथ मिल गये, मिला गुरु का संग।
भक्ति भाव से सुन रहे, रामकथा सत्संग।।

जिन मर्यादा पुरुषोत्तम, अनन्त गुणों के पुञ्ज, अदृश्य, अरूप, अरस, अव्याबाध परमात्मा श्रीराम की खोज में अन्तकाल से सहस्र रश्मियों को लेकर सूर्य सुमेरू पर्वत की प्रदक्षिणा कर रहा है, लेकिन फिर भी सूर्य श्रीराम को खोज नहीं पाया। जिनकी खोज में हिमालय पर्वत अश्रु बहाता हुआ, गंगाधारा के रूप में सारे भारतवर्ष में खोज रहा है, लेकिन वह गंगा–यमुना–सरस्वती भी जिनको आज तक नहीं खोज पाई। पक्षियों की चहकार राम! राम!! पुकारती ही रह गई, लेकिन आज तक श्रीराम का दर्शन नहीं कर पाई।

समुद्र में रत्नों की राशि को आँखों से देखा जा सकता है, लेकिन गणना नहीं की जा सकती। उसी तरह प्रभु श्रीराम में कितने गुण हैं? उन गुणों को योगीजन ध्यान के द्वारा अनुभव कर सकते हैं, लेकिन कह नहीं सकते। फिर भी मैं रामकथा कहने जा रहा हूँ, यह मेरी मूर्खता की पहली निशानी है। रामकथा की यह नौका प्राणीमात्र को संसार सागर से पार लगाने वाली है, सात धाराओं से गुजरने वाली यह नौका दो धाराओं को पार कर चुकी है। आज हम तीसरी धारा में पहुँच रहे हैं।

रामकथा गीत

ये जीवन अनमोल रे, नर जीवन अनमोल रे।
रामकथा को सुनकर प्यारे, अपनी अँखियाँ खोल रे।।
सुनिये भविजन राम कहानी, राम कहानी जग कल्याणी।
सन्तजनों की यही है वाणी, इधर–उधर मत डोल रे।।
रामकथा...।।

रामकथा जो सुने–सुनावे, इस भव–परभव में सुख पावे।
स्वर्ग–मोक्ष पद को अपनावे, जय–जयकारा बोल रे।।
रामकथा..।।

सुनिये भक्तों यह रामायण, करिये जीवन से पारायण।
नर से बन जाओ नारायण, अवसर बड़ा अमोल रे।।
रामकथा..।।

कितना तूने पुण्य किया है? कितना तूने पाप किया है?
कितना प्रभु का जप किया है? हिये तराजू तोल रे ।
रामकथा..।।

अपनी अँखियाँ खोल रे, मन की अँखियाँ खोल रे ।।
रामकथा..।।

बड़े–बड़े कार्य करने से व्यक्ति महान् नहीं बनता, अपितु छोटे–छोटे कार्यों को महानता (कुशलता) के साथ करने से व्यक्ति महान् बनता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम अभी स्वयंवर मण्डप में उपस्थित हैं। शीलतत्त्व सम्पन्न कुलवती कन्या सीता उनके कंठ में वरमाला डाल चुकी है। श्रीराम अपने सिंहासन के सामने ही उच्च सिंहासन पर पूजनीय पिताजी (दशरथ जी) व आदरणीया माताजी (कौशल्या जी) को देखकर, अपने सिंहासन से खड़े होकर उनके समक्ष पहुँचते हैं। श्रीराम अपने माताजी–पिताजी का चरण छूकर आशीर्वाद व वरमाला के लिए आज्ञा लेते हैं और पश्चात् सीताजी के द्वारा डाली जाने वाली वरमाला स्वीकार करते हैं।

श्रीराम माता कौशल्या जी से कहते हैं– माँ! आपने मुझे जन्म दिया, इस संसार में माँ आपसे बढ़कर कुछ नहीं है।

माँ से बढ़कर कुछ नहीं, क्या पैसा क्या नाम।
चरण छुये तो हो गये, तीरथ चारों धाम।।

हे माताश्री! आप मेरे कंठ में जो यह वरमाला देखकर प्रसन्न हैं, ये माला सीता ने डाली है, जो कि शीलतत्त्व से परिपूर्ण है। इस पर माता कौशल्या कहती है– आदिनाथ की महान् व आर्ष परम्परा में विवाह की ऐसी पद्धति, जो ऋषि–मुनियों ने उल्लेखित की है। ऐसी पद्धति से आप दोनों वर–वधु का विवाह आज मिथिलापुर में सम्पन्न होगा और विवाहोपरान्त सीता दोनों कुल का मान बढ़ायेगी। ऐसा कहकर मंगल परिणयोत्सव की तैयारी की जाती है।

स्वयंवर मण्डप में अष्टमूल गुण से सम्पन्न, सच्चे देव–शास्त्र गुरु के भक्त, पंचाणुव्रतों के धारक, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, अपरिग्रह को जानने वाले उत्तम गृहस्थाचार्य उपस्थित होते हैं। वहाँ पर भगवान जिनेन्द्र की प्रतिमा, पंच परमेष्ठी का यंत्र और जिनवाणी विराजमान किये जाते हैं। ज्ञानाचार की अग्नि, दर्शनाचार की अग्नि, तपाचार की अग्नि, चारित्राचार की अग्नि और वीर्याचार की अग्नि से पञ्चाग्नि प्रज्ज्वलित की जाती है। पंचाचार के पालक आचार्य परमेष्ठी होते हैं, लेकिन ऐसे आचार्य साक्षात् विराजमान न हो तो परोक्ष में वहाँ अग्नि स्थापित की जाती है।

देव–शास्त्र गुरु की सम्मति लेकर, धर्म किस तरह से अग्रसर हो, ऐसा उद्देश्य लेकर माँ कौशल्या श्रीराम को साथ में ले विवाह मण्डप में उपस्थित होती है। विदेहा माँ अपनी पुत्री सीता को लेकर उपस्थित होती है।

यह विवाह सामान्यजन का नहीं था, इसलिए अनेक नगरों से समुदाय उपस्थित हो चुका था। राम सीता को लेने मिथिला नहीं आये थे, अपितु अपने रघुकुल का शौर्य दर्शाने मिथिला नगरी आये थे। **राम जानते थे कि विवाह सुख का साधन नहीं है, धर्म का साधन है। विवाह काम वासना के लिए नहीं, अपितु प्रभु की उपासना के लिए किया जाता है। सुयोग्य संतान को जन्म देकर धर्म, संस्कृति, सभ्यता को जीवन्त बनाये रखने के लिए ये विवाह सम्पन्न किया जा रहा है।**

रामायण कानों का विषय नहीं, अपितु प्राणों का विषय है। राम बाहर में नहीं, भीतर

में है। यदि आप रामायण को प्राणों से सुनते हैं तो घर–परिवार में दुःख, कलह, अशांति के बादल नहीं मण्डरा सकते।

प्रभु श्रीराम दुल्हा रूप में व माता सीता दुल्हन के रूप में मण्डप में विराजमान हैं। गृहस्थाचार्य राम–सीता को संबोधन करते हैं– **विवाह ऐसा बन्धन है जो एक बार स्वीकार किया जाता है तो जीवन पर्यन्त निभाया जाता है** और सात वचन एक–दूसरे के लिए बताते हैं।

सीताजी के सात वचन श्रीराम के लिए इस प्रकार से हैं :

1. परस्त्री गमन नहीं करना।

2. वेश्या के घर में नहीं जाना।

3. जुआ नहीं खेलना।

4. अपने पुरुषार्थ से न्यायोचित पद्धति से धन कमाना और ऐसे उत्तम धन से परिवार का भरण–पोषण करना।

5. धर्म स्थान में जाते समय मुझे मत रोकना।

6. अनुचित कठोर दण्ड नहीं देना।

7. मेरा परित्याग मत करना।

श्रीराम के सात वचन सीताजी के लिए इस प्रकार से हैं :

1. गुरुजनों की विनय करना।

2. मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना।

3. कठोर वचन नहीं बोलना।

4. घर में पधारे सद्पात्रों की आहार–विहार की व्यवस्था करना।

5. अभिभावक से बिना अनुमति के घर से बाहर नहीं जाना।

6. व्यसनाग्रस्त/असभ्य पुरुषों के मध्य नहीं जाना।

7. घर–परिवार की गोपनीयता रखना।

यदि वर–वधु उपरोक्त सप्त वचनों को वैवाहिक जीवन में निभाते हैं तो उनके जीवन में कभी भी दु:ख, अशांति आ ही नहीं सकती। गृहस्थाचार्य कहते हैं– विवाह जीवन का 'मंगलाचरण' है। इसी तरह संस्कृति से समृद्ध पद्धति से श्री रामजी–सीताजी का विवाह सम्पन्न होता है।

सीताजी माँ विदेहा के चरण छूकर, उनके वक्षस्थल से लिपट जाती है और कहती है– माँ आपने मुझे जन्म ही नहीं दिया, अपितु पौधे की भाँति सिंचित (भरण–पोषण) किया। ये उपकार मैं कैसे चुका पाऊँगी? मैं कितनी अभागिन हूँ कि आपकी सेवा नहीं कर सकती। स्वर्ग के देव, नरक के नारकी माँ के दर्शन नहीं कर पाते, पर मैं तो बड़ी भाग्यशाली हूँ, जो आप जैसी उपकारी माँ को पाई हूँ।

माँ विदेहा का विदाई से पूर्व सीता को सम्बोधन

कहती है– हे पुत्री! इस घर में रहते हुए जो–जो उत्तम कार्य तुमने सीखे हैं, वो अपने ससुराल में भी करना। हे पुत्री! सबसे मधुर सम्भाषण करना, पहले उठना – बाद में सोना, बड़ों के प्रति आदर भाव व छोटों के प्रति वात्सल्य रखना। सुबह उठते ही घर की साफ–सफाई के पश्चात् घर के मुख्य द्वार पर मांगलिक चोक पूरना। जिस मांगलिक चोक को देखकर साधु–संत आहार के लिए आगमन कर सकें, सदा आहार–दान देते रहना। शील ही सबसे बड़ा आभूषण है, सोने–चाँदी का शील रत्न के सामने कोई मूल्य नहीं है, सदा शील रत्न की रक्षा करना। पुत्री! वस्त्र वही धारण करना, जो संस्कृति व सभ्यता के अनुरूप हो। कभी ऐसे वस्त्र नहीं पहनना, जिससे शील की मर्यादा का उल्लंघन हो।

रात्रि में शयन से पूर्व स्वाध्याय करना, उत्तम–उत्तम कथाएँ परिवारजन को सुनाना। भगवान की पूजा–आराधना में अपने चित्त को रमाये रखना। परिवार में वात्सल्य, प्रेम, भाईचारा बनाये रखना। अब से तुम्हारा वास्तविक घर ससुराल है व माता कौशल्या ही तुम्हारी माँ है। माता कौशल्या को पूजनीया, आदरणीया, सम्माननीया मानकर सत्कार

देना। आज से राजा दशरथ को अपना पिता समझना। जिस प्रकार सुर का अर्थ देवता होता है, उसी भाँति अपने ससुर को देवता तुल्य आदर देना।

पति ही परमेश्वर का रूप होता है, उन्हें महान् आदर देना। देवर अर्थात् जो देवता तुल्य आचरण करते हों, उन देवर लक्ष्मण का सदा मान-सम्मान बनाये रखना। धन्य है माँ विदेहा जो अपनी पुत्री को इतनी उत्तम और महान् शिक्षा देती है। कहती है- जिस प्रकार श्वास के अभाव में जीवन नहीं चल सकता, उसी श्वास की तरह ससुराल में सास होती है अर्थात् ससुराल में सास का स्थान बहुत खास होता है, तुम अपनी सास का खास ख्याल रखना।

सीताजी माता के उन उत्तम-अमृतमयी वचनों को पी जाती है। ऐसी शिक्षा आज की माँ विदाई के पूर्व अपनी पुत्री को दे दे तो दोनों कुल में कभी वाद-विवाद ही न हो व पुत्री का वैवाहिक जीवन सुखमय बना रहे।

इसी क्रम में सीताजी अपने पिता जनक के चरण छूकर क्षमा याचना करती है और कहती है- मुझे क्षमा करना, पिताजी! मैं आपकी सेवा नहीं कर सकी, मुझे आपकी बहुत याद आयेगी। राजा जनक उत्तम वचनों को कहते हैं- हे पुत्री! दोनों कुलों में कभी तुलना मत करना, अंतर मत करना। सदैव पिताघर की प्रतिष्ठा और ससुराल का सम्मान बढ़ाना।

माँ विदेहा श्रीराम को उत्तम वचन कहती है- हे मेरी प्राणप्यारी पुत्री के पालक, हे मेरे कन्या रत्न के धारक, हे प्राणपुञ्ज! आपने सीता को स्वीकार कर हम पर बड़ा उपकार किया है। हे प्राणोत्तम श्रीराम! मैं आपको और क्या दे सकती हूँ? मेरे पास है ही क्या? ना सोना है, ना चाँदी है और ना ही रत्न है। माँ विदेहा यह कहती हुई श्रीराम को प्रीति स्वरूप श्रीफल प्रदान करती है। भेंट में श्रीफल पाकर श्रीराम माँ विदेहा को उत्तम वचन कहते हैं- हे माता! इस श्रीफल का जगत् में कोई मूल्य नहीं हो सकता। हे मातोश्री! इस श्रीफल पर जो जटाएँ लगी हैं, ये कर्म हैं और ये कर्म ही संसार में भटकाते

रहते हैं। श्रीफल के मध्य स्थित फल को पाने के लिए जटाएँ उतारनी पड़ती है, उसी तरह मैं अपने शरीर से कर्मों को निकाल दूँगा और अरिहंत-सिद्ध जैसी अवस्था को प्राप्त करूँगा। अन्तरंग और बहिरंग जैसी शोभा से श्रीफल सुशोभित है, ऐसे श्रीफल की तरह महान् अवस्था मुझे अवश्य प्राप्त हो। आपने जो कन्या रत्न मुझे सौंपा है, यही सबसे बड़ा रत्न है, इससे बड़ा दान हो ही नहीं सकता।

उत्तम व अमृतमयी वचन पूरे होते हैं, श्रीराम सीता सहित अवधपुरी की ओर गमन करते हैं। मिथिला नगरी में प्रिय सीता की विदाई से शोक छा जाता है तो दूसरी ओर अयोध्या में नववधु के आगमन समाचार से हर्ष छा जाता है।

*****

चतुर्थ पर्व

राजतिलक
की
मंगल वेला

श्री राम-सीता का विवाहोपरांत अयोध्या में प्रवेश

भव्य स्वागत के साथ सीता जी अयोध्या नगरी में आती हैं, बहुत सुन्दर उत्तम गीतों का गायन होता है।

राम रमैया गाये जा, प्रभु से लगन लगाये जा ।।

शीलवती बहु सीता, माँ कौशल्या और पिता दशरथ के चरणों में प्रणाम करती है। पति सेवा परायणा सीता की दिनचर्या प्रारम्भ होती है। जिस तरह शरीर में आठ अंग होते हैं। यदि आठ अंग में से एक भी अंग कम हो जाये तो शरीर विकलांग हो जाता है। इसी तरह रामकथा के आठ दिन में से एक भी दिन चूके गये तो समझ लेना कि आप विकलांग हैं। रामकथा का एक-एक शब्द, प्रत्येक अंग अंतरंग ह्रदय में ले जाने का है।

परिवार में सब सो जाते उसके बाद सीता सोती और सभी के जाग जाने के पूर्व सीता जाग जाती। ब्रह्ममुहूर्त = आत्म कल्याण की बेला। ब्रह्ममुहूर्त में सीता उठ जाती। उठकर परमात्मा का ध्यान करती। णमोकार मंत्र, ओम्कार मंत्र का ध्यान करती। अपने हाथ की प्रत्येक अँगुली में तीन पोर हैं। इस तरह दोनों हाथों की आठ अँगुलियों में कुल चौबीस पोर होते हैं। ये चौबीस पोर चौबीस तीर्थंकरों के प्रतीक हैं। सीता चौबीस तीर्थंकरों का दर्शन (स्मरण) करते हुए जाप करती है- **चतुर्विंशति जिनवरेभ्यो नमः।** सभी अनन्तान्त सिद्ध परमेष्ठी, केवली भगवान आदि का स्मरण करती।

इसके बाद माँ कौशल्या के कक्ष में जाकर माता को प्रणाम करती। यह सीता की दिनचर्या का अविस्मरणीय अंग था। जिसे सीता ने कभी नहीं भुलाया। जब से सीता अयोध्या में आई माँ कौशल्या के रसोईघर का पूरा कार्य सीता देखने लगी। अब माँ कौशल्या भोजन बनाना ही भूल गई। सीता घर-परिवार के प्रत्येक कार्य को स्वावलम्बी होकर कुशल पद्धति से करने लगी। सीता जो राम की धर्मपत्नी है।

धर्मपत्नी– वह पत्नी जो अपने पति को धर्म पथ में लगाये। वह सीता राम के लिए कभी बेटी की, कभी माँ की, कभी बहिन की भूमिका निभाती। जब राम–सीता दोनों मन्दिर जाते तो ऐसे लगते जैसे भाई–बहिन मन्दिर जा रहे हों। सीता जब भोजन परोसती तो सीता इतने वात्सल्य से भोजन परोसती कि चारों भाई (राम–लक्ष्मण–भरत–शत्रुघ्न) को महसूस ही नहीं होता था कि ये सीता है या माँ कौशल्या। प्रत्येक गृहिणी को अपने परिवार जनों को भोजन इस प्रकार परोसना चाहिए जैसे माँ गर्भस्थ शिशु का पोषण करती है। आपके द्वार पर आये साधु–संतों को भी ऐसे ही भोजन कराना चाहिए।

ज्ञान गुण, विवेक गुण से सम्पन्न सीता ऋतु आदि का ध्यान रखते हुए, **स्वाद के साथ अच्छा स्वास्थ्य भी रहे** इस तरह का भोजन बनाकर शुद्ध आचार–विचार से भोजन कराती। सभी परिवार जन एक साथ बैठकर भोजन करते। ऐसा आनन्द आता जैसे प्रतिदिन कोई मांगलिक अनुष्ठान सम्पन्न हुआ है। उत्तम गृहिणी सीता पहले पति को भोजन कराती है। बाद में स्वयं भोजन करती। श्रीराम भी इतने महान् आदर्श पुरुष थे कि वह सूर्यास्त के चार घड़ी पहले भोजन कर लेते थे ताकि सीता भी सूर्यास्त के दो घड़ी पहले भोजन कर सके। सीता सभी को प्रासुक जल (गर्म किया हुआ जल) ही पिलाती। इस तरह सीता ज्ञान–विज्ञान गुणमय, औषधिशास्त्र तथा हर तरह के गृहकार्य में दक्ष थी।

सायंकाल में सीता आरती करने जिन मंदिर जाती, वहाँ जाकर मंगल आरती, स्तुति, विनती गाया करती। अपनी माँ विदेहा से सीखे हुये स्वाध्याय, सामायिक, देव वन्दना आदि अनेक शास्त्रों का अध्ययन करती।

राजा दशरथ का वैराग्य

राम को धर्मपुरुष बताया है। अत: राम–सीता ब्रह्मचर्य से रह रहे हैं। इसी तरह राम–सीता का कई वर्षों का समय ब्रह्मचर्य के साथ व्यतीत होता रहा। विरक्त हृदय, संसार, शरीर, भोग से उदासीन राजा दशरथ सिंहासन पर विराजमान होकर सोच रहे हैं। राजा को अन्दर से वैरागी होना चाहिये नहीं तो प्रजा का शोषण होने लगेगा। दशरथ अपने

वैराग्य की भावना मंत्री से कहते हैं- हे मंत्रीवर! जब संतान कार्य दक्ष हो जाये तो पिता को धर्म मार्ग में अग्रसर हो जाना चाहिए। मैं निर्णय ले चुका हूँ कि राम का राज्याभिषेक शीघ्र हो जाना चाहिए। धन्य हैं राजा दशरथ और धन्य है उनके उत्तम विचार।

जिस प्रकार फूलों की खुशबू हवा के माध्यम से चारों ओर फैल जाती है उसी तरह श्रीराम के राज्याभिषेक की खबर मंत्री के मुख से सारे नगर में फैल जाती है। उत्तम ज्योतिषाचार्य राम के राज्याभिषेक के लिए श्रेष्ठ मुहूर्त निकालते हुए कहते हैं- राज्याभिषेक के लिए कल का दिन उतम रहेगा।

रानी कैकयी द्वारा भरत के लिए राज्य माँगना

इधर दशरथ के साथ उनके तृतीय पुत्र भरत भी संयास के लिए तैयार होते हैं। भरत के निर्मल मन को सभी जानते हैं कि भरत वैरागी है। भरत के संयास की खबर सुनकर माता कैकयी का मोह जाग जाता है। कैकयी सोचती है मेरे प्राण प्यारे पति सन्यास को जा रहे हैं और पिता के साथ पुत्र भरत भी वन चला जायेगा तो मेरा क्या होगा? मैं कैसे जीवित रह पाऊँगी? भरत के वियोग में मेरे प्राण निकल जायेंगे। अब इन्हें रोकना असम्भव लग रहा है। कैकयी के मन में विचार आता है, जो विचार उत्तम पुरुषों के मन में तीन काल में नहीं आता है वह विचार भी स्त्रियों के मन में आ जाते हैं। कैकयी विचार करती है, पूर्व समय में उसने राजा दशरथ के साथ युद्ध में वीरांगना की तरह सहायता की थी और सारथी बनकर धर्मयुद्ध में विजयश्री दिलवाई थी। तब राजा दशरथ ने प्रसन्न होकर वरदान दिया था। उस समय कैकयी बोली- हे स्वामी! आप और मैं भिन्न-भिन्न नहीं हैं। मुझे कोई वरदान नहीं चाहिए। दशरथ ने कहा- आप वरदान सुरक्षित रख लीजिए, उचित समय पर ले लेंगे।

ये ही वरदान कैकयी के स्मरण में आ गया। आप णमोकार को भूल सकते हैं, आप भगवान का नाम भूल सकते हैं। लेकिन वरदान को कैसे भूल सकते हैं? कैकयी दशरथ के पास पहुँचती है- हे स्वामिन्! तभी दशरथ कैकयी को अकस्मात् देखकर कहते हैं- हे देवी! आप आइये, आसन ग्रहण कीजिये। राजा दशरथ कैकयी को उत्तम आसन

प्रदान करते हैं और कहते हैं– देवी! कहो, कैसे आगमन हुआ? सब कुशल तो है। कैकयी कहती है– हे स्वामिन्! आपके सन्यास मार्ग पर जाने से पहले मेरे मन में कोई विकल्प ना रहे, मेरा मन निर्विकल्प हो जाये अत: मैंने सोचा पूर्व में जो वरदान आपने मुझे दिया था, उस वरदान को प्राप्त कर लूँ। दशरथ कहते हैं– देवी! मैं कृतार्थ हुआ कि आपने मुझे स्मरण करा दिया। आपको दिया हुआ वरदान पूर्णत: याद है। अभी राज्य कार्य मेरे हाथ में है आप जो चाहें माँग लें।

कैकयी दोनों हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक कहती है– हे स्वामी! पुत्र भरत के लिए अयोध्या का राज्य प्रदान किया जाये। दशरथ कहते हैं– कैकयी! रानी! ये तुम क्या कह रही हो? ऐसा अन्याय मत करो। मैंने राम के राज्याभिषेक की घोषणा करा दी है और राज्याभिषेक कल सम्पन्न होने जा रहा है। दशरथ कुछ समय के लिए बेसुध हो जाते हैं, फिर कहते हैं– कैकयी! तुम मेरे प्राण भी चाहो तो मैं तुम्हें दे सकता हूँ, पर तुम ऐसा मत कहो। मैं राम से और प्रजाजन से क्या कह पाऊँगा? राजा दशरथ सोचते हैं कि ज्येष्ठ पुत्र राम आज्ञाकारी पुत्र है। वो माता–पिता की आज्ञा का पालन अवश्य करेगा। दशरथ कैकयी के लिए वचन दे देते हैं।

दशरथ द्वारा राम को राज्य देने की असमर्थता प्रकट करना

दशरथ राम को बुलाते हैं और कहते हैं– पुत्र राम! कल होने वाले आपके राज्याभिषेक की तैयारियाँ सारे नगर में चल रही है, पर आपका ये पिता इस कार्य को करने में असमर्थ हो रहा है। मैंने पूर्व में कैकयी को एक वरदान दिया था, वह वरदान कैकयी ने मुझसे आज माँग लिया है। वह वरदान भरत को राज्य देने के रूप में माँगा है। मैं तो तुम्हें राज्य करते देखना चाहता था। पुत्र राम! तुम मुझे बताओ कैसे–क्या करना है? पिता की ऐसी हालत देखकर राम कहते हैं– पिताजी! आप धीर–वीर महापुरुष हैं आपको इतना व्याकुल होने की आवश्यकता नहीं है, ये अधीरपना आपको शोभा नहीं देता। **पुत्र वही बड़भागी है जो पिता का मात्र मनोरथ जानकर उस पर आचरण करे। हे मेरे पूज्य**

पिता! आपके वचन का पालन करना ही मेरा सबसे बड़ा धर्म है और आपके गौरव व सम्मान को महिमा मंडित करना ही मेरा परम सौभाग्य है। आपके सम्मान को खोकर कोई मुझे स्वर्ग का राज्य प्रदान करे तो हे पिताजी! मुझे स्वीकार नहीं है। हे पूज्य पिता! आप अपने वचनों का पालन कीजिये।

राम विचार करते हैं- पिताजी ने भरत को अयोध्या का राज्य प्रदान किया है। पिताजी मुझे भी राज्य करते देखना चाहते हैं। अत: राम निर्णय कर लेते हैं। मैं वन जाकर वन का राज्य देखूँगा। जैसी पिताजी की आज्ञा है। अन्य रामायण में भरत के लिए अयोध्या का राज्य देने की और राम को वनवास देने की बात कही पर पद्म चरित्र में राम का उच्च आदर्श प्रस्तुत किया। राम सोचते हैं कि अनुज भरत की आज्ञा का विस्तार कैसे हो? प्रजा का पालन-पोषण कैसे हो? राम पिता से आज्ञा लेते हैं और कहते हैं- पिताश्री! आप मुझे राजा बना देखना चाहते हैं, मैंने निर्णय कर लिया है। मैं राज्य वहाँ करूँगा, जहाँ पर पूरी सृष्टि का कल्याण हो सके। मैं आपसे वन का राज्य चाहता हूँ। आप मुझे वन गमन की आज्ञा प्रदान करें। दशरथ कहते हैं- पुत्र राम! ये क्या कह रहे हो? क्या तुम वन जाओगे? इतना सुनकर राजा दशरथ अश्रुधारा से भीग जाते हैं, राम पिता! के चरणों में प्रणाम कर आज्ञा लेते हैं और माँ कौशल्या के कक्ष में पहुँचते हैं।

राम कौशल्या माँ के चरणों में प्रणाम कर कहते हैं- माँ! पिताजी की आज्ञा प्राप्त कर ली है कि मैं वन का राज्य करूँ। सुनते ही कौशल्या माँ- पुत्र राम! ये क्या कह रहे हो? तुम्हें तो अगली प्रात: अयोध्या का राजा बनना है। पुत्र राम! अपनी बूढ़ी माँ से हँसी कर रहे हो। क्या तुम नींद में से चल कर आये हो? राम कहते हैं- माता! ये सत्य है। पिताजी ने अयोध्या का राज्य भरत को प्रदान किया है। माँ! मैं प्रात:काल वन गमन करूँगा, मुझे आपकी आज्ञा चाहिए। माँ कौशल्या कहती है- पुत्र राम! तुम मुझे प्राणों से प्यारे हो, मेरी आँखों के तारे हो। तुम क्या बोले जा रहे हो? तुम्हारी तबियत तो ठीक है, तुझे कुछ हो तो नहीं गया। राम कहते हैं- माँ! मैं पूज्य पिताजी का आशीर्वाद लेने

के पश्चात् आपके चरणों में आया हूँ, आप मुझे आज्ञा दीजिये। इतना सब सुनते ही माँ कौशल्या अश्रुपात करती हुई विलाप करती है। राम कहते हैं– **माता! आपको तो प्राणियों के आँसू पोंछना है, आप ना रोयें। अगर आप ही आँसू बहाओगी तो कौन आँसू पोंछेगा?**

ये सब चल रहा था कि सीता भी वहाँ आ जाती है। राम सीता से कहते हैं– सीता! तुम मेरी वधू हो। पतिव्रता स्त्री पति की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करती। हे पति सेवा परायण! हे पति आज्ञापालक सीते! मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम मेरी आज्ञा को लोप नहीं करोगी। आप मेरी माता का ख्याल रखना, मेरे पिता की सेवा करना। सीता कहती है– हे स्वामी! मेरे जीवन का परम सौभाग्य है कि चार सास की सेवा करने का अवसर इस बहू को मिला। सीता चार सास की अकेली सेवा करती पर आज बात अलग है। सीता कहती है– स्वामी! क्या कोई प्राणों के बगैर जी सकता है? प्राण विहीन जीव क्या जीवित रह सकता है? जल के अभाव में क्या मछली जीवित रह सकती है? घी के बिना क्या दीपक रोशनी दे सकता है? स्वामी! मैं शरीर हूँ और आप मेरी आत्मा है। यदि आत्मा शरीर को छोड़ देगी तो मैं कहाँ जीवित रह सकूँगी? मैं भी आपके चरणों का अनुगमन करते हुए आपके पीछे चलूँगी। अत: आप मेरे पतिव्रत धर्म पालन में सहयोग कीजिये। राम कहते हैं – सीता! यहाँ माँ की सेवा करना है और सेवा करना बहू का कर्त्तव्य है। सीता कहती है – स्वामी! माँ की सेवा के लिए वनमाला, उर्मिला और भी हैं। लेकिन आप की सेवा में ही मेरा परम धर्म है, **पति की सेवा ही परमेश्वर की सेवा है,** इस सेवा को कैसे छोड़ा जा सकता है? पतिव्रता स्त्रियाँ वे ही कहलाती हैं जो पति के प्रतिकूल समय में सहयोग दे।

राम कहते हैं– सीता! वन में कितने ही कँटीले मार्ग, दुर्गम मार्ग हैं। सिंह की भयानक आवाजें (दहाड़), शृगाल, भेड़िया, गिद्ध पक्षियों की आवाजें, हाथियों की गर्जनाएँ, कभी अजगर की फुँकार तुम्हें विव्हल कर देगी, कभी बिजली की तेज गड़गड़ाहट,

बादलों की भारी बारिश, वनों की भीषण आग (दावानल), बड़ी और गहरी नदियाँ कहाँ-कहाँ से पार होना पड़ेगा। कौन-कौन से पर्वत मिलेंगे, कभी पीने को जल नहीं मिलेगा, कभी सूरज की तपन, कभी बारिश की गलन, कभी शीत की चुभन। हे सीता! तुम्हारा ये कोमल कृशांग तन वन के योग्य नहीं है।

सीता कहती है- **हे स्वामी! स्त्री पति की छाया होती है।** जब काँटे आयेंगे तो ये सीता उन काँटों को चुनने के लिए आपके आगे-आगे चलेगी ताकि आपके कदम उन काँटों पर ना पड़े। स्वामी! आप कहिए कि पत्नी को पति के पीछे चलना चाहिए कि आगे चलना चाहिए। जब दु:ख, विपत्ति, काँटे और दुर्गम मार्ग आयेगा ऐसे समय में मैं आपके आगे-आगे चलूँगी और सुख में, सम्पत्ति में, सुमार्ग के अवसर में आपके चरणों का अनुसरण करती हुई पीछे-पीछे चलूँगी। धन्य हैं सीता के उत्तम विचार

राम, माँ कौशल्या के मुख मण्डल को देखते हैं, माँ कौशल्या कहती है- पुत्री सीता! आज तूने पतिव्रता स्त्रियों का गौरव बढ़ाया है, धन्य है तू, धन्य है तेरे उत्तम विचार। पुन: कौशल्या माँ अश्रुपात करने लग जाती है। क्योंकि सीता और माँ कौशल्या का सम्बन्ध सास-बहू का न होकर माँ-बेटी जैसा था। अभी तक तो राम के वन जाने का दु:ख था पर अब सीता के भी जाने से माँ कौशल्या का दु:ख दोगुना हो गया। एक ओर राम जा रहे हैं उनके साथ मेरी प्राण प्यारी सीता भी जा रही है। माँ कौशल्या सीता से निवेदन करती है- पुत्री! तुम यहीं रुक जाओ, तुम वन को मत जाओ। सीता कहती है- **माँ! आप मेरे पतिव्रत धर्म निर्वाह में सहायक बनिये।** मित्रों! इतना महान् आदर्श हैं देवी सीता का।

ये प्रसंग चल रहा था कि उसी समय वीर प्रतापी, भारत वर्ष का महान् भ्राता सेवक जिसने अष्टम नारायण के रूप में जन्म लिया, ऐसे भ्राता लक्ष्मण वहाँ आते हैं। राम कहते हैं- भ्राता लखन! तुम यहाँ कैसे? तुम यहाँ किस प्रयोजन से आये? लक्ष्मण कहते हैं- भैया! अपने चलने का समय हो गया है?

भैया! शरीर दो हैं पर आत्मा एक है। हम दो भाई नहीं अपितु दो शरीरों की एक आत्मा है। जहाँ आप जाना चाहते हैं वही मेरी मंजिल है। आप मुझे अपने साथ नहीं ले जाना चाहते हैं लेकिन ये आपका अनुज इतना हठीला है कि आपके चरण नहीं छोड़ेगा। चाहे प्राण छोड़ देगा। भैया! ये लक्ष्मण आपके साथ चलने के लिए आया है।

राम सोचते हैं मैं अकेला ही वन जाता तो अच्छा होता। अब तीन-तीन जायेंगे तो संसार क्या कहेगा? गुरु कितना ही मना कर दे पर सेवा का अधिकार शिष्य का होने से मना नहीं कर सकते। उसी तरह राम लक्ष्मण को कैसे रोके? कौशल्य माँ कहती है- बताओ राम! जब तुम्हें राज दशरथ ने वन गमन की आज्ञा दी है तो मुझे भी तो तुम्हारी माँ का अधिकार होने से उनकी आज्ञा में परिवर्तन करने का अधिकार है। राम कहते हैं- हाँ माँ! पिताजी की आज्ञा है और माँ की आज्ञा है। जिस प्रकार गाय के चारों स्तनों में से एक समान दूध आता है उसी तरह आप चारों माताएँ मेरे लिए एक समान हैं। माता कोई सी ही हो, मेरे लिए सभी की आज्ञा एक समान है।

राम का वनगमन

राम-लक्ष्मण-सीता तीनों राजसी वेशभूषा का त्याग करते हैं और माँ कैकयी के कक्ष में पहुँचते हैं। माँ कैकयी! आप की आज्ञा से मुझे कई साधु-संतों का समागम प्राप्त होगा, मुझे कई तीर्थ क्षेत्रों और अतिशय क्षेत्रों के दर्शन का अवसर मिलेगा। मेरा तो चारों ओर से कल्याण हो गया। कभी सम्मेद शिखर जायेंगे, तो कभी गिरनार जायेंगे। कभी बद्रीनाथ जायेंगे तो कभी काशी, बनारस, मथुरा के दर्शन मिलेंगे। हे माता! सभी तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा आपके आशीर्वाद से मिलती जायेंगी। कोई साधु-संत महल में नहीं रहते अपितु जंगल में ही रहते हैं। मेरा भाई भरत प्रजा की सेवा करेगा और मैं जंगल के साधु-संतों की सेवा करूँगा। इस तरह का आशीर्वाद और किसे मिल सकता है?

राम ने माँ कैकयी का कोई दोष नहीं दिया, कोई शिकायत नहीं की। इतने उच्च आदर्शन थे श्रीराम के। राम माँ कैकयी के चरणों की वन्दना कर वन गमन की आज्ञा लेते हैं।

राम का वनगमन

राम के वन गमन की खबर सुनते ही अयोध्या में हाहाकार मच जाता है। प्रात: सूरज दिखाई नहीं दे रहा है, गायें दूध नहीं दे रही हैं, पक्षियों की चहक नहीं हो रही हैं, चूल्हें नहीं जल रहे हैं, स्त्रियाँ पानी भरने कुएँ पर नहीं जा रही हैं। इस तरह का शोक अयोध्या नगर में छा जाता है। सभी की आँखों में गंगा-सिन्धु जैसी अश्रुधारा बह रही है। सबके मुख से एक ही बात दोहराई जा रही है- मेरे राम वन को जा रहे हैं, राजा राम वन को जा रहे हैं। अयोध्या में कभी किसी ने आँसू नहीं बहाये पर आज वहाँ हर एक की आँख नम है। क्योंकि राम किसी एक के नहीं थे। राम तो जन-जन के राम थे।

ना जाने जीवन के पल में क्या घटना घट जाये?
राजतिलक की मंगल बेला राम-सिया बन जाये।

वे तीनों वहाँ से पंछी की तरह उड़ जाते हैं और साथ में पीछे-पीछे प्रजाजन चलते जा रही है। सारी प्रजा में शोक और रुदन है।

उड़ चला पंछी रे हरी-भरी डाल से,
रोको रे रोको कोई प्रभु को विहार से।

भरत के द्वारा राम को रोकने का प्रयत्न करना। राम के नहीं मानने पर राम की खड़ाऊ लेकर अयोध्या में वापस आना।

जहाँ से देखो वहाँ से रुदन की आवाजा, अश्रुपात, अयोध्या की गलियों में हाहाकार मचा हुआ है। अयोध्या के प्राणपालक प्रभु राम! अयोध्या को छोड़कर चले जा रहे हैं और भरत उनके पीछे-पीछे चले जा रहे हैं। राम कहते हैं-हे भरत! तुम वापस लौट जाओ और पिताजी की आज्ञा का पालन करो, तुम राज्य सिंहासन सम्भालो, तुम अयोध्या का राज्य करो और मैं वन का राज्य करता हूँ। हे भ्राता भरत! जाओ और अग्रज की आज्ञा को स्वीकार करो। भरत कहते हैं-हे स्वामी! यदि आप वन में हैं तो वहीं अयोध्या का राज्य है, यदि आप अयोध्या में नहीं रहते तो आपके अभाव से अयोध्या किसी वन से कम नहीं है। हे स्वामी! आप अयोध्या को छोड़कर मत जाइये,

ये तुम्हारा अनुज दया की भीख माँग रहा है। हे अग्रज! आज तक आपने मेरी बात नहीं ठुकराई, जब भी आप से माँगा, आपने सहर्ष दिया। भरत अपने भ्राता श्रीराम को रोकने का बहुत प्रयास करते हैं।

हंसाया बहुत अब रुलाना नहीं तुम।
मुझे छोड़कर वन जाना नहीं तुम।।

श्रीराम एकवचनी थे, एक बार जो वचन कर दिया उसका जीवन भर पालन करते। तभी तो श्रीराम एक वचनी, एक पत्नी और एक वाणी के नाम से जाने जाते हैं। भरत कहते हैं- भैया! **जब तक आप अयोध्या में थे, अयोध्या सोना-सोना थी पर आपके अभाव में सूनी-सूनी हो गई है।** श्रीराम वन की ओर बढ़ रहे हैं, भरत कहते हैं- भैया! आप मुझे एक चीज दे दो। इतना सुनते ही लक्ष्मण सोचते हैं भरत की माँ ने पहले ही सब माँग लिया है, लेकिन यह भरत अब भी शांत नहीं है, न जाने क्या माँगने तैयार हो गया? राम कहते हैं- भैया भरत! क्या चाहते हो? मेरा तन, मेरा मन, मेरा जीवन, मेरी आत्मा सब तुम्हारे लिये हैं। जो तुम चाहो माँग लो। भरत कहते हैं मुझे और कुछ नहीं मात्र आपकी चरण पादुका दे दो।

भरत राम से कह रहे, ना चाहूँ साम्राज्य।
चरण पादुका दो हमें, वही करेंगी राज्य।।

चरण अर्थात् आचरण। आपके जाने के बाद भी अयोध्या में भरत का नहीं, अपितु श्रीराम का आचरण राज्य करेगा। आपके आचरण से अयोध्या का गौरव महिमा मण्डित होता रहे। ऐसे महान् उद्देश्य थे भरत जी के। श्रीराम कहते हैं- हे भ्राता भरत! आज तुमने मुझे इतना विवश कर दिया है, पर तुम इन्हें सिंहासन पर मत रखना, तुम स्वयं सिंहासन पर बैठना। श्रीराम के द्वारा दी गई चरण पादुका को भरत जी अपने मस्तक पर धारण करके अयोध्या की ओर चलते हैं।

राम भक्त ले चला रे, राम की निशानी।
शीश पर खड़ाऊ, अँखियों में पानी।।

प्रजानन को सोता छोड़ राम-लक्ष्मण का सरयू नदी के किनारे से विहार करना

श्रीराम भरत को अयोध्या लौटा देते हैं और मार्ग में आगे बढ़ते हैं। चलते-चलते सीता पूछती है- स्वामी! अभी कितनी दूर और चलना है? राम सोचते हैं अभी तो यात्रा आरम्भ भी नहीं हुई और सीताजी पूछ रही है अभी कितनी दूर और चलना है? राम कोई उत्तर नहीं देते हैं। सीता लक्ष्मण से पूछती है, और आगे कहाँ तक चलना है? कितनी दूर चलना है? लक्ष्मण कहते हैं- भाभी! वहाँ हरे-हरे वृक्षों तक चलना है। हरे-हरे वृक्ष आ जाते हैं। सीता कहती है, देवर जी! स्वामी को ठहरने के लिए बोलो ना। लक्ष्मण कहते हैं। हरे-हरे वृक्षों तक चलना है। सीता सोचती है, आगे और घने वृक्ष होंगे वहाँ ठहर जायेंगे। चलते-चलते सरयू तट आ जाता है। सभी ग्रामवासियों ने वहाँ डेरा डाल लिया। राम जानते थे कि अगर हम यहाँ सो गये तो सभी जागते रहेंगे और यदि इनको जगायेंगे तो कोई ग्रामवासी आज मेरी आज्ञा का पालन नहीं करेगा, क्योंकि यह आज्ञा उल्लंघनीय होने पर भी भक्तों के अधिकार में थी। इसलिए राम ब्रह्ममुहूर्त में उठते हैं, सीता को जाग्रत करते हैं। लक्ष्मण तो पहले से ही जाग्रत थे। वे सरयू नदी के किनारे से कई कोस आगे चले जाते हैं और नदी पार हो जाते हैं। जैसे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र से संसार पार हो जाता है, उसी तरह राम, लखन, सीता उस नदी को पार करके आगे बढ़ गये। अब सूर्योदय हो चुका है, चिड़िया चहचहा रही है। सभी सोये हुए ग्रामवासी जाग जाते हैं और सबसे पहले श्रीराम का दर्शन करने अपना माथा झुकाते हैं, देखते हैं यहाँ न तो राम है, न लक्ष्मण है, न ही देवी सीता। राम कहाँ है? ऐसा कहते हुये सभी इधर-उधर दौड़ते हैं और विशाल नदी पार करके कौन जाये? खोजने पर भी नहीं मिले। जैसे सम्यग्दर्शन एक बार खो देने पर नहीं मिलता, रत्नत्रय एक बार खो देने पर पुन: नहीं मिलता, धर्म एक बार खो देने पर पुन: नहीं मिलता। उसी तरह से राम, लखन, सीता जब निकल गये तो किसी को दिखाई नहीं दिये। सभी ग्रामवासी अयोध्या लौटते हैं।

माता कैकयी का भरत को लेकर राम को वापस लाने के लिए प्रस्थान करना

भरत जब महल में प्रवेश कर रहे थे तो महल उन्हें श्मशान जैसे लग रहा था। श्मशान में तो रोने की आवाज कम आती है पर महल से रुदन की तीव्र आवाज आ रही थी। माँ कौशल्या कम रो रही थी, कैकयी पश्चाताप की अग्नि में झुलस रही थी। कैकयी सोच रही थी मैंने जीवन में आज कितना बड़ा अनर्थ कर डाला? कितना बड़ा विश्वासघात कर डाला। हे प्रभु! कौन से जन्म का पाप मेरे माथे पर कलंक बन के आया। कैकयी की अश्रुधारा ऐसे लग रही थी, मानो हिमालय से गंगा, अमरकंटक से नर्मदा नदी प्रवाहित हो रही हो। रोती-रोती भरत के पास जाती है। बेटे भरत! जिस राम को मैंने तुमसे बढ़कर पाला, मेरी वजह से उसी को वन जाना पड़ा। तुम राम को जल्दी वापस लाओ अन्यथा मेरे प्राण राम के बिना नहीं रह सकते। भरत कहते हैं- माँ! अब पछताये होत क्या? जब चिड़िया चुग गई खेत। आग लगने के बाद कुआँ खोदना, माँ ये कहाँ का कार्य है? माँ कैकयी कहती है- बेटे तुम ऐसा मत बोलो, जहाँ भी राम मिलेंगे मैं वहाँ से लेकर आऊँगी। वह माता नहीं, जिसके ममता नहीं। वह कैकयी माँ उसी अवस्था में अश्रु बहाती हुई अयोध्या की गलियों से निकलकर पैदल ही सरयू नदी पार कर लेती है। भरत, कौशल्या सभी लोग कैकयी के पीछे आते हैं। भरत माँ को रथ में बैठाते हैं, स्वयं घोड़े पर बैठ जाते हैं। भरत अपने सैन्य दल के साथ आगे-आगे चलते जाते हैं। जितने रास्ते को श्रीराम ने नौ दिन में पूरा किया, उतने रास्ते को कैकयी ने एक दिन में पूरा कर लिया, क्योंकि कैकयी में मातृत्व का आँचल दौड़ रहा था।

दौड़ते घोड़े के पैरों की आवाज, रथों की आवाज, पैदल सैनिकों की आवाजें, ऐसा लग रहा था कोई योद्धा युद्ध के लिए जा रहा हो। लक्ष्मण तो सावधान थे ही, भैया! कोई योद्धा हमारे ऊपर आक्रमण के लिए आ रहा है। वह और कोई नहीं कल का छोकरा आज राज्य पाकर के इतना बौरा गया, शायद भरत ही दिग्विजय के लिए निकला है

और सबसे पहले हम दोनों पर वार करना चाहता है। गुरु सही कहते थे "**सम्पत्ति के पा जाने पर सुमति नहीं रहती है।**" वह भरत हमारे ऊपर आक्रमण के लिए आ रहा है। राम कहते हैं -लक्ष्मण

अयं निजापरोवेति, गणनां लघु चेतसां।
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकं।।

यह अपना है, यह पराया है यह भेदभाव सामान्य पुरुषों में पाया जाता है, जिनका चित्त उदारता से भरा है, उनके लिए वसुधा ही उनका परिवार है।

भ्राता लखन! आज तक तुमने अयोध्या में रहकर धर्ममूर्ति भरत को नहीं पहचाना। लक्ष्मण कहते हैं- नहीं भैया! सामने देखो वह भरत चला आ रहा है। चमचमाती तलवारों की खन-खन के साथ। भ्राता लखन! **हर कोई द्रश्य जो आँखों देखा हो वह पूर्ण रूप से सही हो, यह सच नहीं है।** तुम शायद आज तक भरत के हृदय को ठीक से नहीं पहचान पाये? लक्ष्मण कहते हैं- भैया आप इसी सरलता के कारण हमेशा ठगाये जाते हैं, **आपकी सरलता ही आपको वन-वन भटका रही है।**

अधिक सरलता सुख नहीं, देखो विपिन मंझार।
सीधे बिरवा कट गये, टेड़े रहे हजार।।

भैया! अभी भी सावधान होने का वक्त है। लक्ष्मण धनुष-बाण लेकर तैयार हो जाते हैं। राम रोकते हैं। धनुष एक तरफ रख दो, धनुष उठाने की आवश्यकता नहीं। अपितु भरत से मिलने के लिए अपनी दोनों भुजाओं को उठा लो। भरत शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़ते हैं। कहीं मेरे भैया बहुत आगे न बढ़ गये हों। श्रीराम को दूर से देखते ही भरत घोड़े से नीचे उतर जाते हैं, तभी भरत का घोड़ा नाचने लगता है। यह सब देखकर लक्ष्मण अवाक् रह जाते हैं। भरत दौड़कर शीघ्रता से राम के चरणों में लिपट जाते हैं, जैसे कोई बालक बहुत अधिक विरह के बाद अपनी माँ के आँचल से लिपट जाता है। भरत के बहते आँसू राम के चरणों का प्रक्षालन करते हैं और भरत केशों से चरणों को

पोंछते हैं। भरत निवेदन करते हैं – हे स्वामी! माता कैकयी शीघ्रता से आपकी ओर आ रही हैं। माता कौशल्या भी साथ में हैं। माँ सुमित्रा भी है। पूरे अयोध्यावासी फिर से तुम्हें लेने आ रहे हैं। आप क्षमा कर दो, हे क्षमामूर्ति आप क्षमा कर दो। राम कहते हैं– इसमें ना तुम्हारा अपराध है, ना माँ कैकयी का, ना माँ कौशल्या का। **तुम मुझे मोह के वश संत समागम से हटाकर घर में बैठाना चाहते हो। यह तो मेरा सौभाग्य है कि मुझे कितने ही तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा करने को मिलेगी। भ्राता भरत इस ओर भी तो सोचो।**

थोड़ी ही देर में माताओं का आगमन होता है, माताएँ राम से लौट चलने का निवेदन करती हैं, पर सभी निवेदन राम के पीछे हार जाते हैं क्योंकि **महापुरुषों का निर्णय मजबूत होता है, एक होता है। सही होता है, नेक होता है।** राम माताओं का चरण स्पर्श कर आगे की यात्रा के लिए आशीर्वाद लेते हैं। माँ सुमित्रा लक्ष्मण से कहती है–

राम पिता सम जानिये, सीता जानो मात।
शुभाशीष दे कह रही, अहो सुमित्रा मात।।

लखन! तुम राम को पिता तुल्य आदर देना और जनकनन्दनी को माता का सम्मान देना। अब राम आगे की ओर बढ़ते हैं, न ही राम के चरणों में पादुका है, न ही सीता के है, न ही लक्ष्मण के है। सीता जो कोमलांगी, कृशांगी है, जिसने महल के मखमली बिछौनों पर चहलकदमी की है, आज वह ऐसे मरुस्थल, बीहड़, कँकरीली कँटीली भूमि पर चल रही है। लक्ष्मण सीता के एक पैर का काँटा निकालते हैं तो दूसरे में लग जाता है, यहाँ सीता के पाँव से खून की धारा बहने लगती है तो कभी राम के पाँव में काँटा चुभ जाता है, कभी लक्ष्मण के काँटा लग जाता है तो कभी नुकीले पत्थर की ठोकर से लहू की धारा फूट पड़ती है।

चले हैं रघुवीर, सिया वन–वन में।
पैरों में लहू धार, बहे छिन–छिन में।।

धन्य है वह सीता का गौरव, धन्य है माँ सीता। वह कभी यह नहीं कहती कि मुझे

चरण पादुका ला दो। धन्य है, सीता जो काँटों के बिछौने पर चल रही है। आज कहाँ खो गई ये रामकथा, ये रामायण जी। जो आज सूक्ष्म-मूक जीवों को अपने पैरों तले, जूते-चप्पल से कुचलकर चलते हैं। अगर यह रामकथा आपके जीवन में उतर जाये तो चमड़े के बने जूते-चप्पल का स्पर्श भी नहीं करोगे।

चित्रकूट वर्णन

राम आगे बढ़ते हैं, चित्रकूट का झरना आता है। रामा सीता वहीं बैठ जाते हैं। राम झरने में पैर डालते हैं, सीता भी उसमें पैर डाल देती है। दोनों के चरण झरने के जल से और सुंदर दिखाई देने लगते हैं। राम कहते हैं- सीता! मेरे चरण बहुत सुन्दर दिखाई देते हैं। स्वामी! मेरे चरण बहुत सुन्दर दिखाई देते हैं। पुनः राम मनोविनोद करते हुए बोलते हैं, मेरे चरण उगते हुए सूर्य के समान लगते हैं। सीता कहती है स्वामी! देखो-देखो, मेरे चरण पूनम की चाँदनी जैसे प्रतीत होते हैं। मनोविनोद चल रहा था कि लक्ष्मण आ जाते हैं, भैया! आप ये क्या वाद-विवाद कर रहे हैं? वाद-विवाद नहीं ये तो मनोविनोद है। सीता कहती है- आप तो देवर जी से पूछ लो किसके चरण सुन्दर हैं? निर्णायक लक्ष्मण सोचते हैं अगर मैं भैया का पक्ष लेता हूँ तो भाभी कहेगी कि आपको तो भैया का पक्ष लेना ही था। अगर भाभी का पक्ष लेता हूँ तो भैया कहेंगे तुम्हें तो भाभी का पक्ष लेना ही था। लक्ष्मण कहते है- **भाभी चरण तो आपके ही सुन्दर हैं क्योंकि आपके चरण भैया राम के आचरण का अनुसरण करते हैं।** चरण की शोभा काले और गोरे से नहीं, कठोर और मुलायम से नहीं अपितु **चरण की शोभा मात्र आचरण से है। मानव जीवन में चरित्र ही सबसे बड़ी पूँजी है।**

विहार के मनोरम एवं शिक्षाप्रद दृश्य

आगे बढ़ते हैं, एक सरोवर है और उस सरोवर में बगुला शांत बैठा है। लक्ष्मण कहते हैं- भैया! यह बगुला कितना शांत बैठा है, देखो कितना शांत बैठा है? राम कहते हैं- लखन! जो जैसा दिखता है, वैसा होता नहीं। लक्ष्मण कहते हैं- भैया! आप

मेरी बात को ऐसे ही कह देते हो। देखो, बगुला कैसे बैठा है? जैसे भगवान की मूर्ति बैठी हो, देखो योगीजनों की तरह ध्यान में बैठा है, ऐसा ध्यान हमें भी करना चाहिए। राम कहते हैं– अनुज! ऐसा ध्यान तुम मत करना। इतना कहना हुआ कि वह बगुला सरोवर में से जलीय जीव को अपनी चोंच में ले लेता है। ऐसा छल, कपट, मायाचारी कभी सुखी नहीं हो सकता। महात्मा लोगों के मन, वचन, काया तीनों एक जैसे होते हैं। इस प्रकार राम का जीवन अपने आप में शिक्षाप्रद है।

श्रीराम आगे चलते हैं– देखते हैं पूरा नगर खाली–खाली सा है, लक्ष्मण को आज्ञा देते हैं देखो, यहाँ कोई है या नहीं। लक्ष्मण कहते है– भैया! यहाँ वज्रकर्ण नाम का धर्मात्मा व्यक्ति है, लेकिन उसके राज्य पर सिंहोदर ने अतिक्रमण कर लिया। वह बहुत दुखी है। धर्मात्मा पर संकट देखकर लक्ष्मण को क्षत्रिय धर्म का भान होता है, मेरा क्षत्रिय धर्म निर्बल, असहाय, धर्मात्मा लोगों की रक्षा के लिये है। लक्ष्मण सिंहोदर को पकड़कर श्रीराम के चरणों में ले आते हैं। भैया! यही है जिसने वज्रकर्ण जैसे धर्मात्मा को कष्ट में डाल रखा है। श्रीराम कहते हैं– सिंहोदर! तुम्हें जीवन स्वीकार हो तो धर्म की शरण में आ जाओ, धर्म से रहो और धर्मात्माओं से मिल–जुलकर रहो, आज से तुम को वज्रकर्ण के शासन में रहना है। राम जहाँ–जहाँ जाते हैं धर्मात्मा पुरुषों की सेवा और रक्षा करते हैं। इस क्रम में वनमाला नामक कन्या लक्ष्मण से परिचित होती है, वनमाला के पिताजी दोनों का विवाह करना चाहते हैं। वनमाला भी वन में चलने को कहती है। लक्ष्मण कहते हैं– मैं पुन: आऊँगा, **मैं वचन देता हूँ। अगर मैं नहीं लौटा तो मुझे वह पाप लगे, जो पाप रात्रि भोजन करने पर लगता है।**

*****

पंचम पर्व

जटायु पक्षी का चित्रण एवं सीता हरण

राम-लक्ष्मण के द्वारा कुलभूषण-देशभूषण मुनिराज का उपसर्ग दूर करना

देशभूषण और कुलभूषण नामक दो राजकुमार थे। उन दोनों का एक-दूसरे के प्रति अपार प्रेम था।

राजा ने बाल्यावस्था में ही दोनों राजकुमारों को गुरुकुल भेज दिया था। पन्द्रह वर्ष के बाद दोनों नगर में लौटे तो उनके स्वागत की तैयारी बड़े ही धूम-धाम से हुई।

दोनों भाईयों की स्वागत यात्रा जब सम्पूर्ण नगरी में घूमती हुई राजमहल के पास आई तब उन्होंने वहाँ झरोखे में एक अतिसुन्दर राजकन्या को देखा।

कुलभूषण की दृष्टि उस सुन्दर युवती पर पड़ती है, कुलभूषण, देशभूषण से कहते हैं- मैं इस सुन्दरी से विवाह करूँगा। देशभूषण कहते हैं- मैंने पहले इस युवती को देखा है, मैं इससे विवाह करूँगा। कुलभूषण कहते हैं- नहीं, नहीं! मैं बड़ा हूँ, मैं इससे विवाह करूँगा। तुम अन्य से विवाह करना। दोनों भाई मोह में इतने आसक्त हो गये, कि भूल जाते हैं कि हम दोनों भाई हैं और निर्णय करते हैं, जो युद्ध में जीतेगा वो ही इस युवती से विवाह करेगा और दोनों युद्ध के मैदान में आ खड़े होते हैं। इधर तो नगर में लोग आरती का थाल लिए खड़े हैं, दूसरी तरफ दोनों भाई युद्ध के मैदान में मंत्री पूछते हैं- क्या बात है? तुम दोनों युद्ध क्यों कर रहे हो? ऐसी क्या बात है? जो पराक्रम दिखा रहे हो? ये समय शौर्य दिखाने का नहीं, ये तो माता-पिता से आशीर्वाद लेने का समय है। तब दोनों राजकुमार सारी घटना मंत्री से कह देते हैं।

मंत्री कहता है- तुम्हारे मन में इतना भी विवेक नहीं है। थोड़ा विचार करो, जब तुम लोग शिक्षा प्राप्ति के लिए गुरुकुल चले गये थे उस समय तुम्हारी माँ की कुक्षी से इस कन्या का जन्म हुआ था। इस नाते से ये तुम्हारी बहिन हुई। अब बताओ किसको विवाह करना है, चलो आओ तुम दोनों का विवाह करा दूँ। कुलभूषण और देशभूषण शर्मिंदगी से अपना मस्तक झुका लेते हैं। अनजाने में कितनी बड़ी भूल हो जाती है। जब

भी तुम किसी को देखो तो परमात्मा के रूप में देखो। कुलभूषण और देशभूषण कहते हैं- मंत्रीजी! हम मोह के कारण अपनी ही बहिन को नहीं पहिचान पाये तो इस संसार को कैसे जान पायेंगे? इससे बड़ी सीख हमारे लिए क्या हो सकती है? दोनों भाई उसी क्षण वैराग्य धारण कर मुनि दीक्षा ले लेते हैं। घोर तपस्या में लीन वंशस्थल पर्वत पर विराजमान हो जाते हैं।

एक बार जब दोनों मुनिराज वंशस्थल पर्वत पर उग्र-ध्यान में लीन थे, तब पूर्व की द्वेष बुद्धि से प्रेरित होकर दुष्ट अग्निप्रभदेव आकर उन पर घोर उपसर्ग करने लगा।

जब श्रीराम इस पर्वत के निकट पहुँचते हैं तो सभी नगरवासी पर्वत पर होने वाली भयानक आवाजों के बारे में श्रीराम को बताते हैं और कहते हैं -प्रभु राम! आप पर्वत पर ना जायें। रात्रि में पर्वत पर भयानक आवाजें होती हैं, जैसे किसी को सताया जा रहा हो। राम पर्वत पर बढ़ते चले जाते हैं। रात्रि का समय है। राम देखते हैं एक दैत्य दो मुनिराजों पर घोर उपसर्ग कर रहा है। सीता को मुनिराज के पास बैठा देते हैं। राम-लक्ष्मण अपने दिव्य धनषु की टंकार करते हैं और युद्ध करते हुये उस अग्निप्रभ दैत्य को परास्त कर देते हैं।

वाल्मीकि रामायण में बताया कि विश्वामित्र आदि के साथ राम ने कई राक्षसों का वध किया और ऋषि-मुनियों की सहायता की। पद्मपुराण में राम के द्वारा मुनियों पर होने वाले उपसर्ग को दूर करना बताया है। श्रीराम ने दोनों मुनिराजों के शरीर से चिपके हुए विषैले कीट, बिच्छू आदि को हटाया और मुनियों की स्तुति करने लग जाते हैं-

जय मुनिराज जय मुनिराज, बिगड़े सभी सँवारे काज।
कृपा सभी पर करते हैं कष्ट सभी के हरते हैं।।
चरण-शरण हम आये हैं जय मुनिराज जय मुनिराज।
राग-द्वेष है त्याग दिये पापों का संहार किये।।

यह वंशस्थल महाराष्ट्र की पावन धरती पर कुंथलगिरी नामक स्थान है। राम यहाँ पर कुछ दिनों के लिए ठहरते हैं। कुलभूषण और देशभूषण के मंदिर सहित अनेक मंदिरों का निर्माण यहाँ करते हैं।

राम का सवरी की कुटिया में पदार्पण

अब राम आगे बढ़ते हैं। राम देखते हैं एक पगडंडी इतनी साफ-सुथरी कहाँ को जा रही है? एक वृद्धा जिसे भक्ति के कारण प्रसिद्धि मिली प्रतिदिन रास्ता साफ करती। कोई पूछता माँ ये क्या कर रही हो? तो कहती- श्रीराम मेरे द्वारे आने वाले हैं, मैं उनके आगमन में रास्ता साफ कर रही हूँ। अरे माँ! वो अयोध्या के राजकुमार जंगल में क्या लेने आयेंगे? वह वृद्धा माँ रोज साफ-सफाई कर चौक पूरती और राह निहारती रहती। वृद्धा को मालूम नहीं था कि आज राम आने वाले हैं। राम उस साफ-सुथरी पगडंडी से चलते-चलते वृद्धा की कुटिया तक पहुँच जाते हैं, वृद्धा शवरी देखती है राम आये हैं।

रघुवर आज मेरी कुटिया में आये हैं।
चलते-फिरते तीरथ पाये हैं।।

यह शवरी भक्ति भाव से चरण पखारती हैं। शवरी सदा राम नाम की रट लगाने वाली एक उत्तम श्राविका से कम नहीं थी। शवरी के जीवन का पूर्व वृत्तान्त नेमिनाथ भगवान के जीवन की तरह ही है। जहाँ नेमिनाथ पशुओं का करुण क्रंदन सुनकर वन को चले जाते हैं वैसे ही शबरी का जीवन भी महान् है। शवरी जब विवाह मण्डप में बैठी थी तो वह देखती है मेरे कारण अन्य कई जानवरों का वध किया जायेगा। अत: मैं विवाह नहीं करूँगी, श्राविका रहूँगी।

राम-सीता द्वारा आहारदान देना एवं जटायु पक्षी का चित्रण

राम और सीता पड़गाहन करते हैं तभी वहाँ एक पक्षी जहाँ मुनिराज के चरण पखारे गये थे, वहाँ उस गंधोदक में लौटने लगता है। उस पक्षी की स्थिति कुछ इस प्रकार की

हो जाती है, उसका शरीर स्वर्ण जैसा हो जाता है। उसके बाल रेशम की तरह हो जाते हैं, उस पक्षी के पंख पद्मराग मणि जैसे दिखाई देते हैं। आहारचर्या के पश्चात् राम और सीता मुनिराज को उच्चासन पर विराजमान कर पूछते हैं– हे मुनिराज! ये पक्षी कौन हैं? यह लोट क्यों रहा है? मुनिराज कहते हैं– पुत्री सीता! इस वन से पहले यहाँ दण्डक नगर था। दण्डक नगर का राजा मुनि भक्त था। पर उसका मंत्री विद्वेषी था, जो मुनियों से विद्वेष रखता था। मंत्री नहीं चाहता था कि कोई मुनिराज महल में आये। मंत्री ने एक बहुरुपिया को धन का लालच देकर मुनि के रूप में महल में प्रवेश करा दिया। राजा सही गलत का निर्णय नहीं कर पाया और राजा ने कुपित होकर पूरे संघ को घानी में पिलवा दिया। वे पाँच सौ मुनिराज समता भाव के साथ समाधिमरण कर उत्तमगति को चले गये।

जब एक मुनिराज दण्डक नगर की ओर जा रहे थे तो किसी ने कहा – मुनिराज आप नगर की ओर ना जायें। वहाँ का राजा कुपित है। आपको भी घानी में पेल देगा, पूर्व में पाँच सौ मुनिराजों को पेल चुका है। मुनिराज को यह बात सुनकर क्रोध आता है और क्रोध में उनके शरीर से तेजस नाम का पुतला निकलता है और वह अशुभ तेजस पुतला पूरे दण्डक नगर को जलाकर भस्म कर देता है। फलस्वरूप अब वह नगर दण्डकारण्य वन के नाम से जाना जाता है। वह दण्डक राजा उस पाप के फल से आज यह गिद्ध पक्षी बना है। आज जब इसने दो मुनिराजों को देखा तो इसे पूर्वभव का स्मरण हो आया और पश्चाताप करते हुए गंधोदक में लोट रहा है। वह मुनिराज कहते हैं– सीता! ये पक्षी पश्चाताप कर चुका है, इसके पूर्व जन्म के पाप इस गंधोदक में धुल चुके हैं। अब यह पक्षी सदा शुद्ध शाकाहारी भोजन करेगा। यह पक्षी मुनिराज के दर्शन करने से सम्यग्दर्शन को प्राप्त कर चुका है। यह पक्षी पाँच पापों को छोड़कर, पाँच व्रतों को धारण कर चुका है। आज से यह श्रावक की तरह उत्तम भोजन करेगा। राम और सीता तुम दोनों उत्तम श्रावक हो इसलिए इस पक्षी का ख्याल रखना है। सीता कहती है– मुनिराज! मैं इस पक्षी की सदैव देखभाल करूँगी। मुनिराज वहाँ से प्रस्थान करते हैं।

सीता इस गिद्ध पक्षी का प्यारा नाम जटायु रख देती है। वह जटायु पक्षी भी

कदम-कदम पर राम-सीता के साथ रहता। जब भी राम गीत गाते, **लक्ष्मण ताल का** स्वर देते, सीता नृत्य करती तो जटायु पक्षी भी भक्ति भाव से नृत्य करता। भगवान की भक्ति में इसका मन रमने लगा था। भगवान महावीर कहते हैं- जैसी आत्मा आपके भीतर है वैसी ही आत्मा पशु-पक्षियों के भीतर है। राम कहते हैं- अगर हमें माताओं का साथ यहाँ मिल जाये तो कितना अच्छा होता। सीता कहती है- हे स्वामी! माताओं को यहाँ बुला लीजिये। राम आज्ञा करते हैं- लक्ष्मण! जाओ, ऐसा स्थान देखो जहाँ नगर बसाया जा सके।

लक्ष्मण को खड्गहास की प्राप्ति होना

लक्ष्मण उचित स्थान की खोज में चले जा रहे हैं। एक स्थान से बहुत अच्छी सुगन्ध आ रही थी और लक्ष्मण वहाँ पहुँच जाते हैं, देखते हैं, एक सुन्दर तलवार ऊपर टँगी हुई है। लक्ष्मण ये भूल जाते हैं, हमारे गुरु ने कहा था कि बिना पूछे किसी की वस्तु नहीं लेना चाहिए और लक्ष्मण उस सुन्दर तलवार को निकाल लेते हैं। देखते हैं वहाँ बाँसों के झुरमुट में अँधकार है। कुछ दिखाई नहीं दे रहा था कि उसके अंदर क्या है? लक्ष्मण उस तलवार का प्रयोग उन बाँसों पर कर देते हैं। ज्योंही तलवार चलती है एक गर्दन अलग होकर गिर जाती है। लक्ष्मण देखते हैं, ये मुझसे अनजाने में क्या पाप हो गया? किसी मनुष्य की हत्या हो गई मुझसे। लक्ष्मण अंदर ही अंदर बहुत दुःखी होते हैं, क्यों न इसी तलवार से अपना सिर काट लिया जाये? मेरे हाथों किसी निरपराधी की हत्या हो गई है।

माँ चन्द्रनखा सोच रही थी कि पुत्र को विद्या सिद्ध हो चुकी है। बहुत धूमधाम के साथ उसको नगर प्रवेश कराया जायेगा। माँ चन्द्रनखा यहाँ स्वागत की तैयारियों में थी कि आज पुत्र शम्भू कुमार चन्द्रहास तलवार को सिद्ध करके नगर में प्रवेश करने वाला है। माँ चन्द्रनखा को ये खुशी बारह वर्ष बाद मिल रही थी। पर ये क्या हो गया? चन्द्रनखा देखती है मेरे बेटे की गर्दन अलग पड़ी है, धड़ अलग पड़ा है, विलाप करने लगती है- बेटा शम्भू! बेटा शम्भू! क्या हो गया तुझे? कैसे हुआ ये सब? इस जंगल में ऐसा कौन पापी आ गया? जिसने मेरे बेटे के प्राण ले लिये। चन्द्रनखा जंगल में खोजती

है किसने मेरे बेटे की हत्या कर दी? खोजते-खोजते देखती है वहाँ पर अनुपम रूप सौंदर्य के धारक बलभद्र और नारायण दो कुमार हैं। चन्द्रनखा का रुदन मोह में बदल जाता है और बेटे की मृत्यु को भूल जाती है। चन्द्रनखा विद्याधारी होने से सुन्दर युवती का रूप बनाकर राम-लक्ष्मण के पास पहुँच जाती है। मैं इस वन में भटक रही हूँ, मेरे माता-पिता का मरण हो चुका है। मेरे लिए कोई सहारा नहीं है। यदि दोनों में से कोई मुझे अपना ले तो मेरा शेष जीवन ठीक से गुजर जायेगा। अन्यथा मैं इसी जंगल में प्राण दे दूँगी। वह अनेक प्रकार से यत्न करती है। राम कहते हैं- जिस कन्या के कुल का, शील का पता नहीं हो उसको अपनाया नहीं जा सकता। जब तक माता-पिता स्वीकृति प्रदान न करें, उस कन्या को कैसे अपनाया जा सकता है? लक्ष्मण तत्काल चन्द्रनखा का तिरस्कार कर देते हैं। अपना शरीर क्षत-विक्षत करके, वस्त्र आदि फाड़ करके चन्द्रनखा खरदूषण के पास पहुँचती है। स्वामी खरदूषण! वन में आये दो कुमारों ने अपने बेटे शम्भू कुमार को मार डाला, मेरे वस्त्र फाड़ डाले और मेरा तन क्षत-विक्षत कर दिया। ये तो अच्छा हुआ मेरा शील खण्डित नहीं हुआ। मैंने जैसे-तैसे शील की रक्षा की और आपके पास आई हूँ।

स्त्री चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं,
देवो न जानाति कुतो मनुष्यः।

स्त्री के चरित्र को कोई नहीं जान सकता है, मन में क्या है? वचन में क्या है? तन में क्या है? खरदूषण सोचता है जिसने मेरे पुत्र को मारा, वह अवश्य बलवान होना चाहिए। रावण चन्द्रनखा का भाई है, इसलिए खरदूषण ने रावण को संदेश भेज दिया। खरदूषण राम-लक्ष्मण से युद्ध करने आता है। दूर से ही हाथियों-घोड़ों की आवाजें, खनखनाती तलवारों की आवाजें सुनकर लक्ष्मण कहते हैं- भैया! भैया! देखो, कोई शत्रु दल सामने से आ रहा है। राम कहते है- लक्ष्मण! तुम यहीं ठहरो। तुम सीता की रक्षा करना, मैं युद्ध के लिए जाता हूँ।

भैया! मेरे रहते आपको कष्ट उठाना पड़े, छोटे भाई के रहते बड़े भाई कष्ट उठाये,

ये कैसे सम्भव है? भैया! मैं युद्ध के लिए जाता हूँ। लक्ष्मण सागरावर्त धनुष और चन्द्रहास तलवार लेकर तैयार हो जाते हैं। भैया! मुझे आपकी आवश्यकता होगी तो सिंहनाद का संकेत करके बुला लूँगा।

राम-लक्ष्मण का खरदूषण से युद्ध होना

लक्ष्मण आगे बढ़ते हुए शत्रु दल के सम्मुख पहुँचते हैं। विराधित राजा को यह मालूम चलता है कि खरदूषण राम-लक्ष्मण से युद्ध करना चाहता है तो राजा विराधित सेना लेकर लक्ष्मण के पक्ष से युद्ध करने पहुँच जाता है।

वहाँ युद्ध शुरू होता है। खरदूषण अग्नि बाण चलाता है तो लक्ष्मण जल वर्षा का बाण चलाते हैं, खरदूषण अँधकार का बाण चलाते हैं तो लक्ष्मण सूर्य की रोशनी वाला बाण चलाते हैं, खरदूषण नाग का बाण चलाते हैं तो लक्ष्मण जवाब में गरुड़ बाण छोड़ते हैं। लक्ष्मण ने कई बार अपने बाणों से खरदूषण को रथ से उतार दिया, इस तरह लक्ष्मण के बाण खरदूषण के लिए कष्टदायी होते हैं।

अपनी बहन के पति की सहायता के लिए लंकापति रावण युद्धक्षेत्र की ओर बढ़ रहा होता है तभी मार्ग में देखता है, एक सुंदर युवती सुंदर पुरुष के साथ बैठी है। रावण सोचता है यदि मैं इस सुंदरी को नहीं पा सका तो मेरा जीवन निष्फल हो जायेगा। ये सुंदर युवती मुझे नहीं मिली तो मैं अपने प्राण दे दूँगा। इस सुंदरी को प्राप्त करने के लिए यदि मैं इस पुरुष के साथ झगड़ा करता हूँ तो मेरा अपराध होगा और युद्ध भी लड़ना पड़ेगा। रावण अनेक प्रकार की विद्याओं को जानने वाला था। एक हजार से अधिक विधाएँ उसने बचपन में ही सिद्ध कर ली थी। रावण ने हरण करने वाली विद्या को याद किया और हरण विद्या रावण को बतलाती है। यहाँ पर जो पुरुष बैठा है उसका भाई लक्ष्मण युद्ध में गया है और इसे बोलकर गया है कि मेरे सिंहनाद के संकेत पर आप युद्धक्षेत्र में आ जाना। हमें यह युक्ति अपनानी चाहिये ताकि सुंदरी अकेली रह जायेगी और हरण करने में आसानी होगी। वह रावण सिंहनाद विद्या को याद करता है, विद्या उपस्थित

होती है। रावण आदेश देता है – तुम युद्धक्षेत्र से सिंहनाद करते हुए राम! भैया राम! का उच्चारण करो।

युद्धक्षेत्र की ओर से भैया राम! भैया राम! का सिंहनाद सुनकर राम कहते हैं– सीता! भैया लक्ष्मण पर कोई संकट आ पड़ा है, मेरा भाई विपत्ति में है। मुझे तत्काल जाना चाहिए अन्यथा कुछ अनहोनी हो सकती है। सीता कहती है– स्वामी! आप जाइये और देवर लक्ष्मण की सहायता कीजिये।

रावण द्वारा सीता का हरण करना एवं जटायु द्वारा सीता की रक्षा का प्रयत्न करना

राम युद्धक्षेत्र की ओर शीघ्रता से बढ़ते हुए जा रहे हैं। इधर दुष्ट, पापी, दुराचारी रावण घात लगाये हुये है। रावण पराई स्त्री के हरण के लिए विमान नीचे उतारता है और विद्या के बल से, छल के बल से सीता को विमान में बैठाकर चलने लगता है तभी जटायु पक्षी सीता की रक्षा करने के लिए रावण के विमान का पीछा करने लगता है (वाल्मीकि रामायण में रावण को भेष बदलकर भिक्षु रूप में सीता का हरण करते हुये बताया है।)

राम को युद्धस्थल में देखकर लक्ष्मण कहते हैं– भैया! आप यहाँ कैसे? आप सीता भाभी को अकेली छोड़कर क्यों आये? भैया! मैंने तो आपको कोई संकेत नहीं किया। आप यहाँ से शीघ्र लौट जाओ। राम वहाँ से लौटकर आते ही देखते हैं कि सीता वहाँ नहीं है। सीता कहाँ है? इतना कहकर राम मूर्छित होकर गिर पड़ते हैं।

उधर रावण सीता को विमान में बैठाकर ले जा रहा है। जटायु पक्षी सीता की रक्षा के लिए अपनी चोंच के कई प्रहार रावण पर करता है और रावण को घायल भी कर देता है। पर पक्षी तो पक्षी ही था। जटायु पक्षी में जितनी शक्ति थी, जितनी भक्ति थी, जितना साहस था उसने उतना प्रयास किया लेकिन पापी रावण की तलवार के प्रहार के सामने जटायु बुरी तरह घायल होकर जमीन पर गिर पड़ा। रावण सीता को लेकर आगे बढ़ता

है कि रत्नजटी नामक विद्याधर आवाज सुनता है। हे राम आप आओ, भैया लखन आप आओ। रत्नजटी देखता है कि रावण ने किसी की स्त्री का हरण कर लिया, वह बोलता है- दुष्ट रावण! रुक जाओ, किसी की अबला को लेकर भाग रहे हो। तेरे जैसे पापी इस संसार में जीवित नहीं रह सकते। रत्नजटी की विद्या रावण के सामने नहीं चल पाती और रावण सारी विद्याएँ छीन लेता है।

लक्ष्मण भी युद्धक्षेत्र से आकर देखते हैं- भैया मूर्छित पड़े हैं, सीता भी नहीं है, जटायु पक्षी भी नहीं है। भैया! भैया! भैया राम! उठो। लक्ष्मण जल के छींटे राम के मुख पर डालते हैं। भैया! उठो। राम उठते हैं, लक्ष्मण से कहते हैं- लखन! लगता है कोई दुष्ट सीता को हरकर ले गया है। जब मैं यहाँ लौटा तो सीता यहाँ नहीं थी। लक्ष्मण कहते हैं- भैया! अब आँसू बहाने की आवश्यकता नहीं है, हमें माता सीता को ढूँढ़ने का प्रयत्न करना चाहिए। अभी वो दुष्ट ज्यादा दूर हीं गया होगा। चलो, हम खोजते हैं माता सीता कहीं न कहीं मिल जायेगी।

राम-लक्ष्मण कभी पर्वत से, कभी चट्टानों से, कभी गुफाओं से, कभी वृक्षों से, कभी लताओं से, कभी सरिताओं से, कभी वन के पशु-पक्षियों से पूछते चले जा रहे हैं- मेरी सीता कहाँ है? हमारी सीता किस ओर गई है? उन्हें सीता कहीं पर भी दिखाई नहीं देती तो राम आँखों से आँसू बहाते हैं और कहते हैं- क्या कहेंगे लोग? राम जैसा पराक्रमी अपनी स्त्री की सुरक्षा नहीं कर पाया। मेरे माता-पिता क्या सोचेंगे? राम सीता को वन में ले तो गया पर उसकी सुरक्षा नहीं कर सका। राम के लिए सीता प्राणों से प्यारी थी। सीता शीलगुण से सम्पन्न राम के लिये सदा आज्ञाकारिणी थी। सीता भोजन परोसती तो राम के लिए माँ की तरह हो जाती। पूजा-भक्ति करते समय बहिन की भूमिका निभाती। इसलिए सीता का सहारा अब नहीं होने से राम काफी दु:खी हो गये।

जटायु पक्षी का उपचार एवं समाधिमरण

लक्ष्मण भी खोजते-खोजते सबसे पूछते हुये चले आ रहे हैं। आपने मेरी भाभी माँ

को देखा क्या? क्या मेरी भाभी माता सीता यहाँ से गई है? जाते-जाते लक्ष्मण देखते हैं, जटायु पक्षी घायल अवस्था में पड़ा है। देखो भैया! भैया यहाँ देखो। इधर आओ! राम, घायल जटायु से सीता के बारे में कुछ भी नहीं पूछते हैं, अपनी भुजाओं से उठाकर गोद में ले लेते हैं। हे पक्षीराज! तुम्हें ये क्या हुआ? जटायु तुम्हें किसने घायल किया? कौन पापी है जिसने तुम्हारी ये दशा की? राम लक्ष्मण से कहते हैं- पक्षीराज का उपचार करो। वृक्षों की औषधियाँ, जड़ी-बूटियाँ लाकर जटायु पक्षी को लगाते हैं, पर पक्षीराज की थोड़ी ही आयु शेष देखकर राम सोचते हैं अब पक्षीराज का मरण सन्यास पूर्वक मरण हो तो इसका अगला भव सुधार जायेगा।

तेरी छत्रच्छाया भगवन्! मेरे शिर पर हो।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।

जिनवाणी रसपान करूँ मैं, जिनवर को ध्याऊँ।
आर्यजनों की संगति पाऊँ, व्रत-संयम चाहूँ।।
गुणीजनों के सद्गुण गाऊँ, जिनवर यह वर दो।
मेरा अन्तिम-मरण-समाधि, तेरे दर पर हो।।1।।
तेरी छत्रच्छाया.....

परनिन्दा न मुँह से निकले, मधुर वचन बोलूँ।
हृदय तराजू पर हितकारी, सम्भाषण तौलूँ।।
आत्म-तत्त्व की रहे भावना, भाव विमल भर दो।
मेरा अन्तिम-मरण-समाधि, तेरे दर पर हो।।2।।
तेरी छत्रच्छाया.....

जिन शासन में प्रीति बढ़ाऊँ, मिथ्यापथ छोड़ूँ।
निष्कलंक चैतन्य भावना, जिनमत से जोड़ूँ।।

जन्म–जन्म में जैन धर्म, यह मिले कृपा कर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।3।।
तेरी छत्रच्छाया.....

मरण समय गुरु, पाद–मूल हो सन्त समूह रहे।
जिनालयों में जिनवाणी की, गंगा नित्य बहे।।
भव–भव में सन्यास मरण हो, नाथ हाथ धर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।4।।
तेरी छत्रच्छाया.....

बाल्यकाल से अब तक मैंने, जो सेवा की हो।
देना चाहो प्रभो! आप तो, बस इतना फल दो।।
श्वास–श्वास, अन्तिम श्वासों में, णमोकार भर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।5।।
तेरी छत्रच्छाया.....

विषय कषायों को मैं त्यागूँ, तजूँ परिग्रह को।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ता जाऊँ, नाथ अनुग्रह हो।।
तन पिंजर से मुझे निकालो, सिद्धालय घर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।6।।
तेरी छत्रच्छाया.....

भद्रबाहु सम गुरु हमारे, हमें भद्रता दो।
रत्नत्रय संयम की शुचिता, हृदय सरलता दो।।
चन्द्रगुप्त सी गुरु सेवा का, पाठ हृदय भर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।7।।
तेरी छत्रच्छाया.....

अशुभ न सोचूँ, अशुभ न चाहूँ, अशुभ नहीं देखूँ।
अशुभ सुनू ना, अशुभ कहूँ ना, अशुभ नहीं लेखूँ।।
शुभ चर्या हो, शुभ क्रिया हो, शुद्ध भाव भर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।8।।
तेरी छत्रच्छाया.....

मेरे चरण कमल द्वय, जिनवर! रहे हृदय मेरे।
मेरा हृदय रहे सदा ही, चरणों में तेरे।।
पण्डित–पण्डित मरण हो मेरा, ऐसा अवसर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।9।।
तेरी छत्रच्छाया.....

मैंने जो जो पाप किए हों, वह सब माफ करो।
खड़ा अदालत में हूँ स्वामी, अब इंसाफ करो।।
मेरे अपराधों को गुरुवर, आज क्षमा कर दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।10।।
तेरी छत्रच्छाया.....

दु:ख नाश हों, कर्म नाश हों, बोधि–लाभ वर दो।
जिन गुण से प्रभु आप भरे हो, वह मुझमें भर दों।।
यही प्रार्थना, यही भावना, पूर्ण आप करो दो।
मेरा अन्तिम–मरण–समाधि, तेरे दर पर हो।।11।।
तेरी छत्रच्छाया.....

राम जानते थे कि यह पक्षी सम्यक् दृष्टि है। मनुष्य से ज्यादा सदाचारी, व्रती, धर्मपरायण है जो शाकाहारी भोजन करता है, रात्रि भोजन नहीं करता है। राम पक्षीराज से कहते हैं : हे पक्षीराज! **जिसने भी तुम्हें घायल किया तुम उसे क्षमा कर दो, उसके प्रति क्रोध मत रखना, कषाय मत रखना। कषाय करने से संसार बढ़ता जाता है। तुम**

उसको क्षमा कर दो। मुझसे अपराध हुआ हो तो मुझे भी क्षमा करना, सीता और लक्ष्मण को भी क्षमा करना। तुम संसार के प्राणीमात्र से क्षमा माँग लो। जीवन में जो पाप किये वो तो सब मुनि चरणों के गंधोदक में लोटने से धुल गये। आज तुम श्रद्धा के साथ णमोकार मंत्र का स्मरण करो। पूर्वभव में जब मैं पद्मरुचि सेठ था तब मैंने एक बैल को णमोकार सुनाया था। उसके प्रभाव से वह सुग्रीव राजा बना। हे पक्षीराज! ऐसा महामंत्र मैं आपको सुना रहा हूँ। तुम्हारी अंतिम श्वास महामंत्र के साथ गुजरेगी तो तुम्हारा जीवन एवं मरण सफल हो जायेगा।

णमोकार मंत्र सब बोलो, अंतर की अँखियाँ खोलो।
महामंत्र है प्राण का दाता, सुबह-शाम सब जप लो।।

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ।

णमोकार सुनते-सुनते जटायु पक्षी की मृत्यु हो जाती है और पंचम स्वर्ग में ब्रह्मदेव हो जाता है।

अशोक वाटिका में सीता

रावण सीता को अशोक वाटिका में ले जाता है और कहता है- हे देवी! तू मुझे स्वीकार कर ले, मैं तुम्हें अठारह हजार रानियों में पटरानी बनाऊँगा। सीता कहती है- **पापी! खबरदार, जो तूने मुझे स्पर्श किया तो, मेरे शील के प्रभाव से अभी यहाँ भस्म हो जायेगा।** रावण अनेक प्रकार के भय और प्रलोभन सीता को दिखाता है। सीता! तुमने मेरा वैभव नहीं देखा, तुम महल में चलकर लंकापति का वैभव देखो। राम-लक्ष्मण भिखारी की तरह वन-वन भटकने वाले भूमिगोचरी के साथ क्यों रहती हो? सीता कहती है- **मेरे शरीर के हजारों टुकड़े कर दिये जायें तब भी मैं राम को छोड़कर किसी अन्य को स्वीकार नहीं कर सकती। चक्रवर्ती इन्द्र स्वयं क्यों न आ जाये? लेकिन मैं राम को छोड़कर किसी दूसरे को नहीं अपना सकती।** सिंहनी की तरह सीता के शब्द सुनकर रावण काँप जाता है।

षष्ठम पर्व

सीता हरण एवं खोज

राम-लक्ष्मण द्वारा सीता की खोज

जिन्होंने क्षमा भाव के द्वारा क्रोध को जीत लिया है, संतोष के द्वारा लोभ को जीत लिया है, सरलता के द्वारा छल-कपट को जीत लिया है, सत्य के द्वारा असत्य को जीत लिया है, अपरिग्रह के द्वारा परिग्रह को दूर कर दिया है, ऐसे अनन्त गुणों के पुञ्ज श्रीराम के गुणों को गिनना मेरे द्वारा असम्भव है और मैं उनकी कथा कहने जा रहा हूँ, ये मेरी मूर्खता की पहली निशानी है। गुरु उपहार, करें स्वीकार-

दण्डक वन में रावण आया, सीता लखकर मोह सताया।
छलकर सीता लंका लाया, राम हृदय अति शोक समाया।।

जटायु पक्षी की मृत्यु के पश्चात्, श्रीराम सीता की खोज में पुनः लग जाते हैं। सीता कहाँ है? सीता कहाँ है? अत्यन्त विह्वलता, आँखों में आँसू, बिखरे हुए केश, न भोजन की सुध, न पानी की सुध। वह खोज में चले जा रहे हैं। वाल्मीकि जी लिखते हैं, चलते-चलते उन्हें मार्ग में नूपुर, कुण्डल प्राप्त होते हैं। उन्हें उठाकर लक्ष्मण से कहते हैं- भैया लखन! ये कुण्डल सीता के लग रहे हैं, ये नूपुर सीता के जान पड़ते हैं। लक्ष्मण कहते हैं :

नाहं जानामि केयूरं, नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे तैव जानामि, नित्यं पदयोः वंदनात्।।

भैया राम! ये नूपुर, ये कुण्डल किसके हैं मैं नहीं जानता? विस्मय हो सकता है, जो लक्ष्मण वनवास की अवधि में भाभी सीता के साथ रहे, पर उनके कुण्डल को, नूपुर को नहीं जान सके। लक्ष्मण कहते हैं- पर हाँ भैया! मैं ये जो चरणों की अँगूठी (बिछिया) को जान रहा हूँ, ये सीता माँ की ही है क्योंकि मैंने प्रतिदिन माता सीता के चरणों की वन्दना की है। कितने महान् आदर्श पुरुष हैं लक्ष्मण, जिन्होंने चरणों से ऊपर दृष्टि नहीं डाली। अपनी भाभी के प्रति इतना उच्च आदर्श, इतनी उच्च मर्यादा, इतनी विनय, इतनी नम्रता ये महान् आदर्श हैं भारतीय संस्कृति के। यदि वर्तमान समय में भाभी के

प्रति देवर द्वारा इतना सम्मान हो जाये तो उस घर–परिवार में आज ही स्वर्ग की स्थापना हो जाये।

राम–सुग्रीव मिलन

आगे खोजते हुए जाते हैं कि एक नगर में राजा सुग्रीव रहता है, सुग्रीव के एक सुन्दर स्त्री सुतारा थी। साहसगति विद्याधर था, वह सुतारा पर मोहित था। एक बार साहसगति सुग्रीव की अनुपस्थिति में नकली सुग्रीव बनकर महल में प्रवेश कर गया। सुतारा तो आवाज से पहिचान गई, पर मंत्री नहीं पहिचान पाये। नकली सुग्रीव महल के भीतर है और असली सुग्रीव महल के बाहर है। असली सुग्रीव सोचते हैं, क्यों न सहायता के लिए श्रीराम– लक्ष्मण की शरण ली जाये। वह असली सुग्रीव, श्रीराम के चरणों में पहुँचता है और निवेदन करता है– हे राम! मेरी स्त्री को, मेरे महल को सहसगति विद्याधर ने हड़पने की कोशिश की है। कृपया आप मेरी रक्षा करें। राम लक्ष्मण को आज्ञा देते हैं, कहते हैं– इनकी सहायता करो। लक्ष्मण एक जैसे दो–दो सुग्रीव देखकर विस्मय में पड़ जाते हैं, कि मैं किसकी सहायता करूँ? और लक्ष्मण श्रीराम के पास वापस लौट आते हैं। पर श्रीराम की विद्या के सामने नकली सुग्रीव की विद्या पलायन कर जाती है और श्रीराम साहसगति को पराजित कर देते हैं। सुग्रीव को पुन: राजा बना देते हैं। सुग्रीव श्रीराम से कहते हैं– हे स्वामी! मैं सात दिनों में माता सीता का पता लगा लूँगा और वचन देता हूँ ऐसा नहीं हुआ तो मैं अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा। श्रीराम कुछ आश्वस्त होते हैं। इस तरह सुग्रीव और श्रीराम की मित्रता का पहला हाथ आगे बढ़ा।

रत्नजटी ने बताया सीताहरण का व्रतांत

सुग्रीव सीता की खोज में निकलते हैं। आगे कम्बूद्वीप पर्वत के नीचे घायल वृद्ध व्यक्ति पड़ा हुआ था। सुग्रीव ने देखा, यह घायल व्यक्ति क्यों पड़ा है? सुग्रीव ने पूछा – आप कौन हैं? उसने कहा– मैं विद्याधर शिरोमणि रत्नजटी हूँ, मुझे लंकाधिपति, त्रिखण्डी रावण ने घायल कर दिया। रावण एक स्त्री का हरण करके ले जा रहा था। उस

समय मैंने बचाने की कोशिश की थी, बदले में रावण ने मुझे घायल कर दिया। वह स्त्री राम! राम! राम पुकार रही थी। इतना सुनते ही सुग्रीव सोचते हैं, कुछ रास्ता दिख रहा है। वह रत्नजटी को लेकर श्रीराम के पास पहुँचते हैं। रत्नजटी, श्रीराम को सारा वृत्तान्त सुनाता है, श्रीराम उसका उपचार करते हैं। श्रीराम और लक्ष्मण विचार करते हैं, लंका कहाँ है, किधर है? वहाँ के नगरवासी सोचते हैं, ये दोनों कैसे मूर्ख बालक हैं, जो त्रिखण्डी, चार हजार अक्षौहिणी प्रमाण सेना का धारी उस रावण से अपनी सीता वापस लेने की सोच रहे हैं। लक्ष्मण कहते हैं– आप तो मात्र इतना बता दो कि लंका कहाँ है? वहाँ के नागरिक कहते हैं– बालकों! क्यों शेर के मुख में प्रवेश कर रहे हो? क्यों नाग के मुख में मेंढकों की तरह प्रवेश कर रहे हो? लक्ष्मण– क्या इस गाँव में इसी तरह के निकम्मे लोग रहते हैं? ऐसे कायर लोग इस भारत भूमि में कहाँ से पैदा हो गये? यदि आप जानकारी रखते हो तो मात्र इतना बता दो कि वह लंका नगरी किधर है? वह त्रिखण्डी हो, चाहे शतखण्डी हो। मैं उस रावण के खण्ड–खण्ड करके रहूँगा। लक्ष्मण की ऐसी साहसपूर्ण वाणी सुनकर वहाँ के लोग थर–थर काँपने लगते हैं।

लक्ष्मण के द्वारा कोटि शिला का उठाया जाना

विद्याधर जाति में वृद्ध व्यक्ति जामवन्त था। वह जामवन्त राम–लक्ष्मण को आदरपूर्वक कहता है– हे स्वामी! ये बात सत्य है। कोई इस संसार में सदा के लिए नहीं रहता है, अत : किसी को किसी का दिल नहीं दुखाना चाहिए। रावण ने जो आपके प्रति किया, उसने ऐसा करके उचित नहीं किया। अगर बिना युद्ध किये सीता मिल जाये तो सर्वोत्तम उपाय होगा। जामवन्त कहते हैं– प्रभो! मैंने पूर्व में जैन मुनिराज के मुख से सुना है, जो कोटिशिला को अपने हाथों से उठा लेगा, वह नियम से रावण का वध कर सकता है। लक्ष्मण कहते हैं– जामवन्त जी! देर किस बात की है? कहाँ है कोटिशिला? मैं कोटिशिला को उठाऊँगा। लक्ष्मण आगे–आगे चलते हैं और उत्साह लेकर मैं रावण का वध करूँगा। इस तरह लक्ष्मण बात–बात में अधिक उत्साहित हो जाते हैं। कोटिशिला एक पर्वत है, जहाँ से अनेकों मुनियों ने तप करके मोक्ष को प्राप्त किया है। श्रीराम–

लक्ष्मण कोटिशिला की पूजा करते हैं, तत्पश्चात् लक्ष्मण उस कोटिशिला को पल भर में अपनी भुजाओं से उठा लेते हैं। यह देखकर सबको विश्वास हो जाता है कि **ये दोनों सामान्य बालक नहीं, ये तो इस जगत् के पालक हैं।** सुग्रीव कहते हैं– हे राम! हमें युद्ध चाहिए या सीता चाहिए। राम कहते हैं– हमें युद्ध नहीं, हमें सीता चाहिए। हमें युद्ध से कोई प्रयोजन नहीं है। यदि कोई उत्तम दूत को लंका भेजा जाये और शांति के साथ सीता प्राप्त हो जाये तो यही उत्तम होगा। ऐसा संदेश परम हितैषी, सेवा परायण हनुमान को प्राप्त होता है। हनुमान तत्काल श्रीराम की सेवा में आते हैं। जैसे कोई बालक को माँ आता देखकर दोनों भुजाओं से उठाकर गले लगा लेती है, उसी प्रकार श्रीराम हनुमान को अपने हृदय से लगा लेते हैं। हनुमान श्रीराम की कुशलक्षेम पूछते हैं और कहते हैं– प्रभो! ये जो जीवन है, इसमें मैंने सदा सत्य का साथ दिया है। मैंने कभी शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया है और आज मुझे अपनी विद्या और बुद्धि का उपयोग करने का अवसर मिला है। कहो! मेरे लिए क्या आज्ञा है? श्रीराम अपने हाथ की मुद्रिका देते हुए कहते हैं– हनुमान! तुम लंका जाओ और सीता को खोजकर संदेश दो कि यह मुद्रिका राम ने स्मृति के रूप में भेजी है। मैं जानता हूँ कि सीता ने अन्न–जल का त्यग कर दिया होगा। तुम सीता से कहना, वो अपने प्राणों की रक्षा के लिए यत्न करे क्योंकि **शरीर धर्म साधना का निमित्त है** और भोजन के बिना शरीर नहीं चल सकता। हे हनुमान! श्रीराम की आज्ञा से सीता को भोजन ग्रहण करने को कहना।

हे सीता! तुम्हें याद होगा कि वंशस्थल पर्वत पर कुलभूषण और देशभूषण मुनिराजों के उपदेश को सुना था। गुप्ति और सुगुप्ति मुनिराजों को आहार भी दिया था, इत्यादि अनेक संस्मरण राम कह देते हैं।

लो मुद्रिका राम की, सीता को दो जाय।
उनसे लो चूड़ामणि, दे दो हम को आय।।

राम का संदेश लेकर हनुमान का लंका जाना एवं सीता को राम का संदेश देना।

आज्ञा ले चल दिये हनुमान। हनुमान का विमान आकाश में बहुत वेग से आगे बढ़ता जाता है। हनुमान देखते हैं एक जंगल में अग्नि लगी हुई है, और आकाश से ही देखते हैं कोई उपसर्ग हो रहा है। थोड़ा नीचे आते हैं और देखते हैं दो मुनिराज बैठे हैं और अग्नि जल रही है। हनुमान विद्या के प्रभाव से जल वर्षा कर देते हैं, कुछ ही पलों में वन की अग्नि शांत होती है और दोनों मुनियों का उपसर्ग दूर हो जाता है। पुन: आगे बढ़ते हैं। अचानक उनका विमान एक स्थान पर रुक जाता है। देखते हैं यह विमान क्यों रुक गया? सामने शाली विद्या के माध्यम से रावण ने कोट तैयार कर रखा था, उसके आगे कोई जा नहीं सकता था। हनुमान भी विद्याधर थे, अनेकों विधाएँ उनके पास थी। उन्होंने अपनी विद्या के प्रभाव से उस कोट को चूर-चूर कर दिया।

हनुमान जानते थे कि लंका में सीताजी को इधर-उधर ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं है, वे सीधे ही विभीषण के पास पहुँचते हैं क्योंकि विभीषण धर्ममूर्ति, न्यायमूर्ति, नीति संवाहक है, वो मुझे सीता का संकेत अवश्य दे देंगे। ज्यों ही हनुमान विभीषण के पास पहुँचते हैं, विभीषण उन्हें गले लगा लेते हैं। हनुमान कहते हैं- आपका ज्येष्ठ भाई रावण बड़ा बुद्धिमान, हजारों विद्याओं का स्वामी, त्रिखण्डी है, लेकिन वह भूमिगोचरी, नारायण, बलभद्र इन दो बालकों की अनुपस्थिति में वहाँ से अष्टम बलभद्र, अयोध्यापति श्रीराम की पतिव्रता स्त्री सीता का हरण करके लंका में ले आया है। विभीषण कहते हैं- हनुमंत! ये तुम क्या कह रहे हो? क्या रावण ने ऐसा अनुचित कार्य किया? हनुमान कहते हैं- आप शीघ्रता से माता सीता का पता कीजिये। विभीषण कहते हैं- लंका में गुप्त स्थान वाटिका है, हो सकता है देवी सीता को वहीं रखा गया हो। हनुमान वहाँ से प्रस्थान कर अशोक वाटिका में पहुँच जाते हैं। हनुमान वानर का रूप धारण करके वृक्ष पर बैठ गये। ऐसा देख कर सैनिक इधर-उधर भाग जाते हैं, सीता अकेली रह जाती है और उसी वृक्ष से राम के द्वारा दी गई मुद्रिका सीता जी की झोली में डाल देते हैं। सीता

मुद्रिका पाकर कहती है- प्रभुराम, प्रभुराम, प्रभुराम कहाँ हैं आप? जो भी राम का संदेश लेकर आया हो, वह सामने उपस्थित हो।

हनुमान सीता के सामने आते हैं और कहते हैं-

पवनपुत्र हनुमान कहाऊँ, सत्य धर्म पर बलि-बलि जाऊँ।
किशकिंधापुर से आया हूँ, राम मुद्रिका मैं लाया हूँ।।

सीता कहती है- मेरे प्रभु श्रीराम कहाँ हैं? देवर लक्ष्मण कहाँ हैं? वो दोनों सुरक्षित तो हैं? वे दोनों स्वस्थ तो हैं? हनुमान कहते हैं- 'हे माता! श्रीराम ने आप पर पूर्ण विश्वास रख कर कहा है कि आपने जो बिछोह के कारण अन्न-जल त्याग की प्रतिज्ञा ले रखी है, वह शीघ्र छोड़िये और भोजन ग्रहण कीजिये। प्रभु ने कहा कि शरीर धर्म का साधन है, आप अपने प्राणों की रक्षा कीजिये। सीता हनुमान से सारा वृत्तान्त सुनती है और हनुमान कहते हैं- हे देवी! आप मेरे कन्धों पर बैठ जाओ, मैं आपको श्रीराम के पास ले चलता हूँ।

यदि नारी रखती नहीं, मर्यादा का ध्यान।
भारत में होता नहीं, नारी का सम्मान।।

सीता कहती है- हे पवनसुत! बिना राम की आज्ञा के मैं अन्य किसी के साथ नहीं जा सकती, मैं पर- पुरुष को स्पर्श नहीं कर सकती। सीता शीलवती थी और अपनी मर्यादा जानती थी। हनुमान चकित हो जाते हैं कि इतने गहरे संकट के पश्चात् भी जो सदा के लिए स्मरण में शीलव्रत लिए है, धन्य है देवी सीता। राम ने कहा था यह मुद्रिका दे देना, सो मैंने आपको दी है और कहा था लौटते समय सीता से चूड़ामणि रत्न ले आना। वह चूड़ामणि रत्न जो वन में आपको यक्ष ने दिया था, वह श्रीराम ने स्मृति रूप से मँगाया है। सीता वह चूड़ामणि रत्न हनुमान को दे देती है। तत्काल हनुमान वहाँ से त्रिखण्डी रावण के पास पहुँचता है। रावण के सुभट सैनिक हनुमान को पकड़ लेते हैं। हनुमान कहते हैं- हे द्वारपाल! जब आपके स्वामी ने किसी की स्त्री चुराई हो, तब तुमने

इस रावण को दण्ड क्यों नहीं दिया? रावण कहता है- हनुमान! लगता है तूने उन बालकों का नमक खा लिया, तभी उन भूमिगोचरी की सहायता करने पहुँच गया। हनुमान कहते हैं- हे त्रिखण्डी! तू अपने अभिमान को छोड़ दे, कभी कोई विद्याधर तीर्थंकर नहीं बनता। राम-लक्ष्मण भूमिगोचरी हैं तो क्या हुआ? सब तीर्थंकर भूमिगोचरी ही होते हैं, वे सब मोक्ष जाते हैं। रावण कहता है- इस दूत को नगर से बाहर निकाल दो। हनुमान कहते हैं- हे रावण! यदि तूने राम की सीता को वापस नहीं किया तो तेरा ये त्रिखण्डीपना तेरे खण्ड-खण्ड करा देगा। सुनते ही रावण कुपित हो जाता है। हनुमान को और अधिक सैनिक पकड़ लेते हैं। लेकिन हनुमान तो बलशाली थे, उनके थोड़ा धक्का देने पर सैकड़ों सैनिक गिर जाते हैं। सैनिकों ने हनुमान को अग्नि से जलाने का प्रयास किया, पर हनुमान तो ज्वालामालिनी विद्या जानते थे। उन्होंने लंका को ही अग्नि के सुपुर्द कर दिया और सारी लंका धू-धूकर जलने लगी।

वापिस आकर हनुमान के द्वारा राम को सीता का सब समाचार सुनाया जाना एवं सीता का चूड़ामणि राम को अर्पित करना।

हनुमान वहाँ से निकलकर शीघ्र ही श्रीराम के पास आ जाते हैं। श्रीराम कहते हैं- वीर हनुमान! तुम मेरे अनुज लक्ष्मण जैसे हो, आओ मेरे हृदय से लग जाओ। हनुमान कहते हैं- यह चूड़ामणि रत्न, माता सीता ने आपके लिए प्रदान किया है। राम कहते हैं- सीता ने और क्या संदेश दिया है? हनुमान कहते हैं- प्रभु! माता को अन्न-जल त्याग किये ग्यारह दिन बीत गये। मैंने, विभीषण ने और विभीषण की अनेक रानियों द्वारा बहुत निवेदन करने पर भोजन-जल ग्रहण किया। माता सीता आपका वियोग और ज्यादा नहीं सह सकती। हे राम! मैंने रावण को बहुत समझाया कि सीता को वापस श्रीराम को लौटा दे, पर **विनाश काले विपरीत बुद्धि।** मैंने ही नहीं, विभीषण ने भी अनेक बार समझाने का प्रयत्न किया, पर वो नहीं माना। इतना सुनकर लक्ष्मण अचानक खड़े हो जाते हैं और कहते हैं- भैया! आप मुझे आज्ञा दो, मैं उस त्रिखण्डी के खण्ड-खण्ड कर

दूँगा। राम कहते हैं– शांत लखन! शांत! ये धर्मयुद्ध है, इसमें छल नहीं होता। धर्मयुद्ध न्याय–नीति से किया जाता है।

विराधित, सुग्रीव, रत्नजटी, हनुमान, सीता का भाई भामण्डल इत्यादि अनेक शक्तिशाली राजा राम के साथ हो जाते हैं। श्रीराम सबके साथ समुद्र तट पर पहुँच जाते हैं। हनुमान सोचते हैं, मैं तो वायु मार्ग से लंका पहुँच जाऊँगा। अन्य विद्याधर भी अपनी विद्याओं से लंका पहुँच जायेंगे। लेकिन सभी सेना, रथ आदि कैसे निकलेंगे? ये सोचकर उस समय के कुशल अभियंता नल–नील को याद करते हैं।

नल–नील उपस्थित होकर कहते हैं– हनुमान! कौन से सेतु का निर्माण करना है? इतने बड़े सेतु का निर्माण कोई साधारण कार्य नहीं है। हनुमान कहते हैं– आप तो चुने हुए शिलाखण्ड और पत्थर ले आइये, बाकी काम मैं करता हूँ। नल–नील और बाकी सेना पत्थर और शिलाखण्ड लाते हैं। हनुमान उन पर राम–राम लिखते जाते हैं और उन्हें समुद्र के पानी में छोड़ते जाते हैं। पत्थर भी आपस में मिलकर तैरने लगते हैं।

पत्थर पर लिखते रहे, राम नाम हनुमान।
पत्थर सेतु बन गये, जय–जय–जय श्रीराम।।

*****

सप्तम पर्व

राम-रावण युद्ध

सेतु निर्माण एवं श्रीराम का लंका गमन

कुशल अभियन्ता नल और नील के नेतृत्व में बड़ी-बड़ी शिलाएँ और पत्थर लाये जाते हैं और हनुमान उन शिलाओं को समुद्र में डालते जाते हैं। श्रीराम ने देखा ये क्या हो रहा है? ये सब चमत्कार कैसे हो रहा है? ये तो पत्थर पानी में तैर रहे हैं। हम इस स्थान पर पहली बार आये हैं, ऐसा तो नहीं कि इस क्षेत्र के पत्थर पानी में तैरते हो। राम के मन में भाव जगा कि मैं भी पत्थर को समुद्र के पानी में डालूँ तो क्या मेरे द्वारा डाला गया पत्थर भी तैरेगा? राम के मन में संदेह था कि मैं पत्थर डालूँ और पत्थर डूब जाये? राम ने एक पत्थर अपने हाथ में ले लिया लेकिन किसी ने मुझको देखा तो नहीं और राम वहाँ झाड़ियों के बीच छिप जाते हैं। हनुमान ने राम को यह सब करते देख लिया। प्रभु राम! हमारा काम आप क्यों कर रहे हैं? हनुमान! हमारी शक्ति, हमारा बल अच्छा होने से ये काम शीघ्र सम्पन्न हो जायेगा। हनुमान ने मना कर दिया, नहीं प्रभु! आप ऐसा न करें। निषेध में आकर्षण होने से राम की जिज्ञासा और बढ़ गई। राम ने आगे बढ़ते हुए इधर-उधर देखा और पत्थर पानी में डाल दिया। तभी हनुमान कहते हैं- देख लिया, देख लिया। राम कहते हैं- हनुमान! रुको, हनुमान! किसी से कुछ मत कहना। हनुमान कहते हैं- प्रभु! मुझे जल्दी जाना है, मैं जा रहा हूँ, मैं संदेशा देने जा रहा हूँ। मैं आज आपकी नहीं सुनूँगा, मैं तो अवश्य कहूँगा, मैं यह संदेशा देकर अभी आता हूँ। राम कहते हैं- हनुमान! किसी से कुछ मत कहो। देखो! मेरा अपयश होगा तो इसमें सभी का अपयश होगा। एक बात मेरी मान लो, किसी से कुछ मत कहो। हनुमान के नहीं मानने पर राम कहते हैं- हनुमान! चलो, ये बताओ सब से क्या कहोगे? क्या संदेश दोगे? हनुमान कहते हैं- स्वामी! मैं यही कहूँगा, जिसको श्रीराम ने छोड़ा वह डूब गया। हनुमान का संदेश सुनकर राम कहते हैं- हनुमंत! धन्य हो तुम, धन्य है तुम्हारी शिक्षा। जैसे पानी मिले दूध में से हँस दूध-दूध ग्रहण कर लेता है और पानी छोड़ देता है वैसे ही हँस की भाँति तुम उत्तम पुरुष हो। हनुमान तुम महापुरुष हो।

इधर समुद्र पर पुल का निर्माण हो चुका है। लक्ष्मण आते हैं– भैया! अब देर किस बात की? मुझे शीघ्र ही रावण को परास्त करने जाना है। भैया राम! जल्दी कीजिए, अपनी पूरी सेना तैयार है। रावण के पास चार हजार अक्षौहिणी प्रमाण सेना है तो श्रीराम के पास दो हजार अक्षौणी प्रमाण सेना है। जब राम वन में आये थे तब राम–लक्ष्मण दो ही थे पर राम के प्रेम–वात्सल्य के कारण उनकी इतनी बड़ी सेना हो गई। **जहाँ ईर्ष्या होती है वहाँ ह्रास होता है और जहाँ प्रेम–वात्सल्य, क्षमा गुण होते हैं वहाँ लाभ, उन्नति होती है।**

उस पुल से सेना का लंका गमन होता है, सभी श्रीराम की सेना उत्साह, उमंग से तलवार–गदायें घुमाते हुए चलते हैं।

रामजी की सेना चली श्रीराम जी की सेना चली

जय–जय–जय श्रीराम.....

पद्म चरित्र के अनुसार राम की समस्त सेना विद्या के द्वारा आकाश मार्ग से लंका में प्रवेश करती है। श्रीराम की सेना लंका के युद्धक्षेत्र में ठहर जाती है। श्रीराम कहते हैं– कोई दूत रावण के पास भेजना चाहिए। लक्ष्मण कहते हैं– आप दूत भेजने की बात करते हो, मैं अभी रावण का सिर लेके आता हूँ। राम कहते हैं– **लक्ष्मण! महापुरुष अनीति, अत्याचार को ना तो सहन करते हैं, ना स्वयं करते हैं। इस धर्मयुद्ध में रघुवंश की मर्यादा का ध्यान भी रखना है।**

राम के दूत का लंका जाना

श्रीराम के पक्ष से एक दूत लंका भेजा जाता है, दूत संदेश देता है : हे त्रिखण्डी रावण! अयोध्यापति श्रीराम ने संदेश दिया है, श्रीराम सम्पूर्ण सेना सहित युद्ध के लिए आ पहुँचे हैं। यदि तुम सीता को नहीं लौटाते तो तुम्हें प्राण भी देने पड़ेंगे और सीता भी देनी पड़ेगी। रावण कहता है– अरे दूत! तू कहाँ से आ गया? जो उन बालकों का गुणगान कर रहा है, मैं उन बालकों को एक प्रहार में स्वर्गलोग पहुँचा दूँगा। दूत पुनः

कहता है– हे रावण! तेरी मौत ही तुझे राम के पास ले जायेगी, जब कुत्ते की मौत आती है तो वह स्वयं शेर के सामने पहुँच जाता है। दूत वहाँ से आ जाता है, उधर रावण भी अपनी सेना तैयार करता है।

खबर हुई रावण तुरत वीर हुये तैयार,
रणभेरी बजने लगी सेना बेशुमार ।

रावण और विभीषण का वाक् युद्ध

रावण का भाई विभीषण दौड़ा–दौड़ा आता है। हे अग्रज भ्राता! आपका यह अनुज आपके चरणों में करबद्ध प्रणाम करता है। यह रत्नश्रवा का पुत्र आपके चरणों में प्रार्थना करता है कि आप पिता की मर्यादा को बनाये रखिए। आप सीता को विनय सहित, ससम्मान श्रीराम को लौटा दीजिए। हे भ्राता रावण! युद्ध करने से हमारा वंश विनाश को प्राप्त हो जायेगा। वहीं पर बैठा इंद्रजीत कहता है– हे विभीषण! तू रावण से छोटा है इसलिए तेरी बुद्धि भी छोटी है। क्या स्त्री रत्न को पाने के बाद पुनः कोई लौटाता है? विभीषण कहता है– इंद्रजीत! ऐसा मत कहो। जब पाप का उदय होता है तो राजा भी रंक हो जाता है, बादशाह भी भिखारी हो जाता है। तुम्हारे पिता देवी सीता को नहीं अपितु लंका को जलाने के लिए ज्वाला लाये हैं। जो सीता राम के लिए अमृत है, वही सीता रावण और समस्त लंका के लिए विष है। हे भ्राता लंकेश! ये विभीषण तुम्हारे चरणों में माथा टेकता है। अभी भी अवसर है और इस अवसर को मत चूको।

बीतने वाली घड़ी को कौन लौटा पायेगा,
इस धरा का इस धरा पर सब धरा रह जायेगा ।
खो दिया जो यह सुअवसर अन्त में पछतायेगा,
इस धरा का इस धरा पर सब धरा रह जायेगा ।।

रावण कहता है– विभीषण! छोटे मुँह और बड़े बोल, ये तुमने कहाँ से सीखा? शायद तू भी हनुमान से मिलकर राम की सहायता करने जाना चाहता है। अभी इसी समय लंका से निकल जा। रावण विभीषण को ठुकरा देता है। विभीषण कहता है– हे

दशानन! ज्ञात रहे, जिस पिता की संतान तुम हो उसी रत्नश्रवा की संतान मैं हूँ। यदि मैंने इस अन्याय का प्रतिशोध नहीं लिया तो मैं रत्नश्रवा का पुत्र नहीं।

विभीषण तीस अक्षौणी सेना लेकर श्रीराम के पास जाता है। लक्ष्मण दूर से देखकर कहते हैं– भैया! लगता है, सामने से शत्रु दल आ रहा है। हमें तैयार रहना चाहिए। राम कहते हैं–

छोटा–बड़ा कि कुछ काम कीजे, परन्तु पूर्वापर सोच लीजे।
यदि बिन विचारे जो काम होगा, कभी ना अच्छा परिणाम होगा।।

हो सकता है यह रावण नहीं हो, ये भी हो सकता है धर्ममूर्ति, न्यायमूर्ति विभीषण कुछ संदेश लेकर आया हो। तभी दूत संदेश लेकर आता है– श्रीराम! विभीषण आपका दर्शन करना चाहता है। लक्ष्मण कहते हैं– भैया! शत्रु पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। भैया! जलती हुई अग्नि पर, बहती हुई नदी पर, सींग वाले जानवरों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। राम विभीषण के लिए आज्ञा प्रदान करते हैं, विभीषण उपस्थित होता है– हे स्वामी! मैं विभीषण इस न्याय नीति सम्पन्न धर्मयुद्ध में आपकी सहायता करना चाहता हूँ। इस जन्म में आप मेरे स्वामी हैं और परभव के लिए अरिहंत भगवान मेरे स्वामी हैं।

एक अक्षौहिणी प्रमाण सेना में 21870 हाथी, 21870 रथ, 109350 पैदल सैनिक और 65610 घोड़े होते हैं, इस तरह राम की सेना में 4 करोड़ 52 लाख हजार हाथी थे और इतने ही रथ थे। राम की सेना में 21 करोड़ 87 लाख पैदल सैनिक थे। रावण की सेना श्रीराम की सेना से दोगुनी थी। **पुण्य कितना ही छोटा हो, पाप को नष्ट कर देता है। अग्नि ज्वाला कितने ही दिनों से जल रही हो पर एक जल का कलश भी अग्नि बुझाने में समर्थ होता है।**

युद्ध प्रारम्भ

दोनों पक्ष की सेना जोश और उल्लास के साथ आमने–सामने होती है। रावण की

सेना से हस्त और प्रहस्त नामक दो योद्धा लड़ने को आगे बढ़ते हैं। कुछ ही पलों के युद्ध में नल और नील ने प्रहार से हस्त-प्रहस्त को स्वर्गलोक पहुँच दिया। रावण की सेना से मारीच और माली युद्ध के लिए आगे आते हैं। महान् शक्ति के धारक, ब्रह्मचर्य के साधक हनुमान अपनी तपस्या, विद्या और शक्ति के बल से मारीच और माली को धरती पर गिरा देते हैं। फिर वे दोनों कभी नहीं उठते हैं। रावण की सेना से वज्रोदर ललकार करते हैं- हनुमान! तुमने मारीच और माली को गिराया, अब तुम मेरा सामना करो। हनुमान कहते हैं- हे वज्रोदर! करो प्रहार। वज्रोदर ने प्रहार किया और हनुमान ने उसी के प्रहार से प्राणान्त कर दिया। अब रावण की सेना से जम्बूमाली युद्ध करने आता है और अत्यन्त क्रोध के साथ हनुमान पर प्रहार किया लेकिन जैसे चूहे बिल्ली का कुछ बिगाड़ नहीं पाते उसी तरह जम्बूमाली हनुमान का कुछ नहीं बिगाड़ पाया। हनुमान के एक प्रहार से जम्बूमाली धरती पर चित्त हो गया, उसके प्राण निकल गये।

शाम हुई दिन छिप गया घोर अँधेरा छाय।
बन्द लड़ाई हो गई प्रात: लड़े फिर आय।।

श्रीराम युद्ध में समय पर युद्ध विराम कर देते थे और सूर्यास्त के पहले सभी सैनिकों को भोजन सम्पन्न कराते थे। क्योंकि महापुरुष सब कुछ कर लेने पर भी अपनी मर्यादा नहीं खोते हैं। व्यक्ति को हजार कार्य छोड़कर दिन में भोजन कर लेना चाहिए।

रात्रि में रावण की सेना में पता लगता है कि हस्त, प्रहस्त, मारीच, माली, वज्रोदर, जम्बूमाली जैसे शक्तिशाली योद्धा मारे गये। रावण क्रोधित होकर बोलता है- जिसने मेरे शक्तिशाली योद्धाओं को मारा है, मैं उस हनुमान के टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा।

अगले दिन के युद्ध में रावण और हनुमान एक-दूसरे पर अनेकों प्रहार करते हैं। रावण हनुमान पर गदा से तेज प्रहार करता तो हनुमान अपनी शक्ति से उस प्रहार को निष्फल कर देते। यदि रावण बाण चलाता तो हनुमान उसे बीच में ही रोक लेते। अब रावण अत्यन्त क्रोध के साथ हनुमान पर टूट पड़ता है। लेकिन रावण का टूट पड़ना वैसे

हुआ जैसे सर्प के मुख में मेंढक, क्योंकि राम की सेना में विराधित, नल, नील, सुग्रीव, भामण्डल, समुद्र, हँस आदि योद्धा एक साथ मिलकर रावण की सेना पर टूट पड़ते हैं।

रावण की सेना से कुम्भकर्ण ने तीसरे दिन आकर युद्ध किया। विभीषण की तरह कुम्भकर्ण भी धर्मनिष्ठ था। विद्याधर होने से कुम्भकर्ण एक विद्या भेजता है। वह विद्या जाते ही अंगद, हनुमान, भामण्डल आदि को लग जाती है, ये तीनों जमीन पर गिर पड़ते हैं और निद्रामग्न हो जाते हैं। इस तरह युद्ध के मध्य में इनको नींद आ गई। सुग्रीव ने देखा, राम की सेना के महाशक्तिशाली योद्धा हनुमान, अंगद, भामण्डल निद्रामग्न हैं। तत्काल सुग्रीव ने अपनी जागरण विद्या के माध्यम से तीनों को निद्रा मुक्त कर दिया। पुन: सभी युद्ध करने के लिए तैयार हो जाते हैं।

रावण का पुत्र इंद्रजीत भी युद्ध में आ जाता है। महाशक्ति का धारक इंद्रजीत, सुग्रीव और भामण्डल से लड़ता है। रावण का दूसरा पुत्र मेघनाद भी युद्ध करने आ जाता है। भामण्डल और मेघनाद में महाभयंकर युद्ध होता है। कुम्भकर्ण हनुमान के विरुद्ध अग्नि बाण चलाते हैं तो हनुमान जल बाण चला देते हैं। कुम्भकर्ण अँधकार बाण छोड़ता है तो हनुमान सूर्य बाण छोड़कर पुन: प्रकाश कर देते हैं। देखते ही देखते हनुमान ने अपने रथ से उछलकर कुम्भकर्ण को अपनी शक्तिशाली भुजाओं से जकड़कर नागपाश से बाँध दिया। लक्ष्मण कुम्भकर्ण को उठाकर अपने सैन्य दल के कटक में ले जाते हैं। रावण दल के सैनिक सोचते हैं कुम्भकर्ण राम के दल में पहुँच चुका है, अब क्या होगा?

इधर इंद्रजीत के मेघ बाण चलाते ही घनघोर जलवर्षा होने लगी। तभी प्रत्युत्तर में सुग्रीव ने पवन बाण चला दिया। पूरे बादल साफ हो गये। रावण ने देखा, कुम्भकर्ण कहाँ है? इंद्रजीत कहाँ है? मेघनाद कहाँ है? कहाँ है सब?

शक्ति लगने से लक्ष्मण का मूर्छित हो जाना

पाँचवें दिन पूरी शक्ति के साथ रावण ने लक्ष्मण पर प्रहार कर दिया और उस शक्ति के प्रभाव से लक्ष्मण धरती पर गिरकर बेहोश हो जाते हैं। सायंकाल जब युद्ध बंद होता

है तो राम दौड़े-दौड़े आते हैं। भैया लक्ष्मण! भैया लखन! क्या हुआ? क्या हुआ तुम्हें? दुर्भाग्य से मैं माता-पिता को छोड़कर जंगल आया। मैंने सीता को खो दिया और आज युद्ध में तुम भी चले जाओगे तो ये मुख किसको दिखाऊँगा? उठो लक्ष्मण! उठो! अपने राम भैया की एक आवाज पर दौड़ा-दौड़ा आने वाला लक्ष्मण क्या हो गया तुझे? आज भी वैसी ही तत्परता दिखाओ लखन!

राम दोनों भुजाओं से लक्ष्मण को उठाकर कटक में पहुँचते हैं। तत्काल वहाँ एक वृद्ध व्यक्ति आता है और राम से मिलने के लिए कहता है। वृद्ध व्यक्ति कहता है- हरिषेण चक्रवर्ती की पुत्री अनंगसरा जो बहुत सुंदर थी। अनंगसरा पर मोहित होकर विद्याधर हरण करके ले जाता है और बाद में जंगल में छोड़ देता है। वह अनंगसरा तीन हजार वर्ष तक जंगल में तपस्या करती है। तपस्या के प्रभाव से उसके भीतर अनेक शक्तियाँ आ जाती हैं। अनंगसरा मरण की बेला से पूर्व सन्यास ले लेती है। अचानक एक दिन अजगर अनंगसरा को लील (निगल) लेता है। अनंगसरा का गर्दन से नीचे का पूरा शरीर अजगर के मुँह में होता है। मात्र गर्दन से ऊपर का भाग बाहर रहता है। अनंगसरा का अंतिम समय निकट ही था तभी उसके पिता हरिषेण चक्रवर्ती वहाँ आते हैं और पुत्री को बचाने के लिए धनुष उठाने की चेष्टा करते हैं। तभी अनंगसरा कहती है- **पिताजी! आपने मेरे प्रति महान् उपकार किये। अगर आप अजगर को मार भी दोगे तो अब मेरे प्राण नहीं बचने वाले। अत: आपसे विनय है कि आप अजगर को अभयदान दे दो। आप इस सर्प को क्षमा कर दो।** चक्रवर्ती सोचता है अब बेटी का अंतिम वचन पूरा करना चाहिए। अनंगसरा के उस अभयदान के प्रभाव से वह अगले भव में द्रोणगिरी के राजा द्रोणमेघ और रानी द्रोणमती की पुत्री विशल्या होती है।

विशल्या द्वारा शक्ति का निवारण

पूर्वजन्म की तपस्या और अजगर को अभयदान के प्रभाव से अनेक शक्तियाँ उसे प्राप्त होती हैं। विशल्या के स्पर्श से औषधियाँ और जड़ी-बूटियाँ अनेक रोगों को दूर करने वाली हो जाती हैं। एक बार नगर में बीमारी फैल गई तो विशल्या के हाथ से जल

पिलाने से नगर के सभी रोगी स्वस्थ हो गये। इस बात की जगह-जगह चर्चा हो जाती है। यदि द्रोणगिरी के राजा की पुत्री विशल्या अपने हाथ में जल लेकर लक्ष्मण पर छिड़क दे तो आपके भ्राता लक्ष्मण स्वस्थ हो सकते हैं। राम की आज्ञा लेकर द्रुतगामी हनुमान द्रोणगिरी पर पहुँचकर सारा वृत्तान्त राजा द्रोणमेघ को बताते हैं और विशल्या से निवेदन करते हैं। राजा द्रोणमेघ की आज्ञा से हनुमान विशल्या को लेकर आते हैं। विशल्या अपने हाथ से जल का छिड़काव लक्ष्मण पर करती है और लक्ष्मण की चेतना पुन: आ जाती है। इस तरह विशल्या के हाथों के जल के छिड़कने से लक्ष्मण पूर्ण स्वस्थ हो जाते हैं।

इधर लंकेश! रावण को पता लगता है कि लक्ष्मण की चेतना फिर से आ गई है। मंदोदरी आदि रानियाँ रावण को समझाने के लिए आती हैं कि- हम आपसे अपने पति की भिक्षा चाहती हैं। आप अभी भी राम को सीता वापस लौटा दें तो शायद राम तुम्हें क्षमा कर देंगे। रावण कहता है- मैं सीता को वापस कर दूँ, ये कैसे हो सकता है? असम्भव है ये। जब तक मुझमें प्राण हैं मैं झुक नहीं सकता। मैं उस भूमिगोचरी से कभी क्षमा नहीं माँग सकता। यदि राम संधि करना चाहता है तो सीता के बदले तीन हजार कन्याएँ भेज सकता हूँ। दूत संदेश लेकर राम के पास पहुँचता है- राम! आप सीता की चिंता छोड़ दीजिए और बदले में तीन हजार कन्याएँ ले लीजिए। राम कहते हैं- मैंने इस संसार में मात्र सीता को पत्नी माना है और शेष स्त्रियाँ माता और बहिन के समान हैं। मुझे मात्र सीता से प्रयोजन है। अन्य स्त्रियों से मेरा क्या प्रयोजन? दूत! हीरे के बदले में काँच के टुकड़े नहीं लिये जाते हैं। दूत वहाँ से लौटकर रावण के पास जाता है- आपने जो कन्याएँ भेजी थी उनमें से राम को कोई स्वीकार नहीं हैं।

युद्ध का सातवाँ दिन

रावण के महल में कई अपशकुन होते हैं। जैसे- गिद्ध पक्षियों की आवाजें आना, काँच के बर्तन इत्यादि टूटकर गिरना, कुत्ते-बिल्ली की रोने की आवाज आना, कबूतरों

का शिखर पर अवाज करना, घोड़े अपने पैर पीछे ले जा रहे हैं। रावण महल में है और छत्र नीचे गिर जाता है, चंवर ढोरने वालों के हाथ से चंवर गिर रहे हैं। मंदोदरी समझाती है– आप युद्ध में न जायें। देखो! कितने अपशकुन हो रहे हैं। रावण कहता है– मुझे आप क्षमा कर दीजिये। मैं युद्ध में जीतकर ही लौटूँगा। आज मेरा अंतिम युद्ध होगा जिसमें मैं जीतूँगा, नहीं तो मृत्यु को प्राप्त करूँगा।

लक्ष्मण द्वारा रावण का मरण

आज के युद्ध में रावण महाशक्ति के साथ आता है। राम की समस्त सेना भी महाशक्ति के साथ आती है। हनुमान, भामण्डल महायोद्धा के रूप में उपस्थित हैं। राम और रावण का युद्ध चल रहा है, तभी लक्ष्मण आते हैं– हे रावण! परस्त्री को चुराने वाला। तू मेरे भाई पर आक्रमण कर रहा है, आ पहले मुझसे युद्ध कर। रावण कहता है– क्यों शेर के मुख के सामने आ रहा है? और लक्ष्मण कहते हैं– रावण! तू इस चक्र का अभिमान मत कर। चक्र तो कुम्भकार के पास भी होता है, वह मिट्टी के बर्तन बनाता है। उस कुम्भकार के चाक से बड़ा तेरा चक्र नहीं है।

रावण कहता है– लक्ष्मण! अभी भी मौत से बच जा अन्यथा ये चक्र तुम्हारा सिर काट देगा। जब भी मैंने ये चक्र चलाया है ये पुन: खाली नहीं लौटा है। लक्ष्मण कहते हैं– अरे दुष्ट! तू परस्त्री चुराने वाला। ऐसे चोर पुरुष चिल्लाते रहते हैं। गरजने वाले बरसते नहीं हैं, यदि तुझमें पराक्रम है तो चक्र चला। रावण लक्ष्मण पर चक्र चलाता है। सभी राम, हनुमान, भामण्डल, अंगद चक्र आदि को रोकने का प्रयास करते हैं। पर चक्र को रोक नहीं पाते हैं। सूर्य की हजारों किरणों से सहित चक्र को लक्ष्मण के नजदीक आता देख, राम भूमि पर गिर पड़ते हैं। राम की सेना के महायोद्धा घबरा जाते हैं। अब क्या होगा? चक्र लक्ष्मण के समीप आ रहा है, और समीप आ रहा है। देखते ही देखते चक्र घूमते-घूमते लक्ष्मण की तीन परिक्रमा लगाता है और लक्ष्मण के दाहिने हाथ की अँगुली पर आ खड़ा होता है।

लक्ष्मण उसी चक्र को शक्ति के साथ रावण पर चला देते हैं। वह चक्र तीव्र वेग के साथ, हजारों मणियों की आभा सहित रावण का मस्तक उड़ाता हुआ चल दिया वापिस लक्ष्मण के पास। ऐसा दृश्य देखकर रावण की सेना में भगदड़ हो जाती है, अपने प्राण बचाने के लिए रावण के सैनिक इधर–उधर भागने लग जाते हैं। तभी श्रीराम कहते हैं– अभयदान! अभयदान! अभयदान! अभयदान के शब्द सुनकर रावण की सेना में अपार शांति, संतोष होता है, सभी एकत्रित होते हैं। उन्हें विश्वास होता है कि राम कोई क्षति नहीं पहुँचाएँगे। इस तरह रावण रूपी पाप का अंत होता है।

*****

अष्टम पर्व

लंका में
राम-सीता का दर्शन

रावण का अंतिम संस्कार

करोड़ों सूर्य एक साथ उदय होकर जिनके रूप को नहीं देख सकते, इन अनन्त गुणों के पुञ्ज, अरस, अरुप, अव्याबाध, मर्यादा पुरुषोत्तम, निराकार, परमात्मा श्रीराम को कोई जुगनू देखना चाहे तो वह हास्य का पात्र होगा। मैं जो यह रामकथा कहने जा रहा हूँ, मेरी मूर्खता की पहली निशानी है।

ये जीवन संसार की अखिल सम्पदाओं से अमूल्य है। विश्व में हीरा, पन्ना, रत्न, जवाहरात, मणि-माणिक इन सबकी कीमत तो पता चल सकती है, लेकिन समस्त विश्व की सम्पूर्ण सम्पदा के बदले सिकन्दर को भी ये जीवन नहीं मिल पाया, अर्थात् ये जीवन अनमोल है।

प्रकृति का कण-कण, समय का प्रत्येक क्षण उपदेश देता है। सूर्य उदय को प्राप्त हुआ है, तो अस्त को भी प्राप्त होगा। प्रात:काल हुआ है तो सायंकाल भी नियम से होगा। गर्मी के बाद बरसात, बरसात के बाद ठण्डी (शीत) अवश्य आयेगी। विश्व में कोई सदा के लिए नहीं रहता, केवल सिद्ध परमात्मा के। कितना ही धन-वैभव तुम पा जाओ, पर एक सुई की नोक तुम्हारे साथ जाने वाले नहीं हैं। सोने की लंका, एक लाख पूत, सवा लाख नाती जिसके परिवार में हो, ऐसा तीन खण्ड का विजेता, विश्वविजेता रावण जिसका नाम सुनकर काँप उठते थे। लेकिन . . .

जब तक तेरे पुण्य का, बीता नहीं करार।
तब तक तुझको माफ है, औगुण करो हजार।।

पाप का घड़ा एक दिन फूट ही जाता है। पारा कभी पचता नहीं है। जब तक पुण्य का उदय था, रावण की सभी विद्याएँ साथ निभा रही थी। और ज्योंही पुण्य क्षीण हुआ रावण की समस्त विद्याएँ दूर भाग गईं। रावण युद्धभूमि में मृत अवस्था में पड़ा हुआ है, मंदोदरी आदि रानियाँ विलाप कर रही हैं। विभीषण का भाई के प्रति मोह जाग जाने से

करुण विलाप कर रहा है और विचार कर रहा है- ये भैया न्याय-नीति के मार्ग पर चलते तो आज ये अवस्था देखने को ना मिलती। माँ जिनवाणी, देव-शास्त्र-गुरु के अनुसार चलते तो आज मृत्यु तुम्हारे द्वार नहीं आती। राम विभीषण को सांत्वना देते हुए कहते हैं- **शोक करने से दुःख में वृद्धि होती है। अग्नि में ईंधन डालने से अग्नि और बढ़ती है,** अतः आप विलाप मत कीजिए। श्रीराम पद्म सरोवर के पास पहुँचते हैं और इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण, मेघनाद आदि भी पहुँचते हैं और रावण के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार करते हैं।

ना सोना साथ जाता है, ना चाँदी साथ जाती है।
कमाई-जिंदगी-दौलत, कभी ना साथ जाती है।।
जो मुट्ठी बन्द आया था, पसारे हाथ जाता है।
कहानी ये दशानन की, सही हालत बताती है।।

रावण की चिता धू-धू कर जलने लगती है। जलती हुई चिता को देखकर मंदोदरी आदि अठारह हजार रानियाँ वैराग्य को प्राप्त होती हैं और निकट केवली भगवान के पास जाकर संयास धारण कर लेती है। राम, कुम्भकर्ण से कहते हैं- जिसे जीतना था सो जीत लिया, तुमसे मेरी कोई बुराई नहीं है, मेघनाद! तुमसे मेरी कोई शत्रुता नहीं है। **मैं पापी से नहीं, पाप से घृणा करता हूँ।** पाप समाप्त हो चुका है, मैं तुम्हें बन्धन से मुक्त करता हूँ।

इन्द्रजीत, मेघनाद, कुम्भकर्ण और मन्दोदरी आदि का जिनदीक्षा धारण करना एवं निर्वाण प्राप्ति

इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण, मेघनाद कहते हैं- **आप बन्धन मुक्त करेंगे तो जिनेन्द्र की सेवा करेंगे और आप बन्धन मुक्त नहीं करेंगे तो आपकी सेवा करेंगे।** राम कहते हैं- **राजा से बढ़कर परमात्मा की सेवा होती है, धन्य है आप लोग जो आप में वैराग्य भाव जागा है।** तीनों बन्धन मुक्त होकर केवली भगवान के पास जाकर परम संयास जैनेश्वरी

दीक्षा धारण कर लेते हैं। जो जितना पाप कर सकता है, वो उतना पुण्य भी कर सकता है। तपस्या करते-करते उज्जैनी नगरी के पास रेवा नदी के तट पर बड़वानी है, उसे चूलगिरि के नाम से जाना जाता है। उस चूलगिरि पर परम ध्यान करते-करते एक दिन मुक्ति धाम को प्राप्त कर लेते हैं।

निर्वाण काण्ड में कहा-

बडवाणी-वर-णयरे दक्खिण-भायम्मि चूलगिरि-सिहरे।
इंदजिय-कुंभयण्णो णिव्वाण-गया णमो तेसिं।।12।। (निर्वाण काण्ड)

गिला मत करना किसी शैतान की तस्वीर से।
शैतानियत से इंसानियत की राह मिला करती है।।

राम-लक्ष्मण का लंका में प्रवेश एवं अशोक वाटिका में राम-सीता का मिलन

विभीषण कहते हैं- राम! आप लंका का राज्य स्वीकार करें, लंका के अधिपति आप ही हैं। पर श्रीराम लंका पर राज्य करने नहीं, मात्र सीता को लेने के उद्देश्य से लंका में प्रवेश करते हैं। प्रवेश करने पर शांतिनाथ जिनालय में जाकर भक्ति भाव से दर्शन करते हैं। कुछ दूरी पर अशोक वाटिका थी। अशोक वाटिका की तरफ बढ़ जाते हैं। राम-लक्ष्मण, विभीषण के साथ पीछे-पीछे और भी लोग आ रहे हैं। राम देखते हैं, सीता ध्यान में बैठी हुई है पर श्रीराम की थोड़ी सी आहट होते ही वाटिका के पेड़-पौधों, लताओं ने सीता को संकेत कर दिया है। सीता समझ जाती है कि मेरे प्राण प्यारे पति का आगमन हो चुका है। वह उसी धूल-धूसरित अवस्था में खड़ी हो जाती है। वह सीता आगे बढ़कर श्रीराम के चरणों से लिपट जाती है, सीता की आँखों से वात्सल्य की अश्रुधारा बह निकलती है, सभी लोग भक्ति भाव से मंगल गीत गाने लगते हैं।

राम रमैया गाये जा, प्रभु से लगन लगाये जा।

पतिव्रता, शीलतत्त्व सम्पन्न सीता आनन्द अश्रु से राम के चरण पखारती है, राम

सीता को हृदय से लगाते हैं। पुनः सीता श्रीराम के सामने सिर झुकाये खड़ी हो जाती है। लक्ष्मण नम्रीभूत होकर सीता को प्रणाम करते हैं, सीता उन्हें शुभाशीष देती है। श्रीराम पास में खड़े हुए हनुमान को विस्मय में देखकर कहते हैं– हनुमन्त! कौन से अतीत में खो गये? तुम तो बोल रहे थे कि अशोक वाटिका में लाल ही लाल पुष्प हैं पर यहाँ तो नजारा ही कुछ और है। हनुमान कहते हैं– स्वामी! मैं भी यह देखकर चकित हूँ कि मैंने आपसे जाकर कहा था अशोक वाटिका में लाल ही लाल पुष्प हैं, लेकिन यहाँ तो चम्पा, चमेली, गुलाब, केतकी, कमल अनेक प्रकार के पुष्प होने से सफेद, नीले, पीले, श्वेत कमल, लाल कमल, नील कमल आदि विभिन्न रंगों के पुष्प हैं। अब तो लाल रंग के पुष्प दिख ही नहीं रहे। हनुमान सोचते हैं, ये क्या हुआ? श्रीराम प्रभु से कहे मेरे वचन असत्य हो गये। तभी सीता बोलती है– स्वामी! इसमें हनुमान की कोई गलती नहीं है। जब हनुमान दूत के रूप में आये थे तब क्रोध और प्रतिशोध की ज्वाला से उनके नेत्र लाल थे, इसलिए उन्हें सारे पत्र-पुष्प लाल-लाल ही दिखाई दिये। राम कहते हैं– सुन लो लक्ष्मण! **जैसी दृष्टि स्वयं की होती है, वैसी ही सृष्टि हो जाया करती है।**

विभीषण राजप्रासाद में ले जाते हैं। रत्नश्रवा, सुमाली, माल्यवान सभी को लाने में विभीषण सहयोग करते हैं। श्रीराम को सम्मान सहित उच्चासन देते हैं। श्रीराम भगवान जिनेन्द्र की आराधना करते हुए अनेकों दिवस लंका में रहते हैं।

राम-लक्ष्मण-सीता का लंका में प्रवास

पुनः एक दिन राम, लक्ष्मण, सीता अशोक वाटिका में भ्रमण के लिए जाते हैं, वहाँ अचानक लक्ष्मण को क्या हो जाता है? लक्ष्मण बोलने लगते हैं– भैया राम! मैंने आपके लिए युद्ध किया, मैंने अपने प्राणों की बाजी लगाकर युद्ध जिताया और आप मेरा जरा भी ध्यान नहीं रखते। मैंने आपके लिए माँ को छोड़ा, पिताजी को छोड़ा, अयोध्या को छोड़ा। आपके लिए राजभवन को छोड़कर वन को स्वीकार किया। मुझे ऐसे भाई के पास अब नहीं रहना है, मैं अभी यहाँ से जाता हूँ। सीता कहती है– स्वामी!

लक्ष्मण को शांत क्यों नहीं करते? सबके सामने बड़े भाई का अनादर, ऐसे वचन उचित नहीं हैं, आप भैया लक्ष्मण को शांत कीजिए। राम जैसे-तैसे करके लक्ष्मण को शांत करते हैं। राम सीता से कहते हैं- जहाँ लक्ष्मण खड़े हैं, इधर की मिट्टी अपनी झोली में ले लो। सीता वहाँ की मिट्टी एक पोटली में ले लेती है। अब श्रीराम विभीषण के बगीचे में पहुँचते हैं। वहाँ पहुँचते ही लक्ष्मण कहते हैं- भैया! मैंने आज तक आपको पिता तुल्य माना। हे भैया! आज तक मैंने आपको पिता के समान आदर दिया। मेरी माँ ने कहा था, राम को पिता का तथा सीता को माता का स्थान देना। पर आज मुझसे बहुत बड़ा अपराध हो गया, आज मैंने आपको अपशब्द कह दिये, मैंने आपके लिए कठोर वचन कह दिये। हे भैया! मुझे क्षमा कर दो, मुझ पर क्षमा कर, उपकार करो। लक्ष्मण श्रीराम के चरणों में गिर जाते हैं, पर राम शांत रहे।

लक्ष्मण श्रीराम के चरणों में पड़े हैं, श्रीराम क्षमा नहीं करते। सीता मातृत्व शक्ति थी और माँ की ममता से बढ़कर किसी की ममता नहीं होती और सीता कहती है- स्वामी! भैया तो भैया ही होता है, छोटा तो छोटा ही होता है और **छोटों से गलती हो जाने पर बड़े भैया को इतना कठोर नहीं बनना चाहिए।** स्वामी! आप लक्ष्मण को क्षमा कर दीजिये। राम सीता से कहते हैं- सीता वो पोटली की मिट्टी कहाँ है? सीता इस मिट्टी को यहाँ डाल दो। मिट्टी डाल दी जाती है और लक्ष्मण को कहा जाता है कि उस मिट्टी पर खड़ा हो जाये। लक्ष्मण ज्यों ही उस मिट्टी पर खड़े होते हैं और कहते हैं- कैसा भैया? कहाँ का भैया? ऐसा भैया मैंने पूरी दुनिया में नहीं देखा। इतनी देर से क्षमा माँग रहा हूँ और क्षमा नहीं कर सकता। मुझे ऐसे भैया से कोई मतलब नहीं, जो क्षमा न कर सके। अरे इतनी देर में तो शत्रु भी क्षमा कर सकता है। सारे उपस्थित लोग देखते रह जाते हैं।

राम लक्ष्मण का हाथ पकड़कर बुलाते हैं और लक्ष्मण के सिर पर हाथ रखकर बोलते हैं- ये सब तुम नहीं बोल रहे हो, तो तुमको मैं क्या क्षमा करूँ? लक्ष्मण ये सब क्षेत्र का प्रभाव है, ये सब हमारे लिए संकेत है कि हम जैसे क्षेत्र में रहते हैं, वैसे परिणाम

हमारे हो जाते हैं। जिनालय में जाते ही परिणाम विशुद्ध हो जाते हैं और सिनेमाघर में जाने पर परिणाम विकृत हो जाते हैं।

आकाश मार्ग से नारद का अयोध्या में आना एवं माता कौशल्य के दुःख का कारण पूछना

अनेक प्रकार से बहुत सा समय श्रीराम का लंका में व्यतीत होता रहता है। एक बार नारद (जिन्हें वाल्मीकि रामायण में देवर्षि नारद कहा है) यात्रा के लिए निकले और नारद कई तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा करते हुए, आकाश मार्ग से अयोध्या नगरी में महल की छत पर विमान उतार लेते हैं। माँ कौशल्या छत से राह देख रही थी कि मेरा बेटा आज आयेगा, मेरा राम आज आयेगा। प्रतिदिन सूर्य उदय होता, माँ कौशल्या महल की छत पर आ जाती और सूर्यास्त तक वहीं बैठी रहती। इतनी भी सुध नहीं रहती कि भीषण गर्मी है और सूरज इतना तप रहा है, ये बरसात भिगो रही है, ये सर्दी चुभ रही है। वह कौशल्या माँ दिन भर छत पर बैठी राम की प्रतीक्षा करती रहती। ना दिन में भोजन होता, ना रात में नींद आती। नारद के आगमन से कौशल्या माँ की उम्मीद बढ़ गई। **जिस तरह बेटे की पीड़ा माँ समझ जाती है, जिस तरह शिष्य की पीड़ा गुरु समझ जाते हैं।** नारद कौशल्या माँ की विरह वेदना समझ जाते हैं। नारद कहते हैं- माँ! स्वामी दशरथ कहाँ है? कौशल्या कहती है- जब राम राजकार्य के योग्य हुए राजा दशरथ के मन में संन्यास का विचार आया और वे योगीराज के पास चले गये। वहाँ उन्होंने परम तपोधन, रत्नत्रय आराधक, महा-तपस्वी, महामुनि, बनकर साधना करने लग गये। नारद कहते हैं- राम-लक्ष्मण कहाँ है? नारद की बातों से, पूछे गये प्रश्नों से माँ कौशल्या को लग रहा था, जैसे कोई जले पर नमक छिड़क रहा हो। गरीबी और गीला आटा। कौशल्या माँ कहती है- पुत्र राम आज से लगभग चौदह वर्ष पूर्व वन के लिए गया है, पर आज तक आगमन का कोई संदेश नहीं मिला है। हाँ, बीच में संदेश मिला था कि युद्ध में पुत्र लक्ष्मण को शक्ति लग गई। उसके पश्चात् कोई संदेश नहीं मिला, छः वर्ष बीत गये। उस युद्ध के बाद कोई समाचार नहीं है। हे नारद जी! **गुरु कृपा जिस पर हो जाती है, वह**

सारे सुखों को पा जाता है। मुझे भी गुरु की तलाश थी, आप आकाशगामी और क्षुल्लक है। आपके लिए मैं कोई सेवा का अवसर तो नहीं दे सकती, लेकिन प्रार्थना अवश्य कर सकती हूँ। आप मेरी विरह वेदना को आत्म संवेदना में बदल सकें। मेरे दुःख को सुख में बदल सकें, जिससे यह कौशल्या धर्म ध्यान करती हुई अपने प्राणों का विमोचन कर सके। हे नारद जी! आप बेटे राम को उसकी माँ का मात्र संदेश दे दो, मुझे विश्वास है मेरा राम दूर भले ही गया हो लेकिन मेरे ह्रदय से दूर नहीं है। मुझे यकीन है **राम के ह्रदय में सीता का नहीं, कौशल्या के चरणों का निवास है,** आप मात्र यह संदेश दे दो। नारद धर्मात्मा पुरुष थे, कहते हैं- **मेरा धर्मात्मापना उसी में शोभित है जिससे मैं दुखियों का दुःख दूर कर सकूँ।** धर्मात्मा पर दुःख रहे, ये उचित नहीं है। माँ कौशल्या कहती है- आप अयोध्या पधारे हैं, कम से कम आहार-प्रसादी करके जाना। नारद कहते हैं- नहीं माँ कौशल्या! अभी नहीं, वापस आकर प्रसादी अवश्य लूँगा।

नारद का लंका पहुँचकर राम को माता कौशल्या का संदेश देना

नारद जी आकाश मार्ग से आगे बढ़ते जाते हैं। नारद जी का विमान समुद्र पार करते हुए लंका पहुँच जाता है। नारद को तो यही मालूम है कि लंका का राजा त्रिखण्डी रावण ही है लेकिन पहुँचते ही देखते हैं, त्रिखण्डी के सिंहासन पर ये दो बालक राम-लक्ष्मण सुशोभित हो रहे हैं। नारद कहते हैं- हे अयोध्यापति दशरथ के पुत्र मैं आपकी माँ कौशल्या का संदेश लेकर आया हूँ। राम नारद के सम्मान में यथायोग्य उच्चासन देते हैं। नारद कहते हैं- आप यहाँ खुशी से सिंहासन पर बैठे हैं, पर आप भूल गये हैं जिस माँ ने तुमको जन्म दिया, तुमको पाला, जिस माँ ने तुम्हारे लिए नौ माह की पीड़ा सहन की। **हे ज्येष्ठ पुत्र राम! यदि तुम ही अपनी माँ को भूल जाओगे तो कौन इस संसार में अपनी माँ को याद करेगा? हे राम! आपकी माँ ने मुझे भोजन का निवेदन किया, लेकिन मैं आपकी माँ के आँसू पीकर आया हूँ।** कौशल्या माँ छत पर बैठी-बैठी अश्रु बहाती रहती है, उसके मुख से एक ही बात निकलती है - मेरा बेटा आज आयेगा, मेरा

राम आज आयेगा। आपकी माँ काष्ठ के समान सूख गई है। हे राम! यदि आपने माँ से मिलने में शीघ्रता नहीं की तो शायद कौशल्या माँ के दर्शन फिर इस दुनिया को हो न सके। राम कहते हैं– नारद जी! ऐसा मत कहो, ऐसे वचन मत बोलो, मैं शीघ्र जाने की तैयारी करता हूँ, पर आप मेरी माँ के बारे में ऐसा मत कहो। राम–लक्ष्मण सीता अयोध्या जाने की तैयारी करते हैं।

विभीषण कहते हैं– श्रीराम! आप जा तो रहे हैं, पर अब आप त्रिखण्डी हैं, आप लंका के अधिपति हैं। राम कहते हैं– विभीषण जी! **माँ के चरणों से बढ़कर कोई सम्मान नहीं है।**

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गदापि गरीयसि।"

संसार के भौतिक पदार्थ माँ के चरणों के सामने तुच्छ हैं। आप मुझे अयोध्या गमन की आज्ञा (विदा) दें। विभीषण कहते हैं– प्रभु! मैं आपको विदा तो देता हूँ, पर मेरी आपसे विनय है। मैं आज ही माँ कौशल्या तक संदेश भिजा देता हूँ, राजा भरत जी को सूचित करा देता हूँ और आप यहाँ से पन्द्रह दिन बाद प्रस्थान करें। राम विभीषण में परम मित्रता हो चुकी थी। **जहाँ पर विचारों में पवित्रता होती है, वहाँ आपस में मित्रता हो ही जाती है** अत: राम विभीषण का प्रस्ताव स्वीकार कर लेते हैं। विभीषण संदेश के साथ हजारों सेवक अयोध्या के लिए भेज देता है।

राम के आगमन की पूर्व सूचना भरत को

विभीषण के सेवक आकाश मार्ग से अयोध्या के राजमहल के प्रवेश द्वार पर रुकते हैं। कौशल्या माँ इन सबको देखकर कहती है– मेरा बेटा आ गया, मेरा राम आ गया। पर राम कहीं नहीं दिखे तो कहती है– अरे! ये तो कोई और ही हैं। सभी सेवक, दूत सीधे भरत के पास पहुँच जाते हैं और कहते हैं– हे स्वामी भरत! आपके अग्रज भ्राता श्रीराम अयोध्या पहुँचने वाले हैं। ऐसा सुनकर भरत की खुशी का ठिकाना नहीं रहता, उनका

मन–मयूर नाच उठता है, उनका रोम–रोम पुलकित हो जाता है। भरत कहते हैं– शत्रुघ्न! चलो भैया राम को लेने चलते हैं। सेवक कहते हैं– भरत जी! अभी थोड़ा रुकिये, राम के आगमन का थोड़ा इंतजार और कीजिये। श्रीराम आज से सोलहवें दिन अयोध्या नगरी में प्रवेश करेंगे। भरत कहते हैं– क्या कह रहे हो, सोलहवें दिन? भैया राम को चौदह वर्ष वनवास में जितना कष्ट नहीं हुआ, उस कष्ट से कहीं अधिक मेरे लिए ये समय बीतेगा। भरत को रात की नींद में भी राम ही दिखाई देते हैं। भरत माँ कौशल्या के लिए संदेश लेकर जाते हैं, भरत कहते हैं– माता! भैया राम आ रहे हैं। माता कौशल्या कहती है– कहाँ है मेरा बेटा? कहाँ है राम? भरत कहते हैं– माता! भैया आज से ठीक सोलहवें दिन अयोध्या में प्रवेश करेंगे।

जिस प्रकार मुरझाये पौधे को जल मिल जाने से वह पुन: खिल जाता है, पुन: जीवन्त हो उठता है। उसी प्रकार राम के आगमन का संदेश पाकर माँ कौशल्या की उम्मीदें जीवन्त हो उठती हैं, माँ कौशल्या का रोम–रोम आनन्दित हो जाता है, जिस प्रकार डूबते को तिनके का सहारा मिला हो।

विभीषण के दूत कहते हैं– भरत जी! विभीषण जी की आज्ञा है कि अयोध्या का शृंगार लंका से पधारे सेवक ही करेंगे। भरत जी कहते हैं– मेरे भाई अयोध्या पधारे और शृंगार विभीषण करे, ये उचित नहीं है। भरत भाई के स्वागत के लिए तन, मन, धन और जीवन अर्पण कर सकता है। दूत कहते हैं– राम आपके भाई हैं, आपके लिए सदा भाई ही रहेंगे। विभीषण तो मात्र अंतिम सेवा का अवसर चाहते हैं, हो सकता है सेवा का अवसर पुन: ना मिले। अत: अयोध्या की साज–सज्जा के लिए विभीषण जी ने हजारों सेवक भेजे हैं, विभीषण और कोई दूसरे नहीं अपितु राम के परम मित्र हैं। इसलिए आप से विनती है मित्र के लिए अपना कार्य पूरा करने दीजिए। भरत विवश हो जाते हैं और सजावट शृंगार की अनुमति सेवकों के लिए प्रदान करते हैं।

अयोध्या में राम आगमन की तैयारियाँ

विभीषण विद्याधर होने से सम्पूर्ण वैभव के कारण स्वर्ण प्रासाद, रत्नमयी सीढ़ियाँ, अनेक प्रकार के महाद्वार, अनेक हीरे-जवाहरात के चोक, महलों के ऊपर महान्-महान् कलश, पद्मराग मणि, नीलमणि, अनेक रत्नों से अयोध्या नगरी को सुसज्जित कर देता है। अनेक प्रकार की मणियाँ महलों पर कांति देने लगती है।

पन्द्रह दिन व्यतीत हो जाते हैं और श्रीराम के आगमन की शुभ घड़ी आ चुकी है। विभीषण श्रीराम-लक्ष्मण-सीता पर पुष्प वृष्टि करता हुआ, उत्तम आरती करता हुआ और अनेक प्रकार से स्वागत करते हैं। श्रीराम, लक्ष्मण, सीता का अयोध्या आगमन होने से तीनों उमंग लिए हुए बड़े प्रसन्न हैं। सीता की सोच कितनी उत्तम है? वह यह नहीं कहती कि जिस सास ने अपमान कर दिया हो, फिर वहाँ क्यों जाना? अपितु कहती है- स्वामी! जल्दी चलिये, मुझे माताओं का शीघ्र दर्शन करना है।

*****

नवम पर्व

राम का अयोध्या आगमन

राम–भरत मिलन

राम के द्वारा सीता के लिए विशेष स्थानों का परिचय कराना

देखो सीता! ये वो चित्रकूट का झरना है, जिसमें हम पैर धोते थे। ये स्थान जहाँ हमने गुप्ति-सुगुप्ति मुनि को आहार दिये थे। ये वो जगह जहाँ हमने कुलभूषण-देवभूषण मुनि के दर्शन किये थे। यहाँ हमारा सम्यक् दृष्टि जीव जटायु पक्षी से मिलन हुआ था। राम का विमान चला जा रहा है। ये सम्मेदशिखर, ये बनारस।

राम को अयोध्या पहुँचने की इतनी उमंग थी कि उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा और तीव्र वेग से उनका विमान सुमेरू पर्वत के पास पहुँच जाता है। राम देखते हैं, ये क्या? ये इतना बड़ा पर्वत कहाँ से आ गया? जो सोने के समान चमक रहा है। तभी पीछे के विमान से हनुमान कहते हैं- प्रभु राम! आप अयोध्या से आगे निकल आये। अयोध्या नगरी तो पीछे ही छूट गई। राम विमान को अयोध्या की ओर ले चलते हैं, थोड़ी ही देर में सुसज्जित अयोध्या नगरी आ पहुँचते हैं। राम देखते हैं, भ्राता भरत स्वागत के लिए खड़ा है। राम-लक्ष्मण विमान से नीचे उतर रहे हैं। दोनों के एक-एक पैर के नीचे भरत अपने दोनों हाथ रख देते हैं। भरत अपना मस्तक उनके चरणों में रख देते हैं। राम-लक्ष्मण दोनों भरत को उठाकर हृदय से लगा लेते हैं। भरत भाभी सीता माता! के चरण छूता है, सीता उन्हें शुभाशीष देती है। अपार जनसमूह वहाँ पहले से ही उपस्थित होता है। चारों ओर प्रजाजन राम के आगमन पर मंगल गीत, स्वागत गीत गाते हैं। धन्य हैं राम, धन्य है सियाराम। जय-जयकारों के साथ राजमहल की ओर बढ़ते हैं।

अयोध्या के समीप आने पर भरत के द्वारा राम-लक्ष्मण-सीता का स्वागत करना। कौशल्या आदि चारों माताओं के चरण स्पर्श करना। माताओं द्वारा आशीर्वाद प्रदान करना।

अयोध्या के राजमहल के द्वार पर उनकी माताएँ प्रतीक्षा में खड़ी हैं। प्रतीक्षा की घड़ियाँ आज समाप्त हुई और श्रीराम ने आगे बढ़कर माँ के चरणों में मस्तक टेका। माँ

कौशल्या, राम को बाँहों में भरकर हृदय से लगा लेती है। कौशल्या माँ की आँखों से वात्सल्य की गंगा बहने लगती है। लक्ष्मण, सीता भी माताओं के चरणों में प्रणाम करते हैं, माताएँ उन्हें हृदय से लगाकर खूब आशीर्वाद देती हैं। माँ कौशल्या पुनः पुनः राम का मस्तक चूमती है- पुत्र राम! पुत्र लक्ष्मण! जुग-जुग जीओ, सद्धर्म पालन करो, सदा फलो-फूलो, विद्यावान हो, गुणवान हो, लक्ष्मीवान हो, रघुवंश के कुल को समृद्ध करो, कुल की परम्परा का निर्वाह करो। माताएँ उत्तम-उत्तम आशीर्वाद प्रदान करती हैं।

सीता के लिए चारों सास श्वास की तरह थी। जो काशी, मथुरा, वृंदावन, अयोध्या इन चारों धाम के समान थी। सीता सभी की चरण वंदना करती है। चारों माताएँ सीता के लिए आशीर्वाद देती हैं।

भरत कहते हैं- भैया राम! अयोध्या का राज सिंहासन आपकी प्रतीक्षा कर रहा है, आप शीघ्र चलें। राम कहते हैं- अयोध्या के राज सिंहासन की शोभा तुम हो, भ्राता भरत। नगरवासी आरती उतारने आते हैं तो राम कहते हैं- भ्राता भरत की आरती उतारो। भरत कहते हैं- भैया राम! मेरा जीवन तो नगरवासियों के द्वारा आरती उतारते-उतारते गुजर गया। आप सिंहासन पर विराजिये। वह भरत अनेक प्रकार से राम से विनय करता है। इस तरह कई दिन व्यतीत हो जाते हैं।

अयोध्या में कुलभूषण-देशभूषण, केवलियों का आगमन होना एवं भरत के द्वारा संन्यास ग्रहण करना

एक दिन माली आकर कहता है- दो मुनिराज पावन उपवन में आये हैं। मुनिराजों के आगमन से समस्त उपवन पुष्पों से सुगन्धित हो गया है। राम समझ गये कि कोई मुनिराज केवलज्ञानी हमारे नगर को पावन करने आ गये। श्रीराम अयोध्या में खबर पहुँचाते हैं कि आज हमारी अयोध्या के जन्म-जन्म के सातिशय पुण्य के उदय से केवलज्ञानी महा मुनिश्वर पधारे हैं। समस्त प्रजाजन उनके सदुपदेश को सुनने सूर्योदय के साथ चले।

राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न एवं सभी अयोध्यावासी मुनिराज के दर्शनार्थ जाते हैं। मुनि उपदेश में कहते हैं– **सोचो, जिनका मन मोह से ढका हुआ है वे व्यक्ति स्त्री, पुत्र, मित्र को अपना मानते हैं। जबकि आत्मा के सिवा संसार में कोई अपना नहीं है, आत्मा के सिवा दूसरे को अपना मानना मूर्खता की पहली निशानी है। अगर दीपक में तेल, बाती हो तो माचिस की तीली उसे प्रज्ज्वलित कर सकती है।**

भरत में वैराग्य की भावना कई जन्मों से थी। मुनिराज के उपदेश से भरत की वैराग्य भावना प्रस्फुटित हो गई। **कुलभूषण** मुनिराज का वह उपदेश भरत के हृदय दीपक में जो वैराग्य रूपी तेल था, उसमें संयम की ज्योति जलाने में माचिस की तीली का काम करती है।

वैराग्य आते ही, भैया राम! आज तक मैंने बहुत राज्य कर लिया। पिता की आज्ञा का पालन भी किया, आप मेरे अग्रज हैं। अब इस राज्य का पालन कीजिये। मेरे अंदर वैराग्य की भावना प्रस्फुटित हो रही है। संयास के बगैर मुक्ति सम्भव नहीं है। भैया! मैं संन्यास लेना चाहता हूँ। आज महामुनिराज के पावन सान्निध्य में परम संन्यास धारण करना चाहता हूँ।

राम समझाते हैं– भैया भरत! जब घर में भाई ही नहीं तो ये चक्र, ये अयोध्या, ये राज्य किस काम का? भ्राता भरत! तुम मत जाओ। अगर तुम संन्यास के लिए चले जाओगे तो मैं पुन: वन को चला जाऊँगा। भरत कहते हैं– भैया! पूर्व में आपके वनगमन के समय मैंने आपकी आज्ञा का पालन किया। आज आप अपने इस अनुज की बात मान लीजिये।

भरत का जन्मजात बालक की तरह संन्यास हो जाता है। भरत के वैराग्य को देखकर माँ कैकयी भी संन्यास ले लेती है। ऐसा दृश्य देखकर राम की आँखें छलक जाती हैं।

विद्याधर राजाओं द्वारा राम को राज्य सँभालने का निवेदन करना।

विद्याधर आदि, नगरवासी राम से निवेदन करते हैं– प्रभु आप अयोध्या का राजकार्य सँभालें। हम आपका राज्याभिषेक करना चाहते हैं। राम कहते हैं– मैं इस राज्य के संचालन की योग्यता नहीं रखता हूँ, मैं राज्य का संचालन कैसे कर पाऊँगा? मेरा भाई लक्ष्मण तीन खण्ड का स्वामी है, चक्ररत्न का धारक है और वह राजकार्य, राजनीति में दक्ष है। अत: ये राज्य लक्ष्मण को दिया जाये। सभी प्रजाजन लक्ष्मण के पास जाकर निवेदन करते हैं– स्वामी! श्रीराम की आज्ञा है आप अयोध्या का राजभार सँभालें। लक्ष्मण कहते हैं– क्या कभी गुरु के रहते हुए विद्यार्थी का अध्ययन कराना शोभा देता है? मैं स्वयं श्रीराम के पास चलता हूँ।

लक्ष्मण श्रीराम के पास आकर निवेदन करते हैं– हे अग्रज भ्राता! अयोध्या के सिंहासन की शोभा आपसे है, आप राज्य स्वीकार करें। राम कहते हैं– आप मेरे अनुज होने के साथ नारायण भी हैं।

कौन किसको समझाये? राम कहते लक्ष्मण के लिए राज्य दो, लक्ष्मण कहते भैया राम को राज्य दो। जब बच्चे रूठ जाये तो माता–पिता बच्चों को मना सकते हैं, पर जब माता–पिता ही रूठ जाये तो बच्चे क्या मनायेंगे? दोनों भाई परस्पर एक–दूसरे को राज्य देने की बात करते हैं।

आखिर में निर्णय लिया कि राम बलभद्र हैं और लक्ष्मण नारायण हैं। बलभद्र का सिंहासन राम के लिये और नारायण का सिंहासन लक्ष्मण के लिए दिया जाये। पूरे देश में, राष्ट्र में, राज्य में जगह–जगह राज्यतिलक की तैयारियाँ शुरू होती हैं। राज्यतिलक का मंगल दिन आता है। मंगलमय गीतों के साथ, अभिषेक के साथ राज्यतिलक का कार्य सम्पन्न होता है।

एक आर्यखण्ड और दो म्लेच्छ खण्ड के सम्पूर्ण वैभव की गणना की जाये तो राम के पास 42 लाख रथ, 6 करोड़ पैदल सैनिक, चार प्रमुख रत्न (हल, मूसल, रत्नमाला, गदा)। लक्ष्मण के पास सात रत्न (शंख, चक्र, खड्ग, दण्ड, नागसैया, कोस्तुभमणि) रहने के लिए प्रासाद कूट महल, बैठने वालों के लिए वैजयंती नामक बड़ी सभा। प्रत्येक ऋतु के अलग-अलग महल (ग्रीष्मऋतु के लिए जल की धारा करने वाला एक धारा मण्डप महल, वर्षा ऋतु के लिये अंभोज मण्डप नामक महल जिस पर पानी की एक बूँद भी न ठहरे। राम के राज्य में 50 लाख हल (एक हल में दो बैल जोतना पड़ता है) तो 100 लाख बैल और एक करोड़ गायें। इतना वैभव श्रीराम के राज्य का है।

राम कहते हैं- **हे समस्त प्रजाजन! आप लोगों की भावना का आदर रखते हुए इस राज्य सिंहासन को ग्रहण कर रहा हूँ।** ऐसे शब्द सुनकर समस्त प्रजाजन स्तब्ध हो जाते है कि आज सत्ता पाने के लिए असत्य का सहारा लिया जाता है। पर असली सत्ता तो सत्य के साथ प्राप्त की जाती है। श्रीराम के इतने पावन और उत्तम विचार पर प्रजाजन राम की जय-जयकार करते हैं। इस तरह राज्य करते हुये छः महीने व्यतीत हो जाते हैं।

किसी दिन सीता भवन में सुख से सो रही थी कि रात्रि के पिछले प्रहर में दो स्वप्न देखें।

सीता का स्वप्न दर्शन

प्रभात होने पर सीता शरीर सम्बन्धी क्रियाएँ करके पति के पास गई और पास बैठकर कर स्वप्नों का समाचार सुनाने लगी।

राम दोनों स्वप्नों को सुनकर बोले-हे सीते! अष्टापदों का युगल देखने से तू शीघ्र ही दो पुत्र प्राप्त करेगी। हे प्रिये! पुष्पक विमान के अग्रभाग में गिरना अच्छा नहीं है तथापि चिन्ता की बात नहीं है क्योंकि शान्तिकर्म तथा दान करने से पापग्रह शान्ति को प्राप्त हो जावेंगे।

सीता को तीर्थक्षेत्रों की वन्दना करने का दोहला उत्पन्न होना

सीता का मुँह कुम्हलाने (मुरझाने) लगता है, स्तनों का अग्रभाग काला पड़ जाता है। सीता का मन भोजन में नहीं लगता है। गर्भवती स्त्री को संतान उत्पत्ति के कुछ माह पूर्व विचार उत्पन्न होता है जिसे दोहला बोलते हैं। राम पूछते हैं– सीता! तुम्हारे लिए क्या दोहला हुआ है? सीता कहती है– स्वामी! मैं जिन मंदिरों के दर्शन करूँ। तीर्थ क्षेत्रों के दर्शन करूँ और तीर्थ क्षेत्रों पर स्थित मुनिराजों के दर्शन करूँ। राम कहते हैं– धन्य हो सीता! महापुण्यशाली पुत्र आपकी कुक्षी में आया होगा। उसी के प्रभाव से तुम्हारी तीर्थ क्षेत्रों के दर्शन की भावना हुई। पुण्यमात्मा संतान के आने से माँ के विचार महान् होने लगते हैं।

प्रजाजनों के द्वारा राम से सीता विषयक लोकनिन्दा का वर्णन करना

राम और सीता मंदिरों के दर्शनार्थ जाते हैं। सीता की दाहिनी आँख मंदिर में फड़कने लगती है। सीता सोचती है, आज कौन सा अशुभ होने वाला है? कौन सी घटना घटने वाली है? सीता अशुभ से बचने के लिए अनेक दान–पुण्य करती है। सीता के लिए आज्ञा हो चुकी थी कि तीर्थयात्रा के लिए सेनापति कृतान्त वक्र सीता के साथ में जायेंगे।

यहाँ राम मंदिर से लौटकर राजसिंहासन पर पहुँचते हैं। वहाँ द्वारपाल आकर बोलता है– राजन्! प्रजावासी आपसे मिलना चाहते हैं। श्रीराम कहते हैं– प्रजावासियों को सादर आमंत्रित किया जाये। प्रजावासी थर–थर काँपने लगते हैं। कैसे कहें? कहीं श्रीराम कुपित न हो जाये? राम कहते हैं– **बेटे को माँ से, रोगी को वैद्य से, शिष्य को गुरु से कुछ नहीं छिपाना चाहिए। यदि रोगी, वैद्य से रोग छिपायेगा तो तन बिगड़ जायेगा, शिष्य गुरु से कुछ (अवगुण) छिपायेगा तो जीवन बिगड़ जायेगा और प्रजा राजा से छिपायेगी तो देश बिगड़ जायेगा। आप सभी के लिए अभयदान है।** आप निस्संकोच अपनी बात कहें।

एक व्यक्ति बोलता है– राजन्! मैं एक बात कहना चाहता हूँ। नगर में अनाचार फैलता जा रहा है। कोई, किसी अन्य की स्त्री को भगा के ले जाता है, कुछ दिनों पश्चात् वह स्त्री उसी घर में पुनः रहने लगती है। जब सीता छः माह तक रावण के यहाँ रही और पुनः मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के घर में रहने लगी तो हम क्यों नहीं रख सकते? ऐसा अनाचार फैल रहा है। कृपया आप उचित मार्गदर्शन करें। राम कहते हैं– प्रजावासियो! आपने सत्य बताकर राज्य पर उपकार किया है, मैं उचित समाधान खोजता हूँ। हमारे आचार्य कहते हैं, जिसका मन शंकाओं से घिर गया है अर्थात् जिस व्यक्ति के मन में शंकाओं ने घर कर लिया वह व्यक्ति धोबी के समान है। राम शंका के समाधान के लिए लक्ष्मण को बुलाते हैं– भैया लखन! सीता के द्वारा रघुवंश पर अपवाद आ रहा है। सीता पर दोषारोपण किया जा रहा है, हमें सीता के विषय में कुछ उपाय करना चाहिये। लक्ष्मण कहते हैं– कौन है वह, जो माता सीता के विषय में अपवाद रखता हो? जो कुछ बोलने की चेष्टा करे मैं उसकी जिह्वा को छेद दूँगा। कौन है वह, जिसने इस तरह का दुस्साहस किया? राम कहते हैं– भैया लखन! **ऐसी स्थिति में पराक्रम दिखाने की नहीं अपितु सही परामर्श की आवश्यकता है।** लखन! जिह्वाओं को छेद देने से जिह्वाएँ बंद नहीं हो जायेगी, किसी के मुख को बंद करना कठिन होगा। मैं जानता हूँ आपके बाण, आपकी तलवार किसी की भी जिह्वा को छेदने में समर्थ है लेकिन शक्ति का प्रदर्शन प्रजावासियों पर उचित नहीं। हमें शांति के साथ विचार कर सही निर्णय लेने की आवश्यकता है। **महापुरुषों की शक्ति अन्याय, अनीति, दुर्जनता को समाप्त करने के लिए होती है।** अयोध्यावासी सन्मार्ग पर चल सकें ऐसा कोई उपाय करना चाहिए।

राम को चिंतामग्न देखकर लक्ष्मण शंका से भर जाते हैं। भैया राम कोई गलत निर्णय न कर बैठे। लक्ष्मण कहते हैं– भैया! यदि माता सीता पर अपवाद है तो इस विषय को थोड़े समय के लिए रोक दिया जाये। अभी माता सीता की पुण्य कुक्षी में एक नहीं दो-दो संतान हैं। उन दोनों जीवों ने किसका क्या बिगाड़ा? उनका क्या दोष है? हे भैया!

अगर माता सीता को कष्ट होगा तो क्या उन जीवों को कष्ट नहीं होगा? राम कहते हैं– लक्ष्मण! मैं आपकी बात से सहमत नहीं हो पा रहा हूँ। कुछ उपाय शीघ्र खोजना होगा। लक्ष्मण कहते हैं– भैया! ऐसा मत करो। जल्दबाजी में किया गया निर्णय सही नहीं होता है। राम कहते हैं– लखन! जलती हुई अग्नि में से यदि ईंधन निकाल लिया जाये तो अग्नि जल्दी ही शांत हो जाती है।

राम के इस प्रकार वचन सुनकर लक्ष्मण भाँप लेते हैं कि भैया बहुत चिंता के कारण कहीं कठोर निर्णय न कर लें।

सीता का वनवास

राम सेनापति कृतांतवक्र को बुलाते हैं– हे सेनापति! तुम्हारे लिए अयोध्यापति राम का आदेश है। आप सीता को यहाँ से 30 योजन दूर सघन वन में छोड़ दो। अयोध्यापति की आज्ञा का कौन उल्लंघन करे? सेनापति आँखों में आँसू लिए– जो आज्ञा प्रभु।

इधर सीता सोचती है, स्वामी ने मुझे तीर्थयात्रा के लिए आज्ञा प्रदान की है और प्रात:काल हुआ नहीं कि सेनापति रात्रि में ही रथ लेकर तैयार है। सेनापति कहता है– माता सीता! रथ तैयार है, आप चलिये। सीता रात्रि में ही कृतान्तवक्र के साथ चल देती है। थोड़ी ही देर में रथ वेग से आगे बढ़ता जाता है। मार्ग में एक तीर्थक्षेत्र पीछे छूट जाता है। सीता सोचती है शायद पहले दूर–दूर के क्षेत्रों की वंदना के लिए जा रहे हैं और लौटते समय इन पास के क्षेत्रों की वंदना कर लेंगे। कृतान्तवक्र रथ को अबाध गति से ले जाते हुये वेग से चले जा रहे हैं। अब सीता को वन में कोई तीर्थक्षेत्र नजर नहीं आता है। अब तो सिंह, हाथी, चीते, सियार, उल्लू, गिद्धपक्षी आदि अनेक प्रकार के विकराल पशु–पक्षियों की भयावह आवाजें आती हैं। ऐसे सघन वन में सेनापति रथ को रोकता हैं और वृक्ष के नीचे बैठ जाता हैं। आखिर सेनापति कहे तो क्या कहे? कैसे कहे?

सीता कहती है– सेनापति जी! क्या थक गये हो? कोई बात नहीं, थोड़ा विश्राम कर लो। आपको प्यास लगी हो तो जल लेकर आऊँ। कुछ तो बोलो सेनापति जी। क्या

रथ में कुछ खराबी हुई है? सेनापति की आँखों से अश्रुधारा बही जा रही है– माँ! माँ! कुछ मत पूछो माता! आप लंका में छः माह रही, इसकी प्रतिक्रिया अयोध्या में उचित नहीं रही। हे माता! यह आपका सेवक बड़ा पापी है। सीता कहती है– आगे बोलो सेनापति जी। सेनापति कहता है– माँ! अयोध्यापति श्रीराम ने आपका परित्याग कर दिया है।

सीता आँखों में गंगा–यमुना जैसी बड़ी अश्रुधारा लिये कहती है– सेनापति जी! मैं स्वामी को मना लूँगी। एक बार मुझे श्रीराम के दर्शन करा दो। सेनापति कहता है– माँ! इस समय श्रीराम के दर्शन करना उचित नहीं है। राम कुपित हैं। इस समय आपके गर्भस्थ शिशु के लिए हानिकारक हो सकता है। अतः माता! आप राम से दर्शन की बात ना सोचें। सीता कहती है– राम को सीता का संदेश कह देना। जिस लोकापवाद के कारण निर्दोष सीता को छोड़ दिया उसी तरह लोक निंदा के भय से सच्चे धर्म, सच्चे गुरु को मत छोड़ देना। जैन धर्म और सम्यग्दर्शन को नहीं छोड़ देना।

सेनापति रथ को अयोध्या की ओर ले जाने का प्रयास करता हैं। पर रथ में जुता घोड़ा अपने पैर वहीं जमा लेता है। घोड़े की आँखों में आँसू बह रहे हैं। सेनापति घोड़े को सांत्वना देकर, सहलाकर पुनः रथ संचालन प्रारम्भ करते हैं। रोता घोड़ा और रोता हुआ सेनापति आगे बढ़ जाते हैं। सीता जंगल में अकेली है, किसका सहारा? कौन बचाने आये?

होनहार होके रहे टाल सके ना कोय।

गर्भवती सीतासती विरहन वन में रोये।।

हाय सीता रोये, हाय सीता रोये–2

अवधपुरी में जाकर मेरे, प्रभुवर से कहना।

मुझे छोड़कर वन में स्वामी, आप सुखी रहना।।

मैं तो ठहरी एक अभागिन कर्मों की मारी।
इसीलिए तो मुझ पर आयी, विपदाएँ सारी।।
हाय सीता रोये, हाय सीता रोये–2
बचपन से अब तक मैंने इस दुनिया को देखा।
सबके हाथों में होती है, जुदी–जुदी रेखा।।
पिछले किसी जनम में मैंने, हिंसा की होगी।
विरह कराया होगा या गुरु निंदा की होगी।।
हाय सीता रोये, हाय सीता रोये–2

पाप उदय है कोई न जग में, राखन हारा है।
मात–पिता व भैया देवर, कौन सहारा है।।
मर्यादा के लिये आपने, मुझे निकाला है।
सम्यग्दर्शन छोड़ न देना, जो रखवाला है।।
हाय सीता रोये, हाय सीता रोये–2

हे पुरुषोत्तम पिता सरीखे आप राज करना।
मुझसे कुछ अपराध हुये तो आप क्षमा करना।।
हाय सीता रोये, हाय सीता रोये–2

संसार में अपने ही कर्म व्यक्ति को रुलाते हैं, अपने ही कर्म हँसाते हैं। कर्मों की गति विचित्र होती है। व्यक्ति हँसते–हँसते कर्मों का बंध कर लेता है लेकिन जब कर्म उदय में आता है तब कर्मों का फल रो–रो कर भोगना पड़ता है। मैंने किसी जन्म में किसी जीव का विरह कराया होगा। मैंने गुरु निंदा की होगी या मैंने हिंसा की होगी। इसमें श्रीराम का कोई दोष नहीं, मेरे स्वामी का कोई दोष नहीं। मेरे ही कर्म मुझे दुःख दे रहे हैं।

किया गया जो कर्म शुभाशुभ, स्वयं जीव द्वारा।
उसका ही फल मिलता निश्चय, अन्य नहीं चारा।।
अन्य जीव का किया कर्मफल, यदि नर पा जावे।
अपने कर्म किये का फल तो, निष्फल हो जावे?

सीता सोचती है मेरे ऊपर ही संकट नहीं आये हैं। आज से पहले अंजना सती (हनुमान की माता) हुई। माता अंजना पर कितने संकट आये?

रोती हुई सीता के लिए राजा वज्रजंघ द्वारा सान्त्वना देना

जब सीता विलाप कर रही थी तब वज्रजंघ नाम का राजा उस वन में आया।

सीता के रोने का शब्द सुन समस्त लक्षणों को जान वज्रजंघ बोला-जिस स्त्री का यह अत्यन्त मनोहर रोने का शब्द सुनाई पड़ रहा है वह पतिव्रता तथा अनुपम गर्भिणी है। उसे निश्चय ही किसी श्रेष्ठ पुरुष की स्त्री होना चाहिए।

राजा वज्रजंघ के बीच जब-तक यह वार्ता होती है तब-तक आगे चलने वाले कुछ पुरुष सीता के समीप जा पहुंचे। और सीता से रोने का कारण पूछते हुए बोले-दुःखी क्यों हो रही हो? जो समस्त राजधर्म से सहित है तथा पृथ्वी पर वज्रजंघ नाम से प्रसिद्ध है ऐसा यह श्रीमान् उत्तम पुरुष यहाँ आया है। सावधान चित्त से सहित यह वज्रजंघ सदा सम्यग्दर्शन रूपी रत्न को हृदय में धारण करता है। मातृ-जाति का रक्षक है, पर स्त्री को अजगर सहित कूप के समान जानता है, संसार-पातके भय से धर्म में सदा अत्यन्त आसक्त रहता है, सत्यवादी है और अच्छी तरह इन्द्रियों को वश करने वाला है।

सीता के द्वारा वज्रजंघ को अपना सब वृतान्त सुनाना और वज्रजंघ का उसे धर्मबहिन स्वीकार करना

जब तक उन सबके बीच यह कथा चलती है तब तक राजा वज्रजंघ भी वहाँ आ पहुँचा। हाथी से उतर कर विनय भाव से राजा ने सीता से वन में आने का कारण पूछा।

सीता कुछ कहने के लिए क्षण भर को दु:ख से विरत हुई तथापि शोक उत्पन्न होने के कारण वह पुन: रोने लगी। राजा ने जब बार-बार पूछा तब वह किसी तरह शोक को रोककर दु:खी हो गद्गद् वाणी से बोली-मैं राजा जनक की पुत्री, भामण्डल की बहिन, दशरथ की पुत्रवधु और राम की पत्नी सीता हूँ। राजा दशरथ, कैकेयी के वरदान से भरत के लिए अपना राज्यपद देकर तपस्वी के पद को प्राप्त हो गये। फलस्वरूप राम लक्ष्मण को मेरे साथ वन को जाना पड़ा। आगे जो कुछ हुआ वह सब तुमने सुना होगा। राक्षसों के राजा रावण ने मेरा हरण किया, स्वामी राम का सुग्रीव के साथ समागम हुआ और ग्यारहवें दिन समाचार पाकर मैंने भोजन किया आकाशगामी वाहनों से समुद्र तैरकर तथा युद्ध में रावण को जीतकर मेरे पति मुझे पुन: वापिस ले आये।

पृथ्वी पर मर्यादाहीन दुष्ट मनुष्य नि:शंक होकर मेरा अपवाद कहने लगे कि-रावण ने परम विद्वान होकर पर स्त्री ग्रहण की और धर्मशास्त्र के ज्ञाता राम उसे वापिस लाकर पुन: सेवन करने लगे। दृढ़ निश्चय को धारण करने वाला राजा जिस दशा में प्रवृत्ति करता है, वही दशा हम लोगों के लिए भी हितकारी है इसमें दोष नहीं है।

जब मैं गर्भवती हुई तब मैंने विचार किया कि पृथ्वी पर जितने जिनबिम्ब हैं उन सबकी मैं पूजा करूँ तब अत्यधिक वैभव से सहित स्वामी राम, जिनेन्द्र भगवान के अतिशय स्थानों में जो जिनबिम्ब थे उनकी, वन्दना करने के लिए मेरे साथ उद्यत हुए। परन्तु बीच में ही दु:सह लोकापवाद की वार्ता आ गई। विचारपूर्वक कार्य करने वाले स्वामी ने विचार किया कि यह स्वभाव से कुटिल लोक अन्य प्रकार से वश नहीं हो सकते इसलिए प्रियजन का परित्याग करने पर यदि मृत्यु का भी सेवन करना पड़े तो अच्छा है परन्तु कल्पान्त काल तक स्थिर रहने वाला यह यश का उपघात श्रेष्ठ नहीं है। यद्यपि मैं निर्दोष हूँ तथापि लोकापवाद से डरने वाले उन बुद्धिमान् स्वामी ने मुझे इस बीहड़ वन में छुड़वा दिया है।

जो विशुद्ध कुल में उत्पन्न है, उत्तम हृदय का धारक है और सर्व-शास्त्रों का ज्ञाता

है ऐसे क्षत्रियों की यह चेष्टा होती ही है। इस तरह वह दीन सीता अपना सब समाचार कह कर शोक से संतप्त होती हुई पुनः रोने लगी।

राजा वज्रजंघ उसे राजा जनक की पुत्री जान पास जाकर बड़े आदर से सान्त्वना देता है। साथ ही यह कहा है कि–हे देवी! शोक छोड़, रो मत, तू जिनशासन की महिमा से अवगत है। देख, रावण के द्वारा हरी जा कर तू लंका पहुँची, वहाँ तूने माला तथा लेप आदि लगाना छोड़ दिया तथा ग्यारहवें दिन श्रीराम के प्रसाद से पुनः सुख को प्राप्त हुई अब फिर गर्भवती हो पापोदय से निन्दारूपी साँप के द्वारा डँसी गई है और बिना दोष के ही यहाँ छोड़ी गई है। तू परम धन्य है, और अत्यन्त प्रशंसनीय चेष्टा की धारक है जो तू चैत्यालयों की वन्दना के दोहला को प्राप्त हुई है।

हे उत्तम शीलशोभिते! आज भी तेरा पुण्य है जो इस वन में आये हुए मैंने तुझे देख लिया। मैं इन्द्रवंश में उत्पन्न पुण्डरीकनगर का स्वामी हूँ। हे गुणवति! तू धर्म विधि से मेरी बड़ी बहिन है। चलो उठो नगर चलें, शोक छोड़ो क्योंकि **शोक के करने पर कोई कार्य सिद्ध नहीं होता है।** धर्म के रहस्य को जानने वाले उस वज्रजंघ के द्वारा समझाई गई सीता इस प्रकार धैर्य को प्राप्त हुई मानो उसे भाई ही मिल गया हो।

पालकी में बैठकर सीता का पुण्डरीकपुर पहुँचना

राजा वज्रजंघ ने एक पालकी बुलाई, पालकी पर सवार हो सीता ने प्रस्थान किया। उत्तम चेष्टा को धारण करने वाली सीता, तीन दिन में उस भयंकर अटवी को पारकर पुण्डरीक देश में प्रविष्ट हुई।

सीता का आगमन सुन स्वामी के आदेश से अधिकारी लोगों ने शीघ्र ही नगर में बहुत भारी सजावट की राजा वज्रजंघ के महल में राजा की स्त्रीयों से पूजित होती हुई सीता ने प्रवेश किया।

*****

दसवाँ पर्व

लव-कुश का जन्म
एवं
पिता-पुत्रों का समागम

लव-कुश का जन्म होना एवं शिक्षा अध्ययन करना

सीता वहाँ निरन्तर धर्म सम्बन्धी तथा राम सम्बन्धी कथाएँ करती हुई निवास करती थी। तदनन्तर नवम महीना पूर्ण होने पर जब चन्द्रमा श्रवण नक्षत्र पर था, तब श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन उत्तम मंगलाचार से युक्त समस्त लक्षणों से परिपूर्ण सीता ने सुखपूर्वक सुखदायक दो पुत्र उत्पन्न किये।

उन दोनों के उत्पन्न होने पर राजा ने महान् उत्सव किया जो सुन्दर सम्पत्ति से सहित था। उनमें से एक ने अनंगलवण और दूसरे ने मदनांकुश नाम को सुशोभित किया।

तदनन्तर माता के हृदय को आनन्द देने वाले, प्रवीर पुरुष के अंकुर स्वरूप वे दोनों बालक क्रम-क्रम से वृद्धि को प्राप्त होने लगे।

पुत्रों के पुण्य योग से सिद्धार्थ नामक एक प्रसिद्ध क्षुल्लक, राजा वज्रजंघ के महल के समीप आया। सीता ने ज्योंही क्षुल्लक को देखा, त्योंही वह महल से उतर कर नीचे आ गई तथा पास जाकर दोनों हाथ जोड़कर उसने इच्छाकार आदि के द्वारा उसकी पूजा की विशिष्ट अन्न पान देकर संतुष्ट किया। ठीक ही है क्योंकि सीता **जिनशासन में आसक्त पुरुषों को अपना बन्धु समझती है।**

आहार के बाद अन्य कार्य छोड़ क्षुल्लक निश्चिंत हो सुख से बैठ गया। पूछने पर उसने सीता के लिए अपने भ्रमण आदि की वार्ता सुनाई। अत्यधिक उपचार और विनय के प्रयोग से जिसका मन हरा गया था, ऐसे क्षुल्लक ने संतुष्ट होकर लवणांकुश को देखा। अष्टाङ्ग महानिमित्त के ज्ञाता उस क्षुल्लक ने सीता से उसके पुत्रों से सम्बन्ध रखने वाली वार्ता पूछी।

तब नेत्रों से अश्रु की वर्षा करती हुई सीता ने क्षुल्लक के लिए सब समाचार सुनाया, जिसे सुनकर क्षुल्लक भी शोकाक्रान्त हो दुःखी हो गया।

अथानन्तर अत्यधिक प्रेम से क्षुल्लक ने थोड़े ही समय में लवणांकुश को शस्त्र और शास्त्र विद्या ग्रहण करा दी। वे पुत्र थोड़े ही समय में ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न, कलाओं

और गुणों में विशारद तथा दिव्य शस्त्रों के आह्वान एवं छोड़ने के विषय में अत्यन्त निपुण हो गये।

अनंगलवण और मदनांकुश का विवाह

उन सुन्दर कुमारों का विवाह योग देख राजा वज्रजंघ ने अपनी शशिचूला नाम की पुत्री को अन्य बत्तीस कन्याओं के साथ लवण को देना निश्चित किया।

द्वितीय पुत्र के योग्य कन्याओं की सब ओर खोज करता रहा। अकस्मात् एक दिन स्मरण आया कि पृथ्वीपुर के राजा की कनकमाला नामकी एक श्रेष्ठ पुत्री है। वह शशिचूला की समानता को प्राप्त है। इस प्रकार विचार कर उसके निमित्त से राजा वज्रजंघ ने दूत भेजा।

बुद्धिमान दूत ने पृथ्वीपुर पहुँच कर राजा का सम्मान कर वार्तालाप करने लगा। राजा दूत के मन की बात जान बोला–कुल, शील, धन, रूप, समानता, बल, अवस्था, देश और विद्यागम ये नौ वर के गुण कहे गये हैं तथापि उत्तम पुरुष उन सबमें एक कुल को ही श्रेष्ठ गुण मानते हैं इसका होना आवश्यक समझते हैं, शेष गुणों में इच्छानुसार प्रवृत्ति है अर्थात् हों तो ठीक न हों तो ठीक। परन्तु वही कुल नामका प्रथम गुण जिस वर में न हो उसे सब ओर से माननीय कन्या कैसे दी जा सकती है? इस तरह निर्लज्जतापूर्वक विरुद्ध वचन कहने वाले उसके लिए पुत्री का देना तो युक्त नहीं है।

इस प्रकार जिसके वचन सर्वथा उपेक्षित कर दिये गये थे ऐसे दूत ने निरुपाय हो वापिस जाकर वज्रजंघ के लिए सब समाचार कह सुनाया। फलस्वरूप, वह क्रोध से प्रेरित हो पृथु का देश उजाड़ने के लिए तत्पर हो गया। राजा वज्रजंघ ने पुत्रों को बुलाने के लिए शीघ्र ही एक पत्र सहित आदमी पौण्डरीकपुर को भेज दिया। पिताकी आज्ञा सुनकर राजपुत्रों ने शीघ्र ही युद्ध के लिए सेना तैयार की। युद्ध का समाचार सुन लवण और अंकुश राजा वज्रजंघ के पास पहुँच गये।

शत्रु की सेना को निकटवर्ती सुनकर बड़ी भारी सेना के साथ राजा पृथु पृथ्वीपुर से

बाहर निकला। जब दोनों सेनाओं के अग्रभाग अत्यन्त निकट आ पहुँचे तब उत्साह को धारण करने वाले लवण और अंकुश शत्रु की सेना में प्रविष्ट हुए। अत्यधिक शीघ्र से घूमने वाले दोनों कुमारों का पराक्रम शत्रु नहीं सह सके अर्थात् शत्रु सेना निमेष मात्र में तितर-बितर हो गई। असहाय पृथु जब भागने लगा तब धनुर्धारी कुमारों ने उसका पीछाकर कहा-नीच नरपृथु! अब व्यर्थ कहा भागता है? जिनके कुल और शील का पता नहीं ऐसे ये हम दोनों आ गये। जिनका कुल और शील अज्ञात है ऐसे हम लोगों से भागता हुआ तू इस समय लज्जित क्यों नहीं होता?

इस प्रकार कहने पर पृथु ने हाथ जोड़कर कहा-हे वीरों मेरा अज्ञात जनित दोष क्षमा करने के योग्य हो, आप दोनों परम धीर-वीर महाकुल में उत्पन्न एवं यथेष्ट सुख देने वाले हमारे स्वामी हो।

जब वज्रजंघ आदि प्रधान राजा आ गये तब उनकी साक्षीपूर्वक दोनों वीरों की पृथु के साथ मित्रता हो गई। **मानशाली मनुष्य प्रमाणमात्र से प्रसन्न हो जाते हैं, क्योंकि नदियों के प्रवाह नम्रीभूत वेत के पौधों को नहीं उखाड़ते।**

राजा पृथु ने दोनों वीरों को बड़े वैभव के साथ नगर में प्रविष्ट कराया। वहाँ पृथु ने अपनी कनकमाला कन्या वीर मदनांकुश के लिए देना निश्चित किया। दोनों वीर वहाँ एक रात्रि व्यतीतकर अनेक राजाओं को अपने अधीन कर पुण्डरीकपुर में वापिस आ गए।

नारद के द्वारा अनंगलवण और मदनांकुश को राम-लक्ष्मण का परिचय कराना

उसी समय कृतान्तवक्त्र से सीता के छोड़ने का स्थान पूछकर उसकी खोज करने वाले दुखी नारद भ्रमण करते हुए वहाँ पहुँचे। सो दोनों ही वीर उनकी दृष्टि में पड़े। नारद जी का दोनों ही कुमारों ने आसनादि देकर सम्मान किया।

सुख से बैठकर नारद ने उन कुमारों से कहा-राम लक्ष्मण की जैसी विभूति है, वैसी ही विभूति शीघ्र ही आप दोनों की भी हो।

इसके उत्तर में उन्होंने कहा–हे भगवन्! वे राम–लक्ष्मण कौन हैं? कैसे उनके गुण और समाचार है तथा किस कुल में उत्पन्न हुए हैं?

क्षणभर के लिए निश्चिंत बैठकर नारक बोले–मनुष्य भुजाओं से मेरु को उठा सकता है और समुद्र को तैर सकता है परन्तु इन दोनों के गुण कहने के लिए कोई समर्थ नहीं है। फिर भी आप लोगों के कहने से स्थूल रूप में उनके कुछ पुण्यवर्धक गुण कहता हूँ सो सुनो–इक्ष्वाकु वंश में दशरथ नाम के राजा थे। वे उत्तर कौसल देशपर शासन करते थे।

राजा दशरथ के चार पुत्र हैं। उन सब पुत्रों में राम प्रथम पुत्र हैं जो सब ओर से सुन्दर हैं तथा सर्वशास्त्रों के ज्ञाता हैं। अपने छोटे भाई लक्ष्मण और स्त्री सीता के साथ जो पिता के सत्य की रक्षा कराते हुए अयोध्या को सूनी कर छद्मस्थ वेष में पृथ्वी पर भ्रमण करने लगे तथा भ्रमण करते हुए दण्डक वन में प्रविष्ट हुए। वहाँ महाविद्याधरों के लिए अत्यन्त दुर्गभ स्थान में वे रहते थे, वहीं चन्द्रनखा ने अपना त्रियाचरित्र दिखाया। उधर राम, छोटे भाई की वाता जानने के लिए युद्ध में गये, उधर कपटी रावण ने सीता का हरण कर लिया। तब महेन्द्र, किष्किन्ध, श्रीशैल और मलय के अधिपति तथा विराधित आदि प्रधान वानरवंशी राजाओं ने राम के गुणों के अनुराग से उनके समीप आये और युद्ध में रावण को जीतकर सीता को वापिस लेकर अयोध्या आये।

परम ऐश्वर्य से सेवित श्रीराम लक्ष्मण वहाँ आनन्द से समय बिताते थे। अभी तक आप दोनों को उन राम का ज्ञान क्यों नहीं हुआ जिनका कि वह लक्ष्मण अनुज हैं जिनके पास कभी व्यर्थ न जाने वाला सुदर्शन चक्र विराजमान है। जिन्होंने प्रजा के हित की इच्छा से सीता का परित्याग कर दिया, इस संसार में ऐसा कौन है जो राम को नहीं जानता हो।

नारद के द्वारा सीता के परित्याग का उल्लेख करना

अंकुश ने कहा–हे मुने! राम ने सीता को किस कारण छोड़ा सो कहो मैं जानना चाहता हूँ। जिनके नेत्रों में आँसू छलक आये थे ऐसे नारद ने कहा–उसका गोत्र, चारित्र तथा हृदय अत्यन्त शुद्ध है, वह गुणों से सुशोभित हैं, आठ हजार स्त्रियों की अग्रणी हैं,

अतिशय पण्डिता हैं, अपनी पवित्रता से सावित्री को पराजित कर जिनवाणी के समान हैं। निश्चित ही जन्मान्तरों में उपार्जित पापकर्म के प्रभाव से केवल लोकापवाद के कारण उन्होंने उसे निर्जन वन में छोड़ा है। जिसने अपने नेत्रों से कभी सूर्य नहीं देखा ऐसी सीता हिंसक जन्तुओं से भरे हुए भयंकर वन में क्या जीवित रह सकती है? इतना कहकर जिनका मन शोक के भार से आक्रान्त हो गया था ऐसे नारद मुनि आगे कुछ भी नहीं कह सके।

अंकुश ने हँस कर कहा–हे ब्रह्मन्! भयंकर वन में सीता को छोड़ते हुए राम ने कुल की शोभा के अनुरूप कार्य नहीं किया। लोकापवाद के निराकरण करने के अनेक उपाय हैं फिर उनके रहते हुए क्यों उन्होंने इस तरह सीता को कष्ट दिया।

लव–कुश का राम–लक्ष्मण से युद्ध करने का निश्चय करना। युद्ध का निश्चय सुन सीता का अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त पुत्रों को सुनाना

अनंगलवण ने कहा–हे मुने! यहाँ से अयोध्या नगरी कितनी दूर है? उसके उत्तर में नारद ने कहा–अयोध्या यहाँ से आठ योजन दूर है। यह सुन दोनों कुमारों ने कहा–हम उन्हें जीतने के लिए चलते हैं। इस पृथ्वी पर हमारे रहते हुए दूसरे की प्रधानता कैसे रह सकती है? राम के प्रति चढ़ाई सुन सीता रोने लगी। सीता के समीप खड़े नारद से सिद्धार्थ ने कहा–तुमने यह अशोभन कार्य क्यों प्रारंभ किया? रण के कौतुकी एवं रण का प्रोत्साहन देने वाले तुमने देखों यह कुटुम्ब का बड़ा भेद कर दिया है–घर में बड़ी फूट डाल दी।

नारद ने कहा–मैं इस वृत्तान्त को ऐसा थोड़े ही जानता था। मैंने तो केवल उनके सामने राम–लक्ष्मण सम्बन्धी चर्चा ही रक्खी थी। किन्तु ऐसा होने पर भी डरो मत कुछ भी अशोभन कार्य नहीं होगा यह मैं जानता हूँ अत: मन को स्वस्थ करो।

दोनों कुमार सीता के समीप जाकर बोले हे अम्बा! क्यों रो रही हो? बिना किसी

विलम्ब के शीघ्र ही कहो। वह कौन है जो तुम्हें शोक उत्पन्न करता है? हे माँ! शोक का कारण बतलाने की प्रसन्नता करो।

इस प्रकार कहने पर रोती हुई सीता ने कहा–हे पुत्रों! मैं किसी पर कुपित नहीं हूँ। आज मुझे तुम्हारे पिता का स्मरण हों आया है इसलिए दुःखी हो गई हूँ। उन दोनों ने पूछा–हे माता हमारा पिता कौन है? कहाँ है? इस प्रकार पूछने पर सीता ने अपना सब वृत्तान्त कह दिया। क्योंकि वृत्तान्त के छिपाने का अब कौन सा अवसर है?

यह कहकर सीता ने वनवास से लेकर उन दोनों के जन्म तक की सम्पूर्ण घटना सुना दी और कहाँ–आज उनके साथ तुम्हारा महायुद्ध होने वाला है सो मैं क्या पति की अमांगलिक वार्ता सुनूँगी? या तुम्हारी? अथवा देवर की? इसी कारण से मैं रो रही हूँ। हे पुत्रों! यहाँ दूसरा कारण क्या हो सकता है?

यह सुनकर लवणांकुश परम हर्ष को प्राप्त हो आश्चर्य करने लगे, कि श्रीराम हमारे पिता हैं। उन्होंने कहा–हे माता! विषाद मत करो। तुम शीघ्र ही राम–लक्ष्मण का अहंकार खण्डित देखो। तब सीता ने कहा–हे पुत्रों! पिता के साथ विरोध करना रहने दो। यह करना उचित नहीं है तुम लोग विनय के साथ जाओ और नमस्कार कर पिता के दर्शन करो यही मार्ग न्यायसंगत है।

यह सुन लवणांकुश ने कहा– वे हमारे शत्रु के स्थान को प्राप्त हैं अत: हे माता! हम लोग जाकर यह दीन वचन उनसे किस प्रकार कहें कि हम तुम्हारे पुत्र हैं। संग्राम के अग्रभाग में यदि हम लोगों को करण प्राप्त होता है तो अच्छा है परन्तु वीर मनुष्यों के द्वारा निन्दित ऐसा विचार रखना अच्छा नहीं है।

लवणांकुश और राम–लक्ष्मण का युद्ध

अथानन्तर माता को प्रमाण कर दोनों कुमार दो हाथियों पर आरूढ़ हो अयोध्या की ओर प्रयाण कर गये। कुछ दिनों बाद लवणांकुश दूर से ही आकाश को सन्ध्याकालीन मेघों के समूह सहित जैसा देखकर बोले–हे मामा! जिसकी लाल–लाल विशाल कान्ति

बहुत ऊँची उठ रही है ऐसा यह क्या दिखाई दे रहा है? यह सुन वज्रजंघ ने बहुत देर तक पहिचानने के बाद कहा–हे देवों! यह वह उत्कृष्ट अयोध्या नगरी दिखाई दे रही है जिसके सुवर्णमय कोट की यह कान्ति इतनी ऊँची उठ रही है। इस नगरी में श्रीराम रहते हैं जो कि तुम दोनों के पिता हैं।

शत्रु की सेना को निकटवर्ती स्थान में स्थित सुन आश्चर्य को प्राप्त होते हुए राम-लक्ष्मण ने कहा–यह कौन मनुष्य शीघ्र ही मरना चाहता है जो युद्ध का बहाना लेकर हमारे पास चला आ रहा है। लक्ष्मण ने उसी समय राजा विराधित को आज्ञा दी कि बिना किसी विलम्ब के युद्ध के लिए सेना तैयार की जाय। रण का कार्य उपस्थित हुआ है। देखते ही देखते वे सब विद्याधर राजा बड़ी-बड़ी सेनाएं लेकर अयोध्या आ पहुँचे।

राम-लक्ष्मण रथ, घोड़े, हाथी और पैदल सैनिक से घिरे हुए क्रोध को धारण कर महल से निकले। दोनों सेनाओं में भयंकर संग्राम हुआ। राम-लक्ष्मण को युद्ध भूमि में देख लवणांकुश उनकी ओर बढ़े पास आते ही अनंगलवण ने शस्त्र चलाकर राम की ध्वजा काट दी और धनुष छेद दिया। राम जब तक दूसरा धनुष लेने के लिए उद्यत हुए तब तक लवण ने उन्हें रथ रहित कर दिया। प्रबल पराक्रमी राम, भौंह चढ़ाते हुए, दूसरे रथ पर सवार हो क्रोधवश अनंगलवण की ओर चले। राम ने गम्भीर वाणी द्वारा वज्रावर्त नामक धनुष उठाकर कृतान्तवक्त्र सेनापति से कहा–हे कृतान्तवक्त्र! शत्रु की ओर शीघ्र ही रथ बढ़ाओ।

लवणांकुश को राम-लक्ष्मण के साथ अपने जाति सम्बन्ध का ज्ञान था अत: वे उनकी अपेक्षा रखते हुए युद्ध करते थे, उन्हें घातक चोट न लग जावे इसलिए बचा-बचा कर युद्ध करते थे पर उधर राम-लक्ष्मण को कुछ ज्ञान नहीं था इसलिए वे निरपेक्ष होकर युद्ध कर रहे थे।

तदनन्तर लवण ने वक्ष:स्थल के समीप राम को प्रास नामक शास्त्र से घायल किया और उधर मदनांकुश ने भी लक्ष्मण के ऊपर प्रहार किया। उसकी चोट से लक्ष्मण मूर्च्छित

हो गया चेतना प्राप्त होने पर लक्ष्मण ने क्रोध से अंकुश को मारने के लिए दैदीप्यमान चक्ररत्न चला दिया। परन्तु वह चक्र अंकुश के समीप जाकर निष्प्रभ हो लौटकर पुन: लक्ष्मण के ही हस्ततल में आ गया। तीव्र क्रोध के कारण लक्ष्मण ने कई बार वह चक्र अंकुश के समीप फेंका। परन्तु वह बार-बार लक्ष्मण के ही समीप लौट जाता था। रण में जितने लोग उपस्थित थे उन सबका चित्त आश्चर्य से व्याप्त हो गया कि अब यह परम शक्तिशाली दूसरा चक्रधर नारायण उत्पन्न हुआ है जिसके कि घूमते हुए चक्र ने सबको संशय में डाल दिया है। उसी समय परम शक्ति को धारण करने वाले लक्ष्मण ने कहा कि-जान पड़ता है ये दोनों बलभद्र और नारायण उत्पन्न हुए है।

सिद्धार्थ द्वारा राम-लक्ष्मण के समक्ष दोनों कुमारों का रहस्य प्रकट करना। पिता-पुत्रों का समागम होना

लक्ष्मण को लज्जित और निश्चेष्ट देख नारद की सम्मति से सिद्धार्थ लक्ष्मण के पास जाकर बोले-हे देव! नारायण तो तुम्हीं हो, जिनशासन में कही बात अन्यथा कैसे हो सकती है? ये दोनों जानकी के पुत्र लवणांकुश हैं, जिनके कि गर्भ में रहते हुए वन में छोड़ दी गई थी।

सिद्धार्थ से लवणांकुश का माहात्म्य जानकर शोक से कृश राम और लक्ष्मण ने कवच-शास्त्र आदि छोड़ दिये, यह देख स्नेह से भरे हुए दोनों पुत्रों ने रथ से उतर कर हाथ जोड़ शिर से पिता के चरणों को नमस्कार किया। जिनका हृदय स्नेह से द्रवीभूत हो गया था ऐसे राम ने दोनों पुत्रों का आलिंगन किया।

*****

ग्यारहवाँ पर्व

सीता की अग्नि परीक्षा

हनुमान आदि राजाओं के द्वारा सीता को वापिस लाने की प्रार्थना करना

किसी दिन हनुमान सुग्रीव तथा विभीषण आदि राजाओं ने श्रीराम से प्रार्थना की–हे देव! प्रसन्न होओ, सीता अन्य देश में दु:ख से स्थित है इसलिए लाने की आज्ञा दी जाय। तब लम्बी श्वास ले क्षण भर कुछ विचार कर श्रीराम ने कहा–मैं सीता के शील को निर्दोष जानता हूँ तथापि वह लोकापवाद को प्राप्त है अत: उसका मुख किस प्रकार देखूँ। पहले सीता पृथ्वी तल पर समस्त लोगों को विश्वास उत्पन्न करावे उसके बाद ही उसके साथ हमारा निवास हो सकता है अन्य प्रकार नहीं। इसलिए इस संसार में देशवासी लोगों के साथ समस्त राजा तथा समस्त विद्याधर बड़े प्रेम से निमन्त्रित किये जावें। उन सबके के समक्ष अच्छी तरह शपथ कर सीता निष्कलंक जन्म को प्राप्त हो।

ऐसा ही हो इस प्रकार कह कर उन्होंने बिना किसी विलम्ब के उक्त बात स्वीकृत की, फल स्वरूप नाना देशों और समस्त दिशाओं से राजा लोग आ गये। अत्यन्त वृद्ध अनेक लोगों को हाल जानने में निपुण जो राष्ट्र के श्रेष्ठ प्रसिद्ध पुरुष थे वे तथा अन्य सब लोग वहाँ एकत्रित हुए। उस समय परम भीड़ को प्राप्त हुए जन समूह ने समस्त दिशाओं में समस्त पृथ्वी को मार्ग रूप में परिणत कर दिया था, ऊपर विद्याधर आ रहे थे और नीचे भूमिगोचरी, इसलिए उन सबसे उस समय यह जगत् ऐसा जान पड़ता था मानों जंगम ही हो अर्थात् चलने–फिरने वाला ही हो।

नगर के बाहर लम्बे चौड़े मंच तैयार किये गये, उत्तमोत्तम विशाल शालाएँ, बड़े–बड़े झरोखों से युक्त तथा विशाल मण्डपों से सुशोभित महल बनवाये गये। उन सब स्थानों में स्त्रियाँ स्त्रियों के साथ और पुरुष पुरुषों के साथ, इस प्रकार शपथ देखने के इच्छुक सब लोक यथायोग्य ठहर गये। राजाधिकारी पुरुषों ने आगन्तुक मनुष्यों के लिए शयन, आसन, भोजन तथा माला आदि के द्वारा सब प्रकार की सुविधा पहुँचाई थी।

हनुमान आदि द्वारा सीता को पुण्डरीकपुर से वापस लाना

राम की आज्ञा से भामण्डल, विभीषण, हनुमान, सुग्रीव आदि बड़े-बड़े बलवान् राजा क्षणभर में आकाश मार्ग से पौण्डरीकपुर गये। वे सब, अनुमति प्राप्त कर सीता के स्थान में प्रविष्ट हुए, प्रवेश करते ही उन्होंने सीता देवी का जयकार किया, पुष्पांजलि बिखेरी, हाथ जोड़ मस्तक से लगा चरणों में प्रणाम किया, और सामने बैठ विनय से नम्रीभूत हो क्रमपूर्वक वार्तालाप किया।

संभाषण करने के बाद अत्यन्त गम्भीर सीता आत्म निन्दा रूप वचन धीरे-धीरे बोली, उसने कहा-दुर्जनों के वचनरूपी दावानल से जले हुए मेरे अंग इस समय क्षीरसागर के जल से भी शान्ति को प्राप्त नहीं हो रहे हैं। तब उन्होंने कहा-हे देवी! इस समय शोक छोड़ों और मन को प्रकृतिस्थ करो। संसार में ऐसा कौन प्राणी है जो तुम्हारे विषय में अपवाद करने वाला हो। हे देवी! रामचन्द्र जी ने तुम्हारे लिए पुष्पक विमान भेजा है सो प्रसन्न होकर इस पर चढ़जाय और अयोध्या की ओर चला जाए।

हे भगवति! तुम्हें पति वचन अवश्य स्वीकृत करना चाहिए। इस प्रकार कहने पर सैकड़ों उत्तम स्त्रियों के परिकर के साथ सीता पुष्पक विमान पर आरूढ हो गई और बड़े वैभव के साथ आकाशमार्ग से चली। जब उसे अयोध्या नगरी दिखी उसी समय सूर्य अस्त हो गया। अत: उसने महेन्द्रोदय नामक उद्यान में रात्रि व्यतीत की प्रात:काल होते ही सीता राम के समीप चली।

समाने आती हुई सीता को देख कर राम का हृदय कापने लगा। वे विचार करने लगे कि मैंने तो इसे हिंसक जन्तुओं से भरे वन में छोड़ दिया था फिर मेरे नेत्रों को चुराने वाली यह यहाँ कैसे आ गई? अहो! यह बड़ी निर्लज्ज है जो इस तरह निकाली जाने पर भी विराग को प्राप्त नहीं होती।

राम की चेष्टा देख, शून्यहृदया सीता यह सोचकर विषाद करने लगी कि मैंने विरहरूपी

सागर अभी पार नहीं कर पाया है। विराहरूपी सागर के तट को प्राप्त हुआ मेरा मनरूपी जहाज निश्चित ही विध्वंस को प्राप्त हो जाएगा। ऐसी चिन्ता से वह व्याकुल हो उठी। क्या करना चाहिए इस विषय का विचार करने में मूढ़ सीता, पैर के अंगूठे से भूमि को कुरेदती हुई राम के समीप खड़ी थी।

तब राम ने कहा–सीते! सामने क्यों खड़ी है? दूर हट, मैं तुम्हें देखने के लिए समर्थ नहीं हूँ। मेरे नेत्र मध्याह्न के समय सूर्य की किरण को अथवा आशीविष–सर्प के मणिकी शिखा को देखने के लिए अच्छी तरह उत्साहित हैं परन्तु तुझे देखने के लिए नहीं। तू रावण के भवन में कई मास तक उसके अन्त:पुर से आवृत्त होकर रही फिर भी मैं तुम्हें ले आया सो यह सब क्या मेरे लिए उचित था?

सीता ने कहा–तुम्हारे समान निष्ठुर कोई दूसरा नहीं है। जिस प्रकार एक साधारण मनुष्य उत्तम विद्या का तिरस्कार करता है उसी प्रकार तुम मेरा तिरस्कार कर रहे हो। हे वक्र हृदय! दोहला के बहाने वन में ले जाकर मुझ गर्भिणी को छोड़ना क्या तुम्हें उचित था? यदि मैं वहाँ कुमरण को प्राप्त होती तो इससे तुम्हारा क्या प्रयोजन सिद्ध होता? केवल मेरी ही दुर्गति होती। यदि मेरे ऊपर आपका थोड़ा भी सद्भाव होता अथवा थोड़ी भी कृपा होती तो मुझे शान्तिपूर्वक आर्यिकाओं की वसति के पास ले जाकर क्यों नहीं छोड़ा। यथार्थ में **अनाथ, अबन्धु, दरिद्र तथा अत्यन्त दु:खी मनुष्यों का यह जिनशासन ही परम शरण है।** हे राम! यहाँ अधिक कहने से क्या? इस दशा में भी आप प्रसन्न हो और मुझे आज्ञा दें। इस प्रकार कह कर वह अत्यनत दु:खी हो रोने लगी।

राम ने कहा–हे देवी! मैं तुम्हारे निर्दोष शील, पतिव्रत्य धर्म एवं अभिप्राय की उत्कृष्ट विशुद्धता को जानता हूँ किन्तु यतश्च तुम लोगों के द्वारा इस प्रकट भारी अपवाद को प्राप्त हुई हो अत: स्वभाव से ही कुटिल चित्त को धारण करने वाली इस प्रजा को विश्वास दिलाओ। इनकी शंका दूर करो। तब सीता ने हर्षयुक्त हो **'एवमस्तु'** कहते हुए कहा–मैं पाँचों ही दिव्य शपथों से लोगों को विश्वास दिलाती हूँ। उसने कहा हे नाथ! मैं उस काल कूट को पी सकती हूँ जो विषों में सबसे अधिक विषम है तथा जिसे सूंघकर

आशीविष सर्प भी तत्काल भस्म पने को प्राप्त हो जाता है। मैं तुला पर चढ़ चकती हूँ अथवा भयंकर अग्नि की ज्वाला में प्रवेश कर सकती हूँ अथवा जो भी शपथ आपको अभीष्ट हो उसे कर सकती हूँ। क्षणभर विचारकर राम ने कहा–अच्छा अग्नि में प्रवेश करो। इसके उत्तर में सीता ने बड़ी प्रसन्नता से कहा–हाँ, प्रवेश करती हूँ।

राम ने किंकरों को आज्ञा दी कि–यहाँ शीघ्र ही दो कोष गहरी और तीन सौ हाथ चौड़ी चौकोन पृथ्वी प्रमाण के अनुसार खोदो और उसे काला गुरु तथा चन्दन के सूखे और बड़े मोटे ईधन से परिपूर्ण करो। उसमें बिना किसी विलम्ब के ऐसी अग्नि प्रज्वलित करो कि जिसमें अत्यन्त तीक्ष्ण ज्वालाएँ निकल रही हों तथा जो शरीरधारी साक्षात् मृत्यु के समान जान पड़ती हो। जो आज्ञा कहकर राम की आज्ञानुसार सब काम कर दिया।

सर्वभूषण मुनिराज को केवलज्ञान होना

उसी दिन महेन्द्रोदय उद्यान में सर्वभूषण मुनिराज ध्यान कर रहे थे सो पूर्व वैर के कारण विद्युद्वक्त्रा नामकी राक्षसी ने उन पर उपसर्ग किया। परन्तु जब उपसर्ग से मुनिराज का मन विचलित नहीं हुआ तब केवलज्ञान उत्पन्न हो गया।

केवलज्ञान उत्पन्न होने का समाचार जान स्वर्ग के इन्द्र आदि वहाँ आये। सीता का वृत्तान्त देख मेषकेतु नामक देव ने अपने इन्द्र से कहा–हे देवेन्द्र! जरा इस अत्यन्त कठिन कार्य को भी देखो, हे नाथ! देवों को भी जिसका स्पर्श करना कठिन है तथा जो महाभय का कारण है ऐसा यह सीता पर उपसर्ग क्यों हो रहा है? सुशील एवं अत्यन्त स्वच्छ हृदय को धारण करने वाली इस श्राविका के ऊपर यह दुरीक्ष्य उपद्रव क्यों हो रहा है? इन्द्र ने कहा–मैं सकलभूषण केवली की वन्दना करने के लिए शीघ्रता से जा रहा हूँ इसलिए यहाँ जो कुछ करना योग्य हो वह तुम करो। इतना कहकर इन्द्र उद्यान के सन्मुख चला और मेषकेतु देव सीता के स्थान पर पहुँचा। वापी में अग्नि जलाई जाने लगी। दयावती स्त्रियाँ रो उठीं। उस वापी में ऐसी भयंकर अग्नि प्रज्वलित हुई कि समस्त

दिशाओं में जिसका महावेग फैल रहा था और जो कोशों प्रमाण लम्बी-लम्बी ज्वालाओं से विकराल थी।

सीता की अग्नि परीक्षा

जिसका मन अत्यन्त दृढ़ था ऐसी सीता ने उठकर क्षणभर के लिए कायोत्सर्ग किया, भावना से जिनेन्द्र भगवान की स्तुति की, ऋषभादि तीर्थंकरों को नमस्कार किया, सिद्ध परमेष्ठी समस्त साधु और मुनिसुव्रत जिनेन्द्र जिनके कि तीर्थ को उस समय हर्ष के धारक एवं परम ऐश्वर्य युक्त देव असुर और मनुष्य सदा सेवा करते हैं और मन में स्थित सर्वप्राणी हितैषी आचार्य के चरणयुगल इन सबको नमस्कार कर उदात्त गाम्भीर्य और अत्यधिक विनय से युक्त सीता ने कहा-मैंने राम को छोड़कर किसी अन्य मनुष्य को स्वप्न में भी मन-वचन और काय से धारण नहीं किया है यह मेरा सत्य है। यदि मैं यह मिथ्या कह रही हूँ तो यह अग्नि दूर रहने पर भी मुझे क्षणभर में भस्म भाव को प्राप्त करा दे-राख का ढेर बना दे। और यदि मैंने राम के सिवास किसी अन्य मनुष्य को मन से भी धारण नहीं किया है तो विशुद्धि से सहित मुझे यह अग्नि नहीं जलावे।

यदि मैं मिथ्यादृष्टि, पापिनी, क्षुद्रा और व्यभिचारिणी होऊँगी तो यह अग्नि मुझे जला देगी और यदि सदाचार में स्थित सती होऊँगी तो नहीं जला सकेगी। इतना कहर उस देवी ने उस अग्नि में प्रवेश किया परन्तु आश्चर्य की बात कि वह अग्नि स्फटिक के समान स्वच्छ, सुखदायी तथा शीतल जल हो गई। मानो सहसा पृथ्वी फोड़ कर वेग से उठते हुए जल से यह वापिका लबालब भर गई तथा चंचल तरंगों से व्याप्त हो गई। वहाँ अग्नि थी इस बात की सूचना देने वाले न लूगर, न काष्ट, न अंगार, न तृणादिक कुछ भी दिखाई देते थे। उस वापिका में ऐसी भयंकर भँवरें उठने लगीं। जिनके कि चारों ओर फेनों के समूह चक्कर लगा रहे थे जो अत्यधिक वेग से सुशोभित थीं तथा अत्यन्त गम्भीर थीं।

इस प्रकार जिसमें क्षोभ को प्राप्त हुआ समुद्र के समान शब्द उठ रहा था ऐसी वह वापी क्षणभर में तटपर स्थित मनुष्यों को डुबाने लगी। वह जल क्षणभर में घुटनों के

बराबर, फिर नितम्ब के बराबर, हो गया। तीव्र वेग से युक्त जल जब कण्ठ का स्पर्श करने लगा तब लोग व्याकुल होकर मंचों पर चढ़ गये किन्तु थोड़ी देर बाद वे मंच भी डूब गये। जब वह जल शिर को उल्लंघन कर गया तब कितने ही लोग तैरने लगे। हे देवी! रक्षा करो, हे सर्वप्राणिहितौषिणी! रक्षा करो, हे मुनिमानस निर्मले! दया करो। इस प्रकार जल से भयभीत मनुष्यों के मुख से शब्द निकल रहे थे।

तदनन्तर वापीरूपी वधू, तरंगरूपी हाथों के द्वारा कमल के मध्यभाग के समान कोमल एवं नखों से सुशोभित राम के चरणयुगल का स्पर्श कर क्षणभर में सौम्य दशा को प्राप्त हो गई। उसकी मलिन भँवरें शान्त हो गईं और उसका भयंकर शब्द छूट गया। इससे लोग भी सुखी हुए। वह वापी क्षण भर में नील कमल, सफेद कमल तथा सामान्य कमलों से व्याप्त हो गई और सुगन्धि से मदोन्मत्त भ्रमर समूह के संगीत से मनोहर दिखने लगी। सुन्दर शब्द करने वाले हंस तथा वदक आदि पक्षियों के समूह से सुशोभित हो गई।

उस वापी के मध्य में एक विशाल, विमल, शुभ, खिला हुआ तथा अत्यन्त कोमल सहस्त्र-दल कमल प्रकट हुआ और उस कमल के मध्य में एक ऐसा सिंहासन स्थित हुआ कि जिसका आकार नाना प्रकार के बेल-बूटों से व्याप्त था, जो रत्नों के प्रकाशरूपी वस्त्र से वेष्टित था, और कान्ति से चन्द्रमण्डल के समान था। ''डरो मत'' इस प्रकार उत्तम देवियाँ जिसे सांत्वना दे रहीं थीं ऐसी सीता सिंहासन पर बैठाई गई। उस समय आश्चर्यकारी अभ्युदय को धारण करने वाली सीता लक्ष्मी के समान सुशोभित हो रही थी।

आकाश में स्थित देवों के समूह ने संतुष्ट होकर पुष्पांजलियों के साथ-साथ ''बहुत अच्छा, बहुत अच्छा'' यह शब्द छोड़े। नाना तरह के वादित्र गूँजने लगे, नगाड़े जोरदार शब्द करने लगे। विद्याधरों के समूह परस्पर एक-दूसरे से मिलकर नृत्य करने लगे। सब ओर से यही ध्वनि आकाश और पृथ्वी के अन्तराल को व्याप्त कर उठ रही थी कि- श्रीमान् राजा जनक की पुत्री और बलभद्र श्रीराम की परम अभ्युदयवती पत्नी की जय हो। अहो बड़ा आश्चर्य है, बड़ा आश्चर्य है इसका शील अत्यन्त निर्मल है।

राम का सीता से क्षमा माँगना एवं सीता का आर्यिका दीक्षा लेना

अग्नि में शुद्ध हुई स्वर्णमय यष्टि के समान जिसका शरीर अत्याधिक प्रभा के समूह से व्याप्त था तथा जो कमलरूपी गृह में निवास कर रही थी ऐसी सीता को देख बहुत भारी अनुराग से अनुरक्त चित्त होते हुए राम उसके पास गये और बोले–हे देवी! प्रसन्न होओ, तुम कल्याणवती हो, उत्तम मनुष्यों के द्वारा पूजित हों, तुम्हार मुख शरद ऋतु के पूर्ण चन्द्रमा के समान है, तथा तुम अत्यन्त अद्‌भुत चेष्टा की करने वाली हो। अब ऐसा अपराध फिर कभी नहीं करूँगा अथवा अब तुम्हारा दुःख बीत चुका है। हे साध्वि! मेरा दोष क्षमा करो। तुम आठ हजार स्त्रियों की परमेश्वरी हो।

हे सति! जिसका चित्त अज्ञान के आधीन था ऐसे मेरे द्वारा लोकापवाद के भय से दिया दुःख तुमने प्राप्त किया है। हे प्रिये! अब वन–अटवी सहित तथा विद्याधरों से युक्त इस समुद्रान्त पृथ्वी में मेरे साथ इच्छानुसार विचरण करो। हे प्रशंसनीये! मैं दोष रूपी सागर में निमग्न हूँ तथा विवेक से रहित हूँ। अब तुम्हारे समीप आया हूँ सो प्रसन्न होओ और क्रोध का परित्याग करो।

तब सीता ने कहा–हे राजन्! मैं किसी पर कुपित नहीं हूँ, तुम इस तरह विषाद को क्यों प्राप्त हो रहे हो? इसमें न तुम्हारा दोष है न देश के अन्य लोगों का। यह तो परिपाक में आने वाले अपने कर्म के द्वारा दिया हुआ फल है। हे बलदेव! मैंने तुम्हारे प्रसाद से देवों के समान भोग भोगे हैं इसलिए उनकी इच्छा नहीं अब तो वह काम करूँगी जिससे फिर स्त्री न होना पड़े। लाखों योनियों के मार्ग में भ्रमण करती–करती इस भारी दुःख को प्राप्त हुई हूँ। अब मैं दुःखों का क्षय करने की इच्छा से जैनेश्वरी दीक्षा धारण करती हूँ। यह कह उसने निःस्पृह को हाथ से स्वयं केश उखाड़ कर राम के लिए दे दिये। केशों को देख राम मूर्च्छा को प्राप्त हो पृथ्वी पर गिर पड़े। इधर जब तक चन्दन आदि के द्वारा राम को सचेत किया जाता है तब तक सीता पृथ्वीमति आर्यिका से दीक्षित हो गई।

देवकृत प्रभाव से जिसके सब विघ्न दूर हो गये थे ऐसी पतिव्रता सीता वस्त्रमात्र परिग्रह को धारण करने वाली आर्यिका हो गई। महासंवेग को प्राप्त देव और असुरों के समागम से सहित सीता उद्यान में चली गई।

इधर मोतियों की माता, गोशीर्ष चन्दन तथा व्यंजन आदि की वायु से जब राम की मूर्च्छा दूर हुई तब वे उसी दिशा की ओर देखने लगे परन्तु वहाँ सीता को न देख उन्हें दशों दिशाएँ शून्य दिखने लगी। अन्त में शोक के कारण कलुषित चित्त होते हुए महागज पर सवार हो उद्यान की ओर चले।

उद्यान में पहुँचते ही उन्होंने मुनियों में श्रेष्ठ उन सर्वभूषण केवली को देखा जो अभी–अभी ध्यान से उन्मुक्त हुए थे।उन मुनिश्रेष्ठ को देखकर राम हाथी से नीचे उतरकर उनके सीमप गये। तत्पश्चात् श्रीराम ने शान्त हो भक्तिपूर्वक अंजलि जोड़ प्रदक्षिणा देकर उन मुनिराज को मन–वचन–काय से नमस्कार किया।

धर्मश्रवण के इच्छुक श्रीराम ने सर्वभूषण मुनिराज की दिव्यध्वनि का रसपान कर हाथ जोड़ मस्तक से लगाकर कहा–हे भगवन्! क्या मैं भव्य हूँ? किस उपाय से मुक्त होऊँगा, मैं अन्त:पुंर से सहित इस पृथ्वी को छोड़ने के लिए समर्थ हूँ, परन्तु एक लक्ष्मण का उपकार छोड़ने के लिए समर्थ नहीं हूँ। मैं बिना, किसी आधार के स्नेहरूपी सागर की तरंगों में तैर रहा हूँ, सो हे मुनीन्द्र! अवलम्बन देकर मेरी रक्षा करो। तो भगवान सर्वभूषण केवली ने कहा– हे राम! तुम शोक करने के योग्य नहीं हो। आपको बलदेव का वैभव अवश्य भोगना चाहिए। जिस प्रकार इन्द्र स्वर्ग की राज्यलक्ष्मी को प्राप्त होता है उसी प्रकार यहाँ की राज्यलक्ष्मी को पाकर तुम अन्त में जैनेश्वरी दीक्षा को धारण करोगे तथा केवलज्ञानमय मोक्षधाम को प्राप्त होओगे। इस प्रकार केवली भगवान का उपदेश सुनकर श्रीराम धैर्य–सुख–संतोष से युक्त हुए।

कृतान्तवक्त्र सेनापति का जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करना

कृतान्तवक्त्र सेनापति ने दीक्षा लेने की इच्छा से राम से कहा–मिथ्यामार्ग में भटक जाने के कारण मैं इस अनादि संसार में खेदखिन्न हो रहा हूँ। अत: अब मुनिपद धारण

करने की इच्छा करता हूँ। तब राम ने कहा–उत्तम स्नेह छोड़कर इस अत्यन्त दुर्धरचर्या को किस प्रकार धारण करोगे? शीत उष्ण आदि के तीव्र परीषह तथा महाकण्टकों के समान दुर्जन मनुष्यों के वचन किस प्रकार सहोगे? जिसने कभी क्लेश का सम्पर्क जाना नहीं तथा जो कमल के मध्यभाग के समान कोमल है ऐसे तुम हिंसक जन्तुओं से भरे हुए वन में पृथ्वी तलपर रात्रि किस तरह बिताओगे? जिसकी हड्डियों तथा नसों का जाल स्पष्ट दिख रहा है तथा जिसने एक पक्ष एक मास आदि का उपवास किया है ऐसे तुम परगृह में हस्तरूपी पात्र में भिक्षा भोजन कैसे ग्रहण करोगे? जिसने हाथियों के समूह से व्याप्त शत्रुओं की सेना कभी सहन नहीं की है ऐसे तुम नीचजनों से प्राप्त पराभव को किस प्रकार सहन करोगे?

तब कृतान्तवक्त्र ने कहा–जो आपके स्नेहरूपी रसायन को छोड़ने के लिए समर्थ है उसके लिए अन्य क्या असह्य है? जब तक मृत्युरूपी वज्र के द्वारा शरीर रूपी स्तम्भ नहीं गिरा दिया जाता है तब तक मैं दुःख से अन्धे इस संसाररूपी संकट से बाहर निकल जाना चाहता हूँ।

तदन्तर राम ने बड़ी कठिनाई से आँसू रोककर कहा–मेरे समान लक्ष्मी को छोड़कर जो तुम उत्तम व्रत धारण करने के लिए उन्मुख हुए हो अतः तुम धन्य हो। इस जन्म से यदि तुम निर्वाण को प्राप्त न हो सको और देव होओ तो संकट में पड़ा हुआ मैं तुम्हारे द्वारा सम्बोधने योग्य हूँ। हे भद्र! यदि मेरे द्वारा किया हुआ एक भी उपकार तुम मानते हो तो यह बात भूलना नहीं। ऐसी प्रतिज्ञा करो। ‘‘जैसी आप आज्ञा कर रहे हैं वैसा ही होगा।’’ इस प्रकार कहकर तथा विधिपूर्वक प्रणामकर तथा बाह्याभ्यन्तर सर्व प्रकार का परिग्रह छोड़ दिगम्बर मुनि हो गया।

अथानन्तर जब सकलभूषण स्वामी उस पर्वत से विहार कर गये तब भक्तिपूर्वक राम ने आर्यिका सीता के पास जाकर स्नेह के साथ आर्यिका सीता को नमस्कार किया। राम के साथ ही साथ लक्ष्मण ने भी हाथ जोड़ प्रणामकर अभिनन्दन किया। दर्शन के बाद

प्रसन्न चित्त राम तथा लक्ष्मण ने हजारों राजाओं के मध्य, देवों से घिरे हुए नगर में प्रवेश किया।

आर्यिका सीता का समाधिमरण होना एवं अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र होना

इस प्रकार बासठ वर्ष तक उत्कृष्ट तप कर तैंतीस दिन की उत्तम सल्लेखना धारण कर उपभुक्त बिस्तर के समान शरीर को छोड़कर वह आरण–अच्युत युगल में आरूढ़ हो प्रतीन्द्र पद को प्राप्त हुई। **अहो! जिन–शासन में धर्म का ऐसा माहात्म्य देखो कि यह जीव स्त्री पर्याय को छोड़ देवों का स्वामी पुरुष हो गया।**

*****

बारहवाँ पर्व

राम की जैनेश्वरी दीक्षा एवं निर्वाण

सौधर्म इन्द्र की सभा में "स्नेह" विषय पर चर्चा होना

किसी समय महाकान्ति से युक्त, उत्कृष्ट ऋद्धि से सहित, धैर्य और गाम्भीर्य से उपलक्षित सौर्धमेन्द्र देवों की सभा में आकर विराजमान हुआ। उसी सभा में बैठा हुए इन्द्र कहता है- यहाँ की आयु पूर्ण होने पर मैं मनुष्य-पर्याय को कब प्राप्त करूँगा? कब विषयरूपी शत्रु को छोड़कर मन को वश कर, तथा कर्म को नष्टकर तप के द्वारा मैं मोक्ष प्राप्त करूँगा।

यह सुन देवों में से एक देव बोला-जब तक यह जीव स्वर्ग में रहता है तभी तक उसके ऐसा विचार होता है, जब हम सब लोग भी मनुष्य-पर्याय को पालेते हैं तब यह सब विचार भूल जाता हैं। यदि इस बात का विश्वास नहीं है तो ब्रह्मलोक से च्युत तथा मनुष्यों से युक्त राम-बलभद्र को जाकर क्यों नहीं देख लेते।

इसके उत्तर में इन्द्र ने कहा-सब बन्धनों में स्नेह का बन्धन अत्यन्त दृढ़ है। जो हाथ-पैर आदि अवयवों से बँधा है ऐसे प्राणी को मोक्ष हो सकता है परन्तु स्नेहरूपी बन्धन से बँधे प्राणी को मोक्ष कैसे हो सकता है? बेड़ियों से बँधा मनुष्य हजारों योजन भी जा सकता है परन्तु स्नेह से बँधा मनुष्य एक अंगुल भी जाने के लिए समर्थ नहीं है। लक्ष्मण राम में सदा अनुरक्त रहता है वह इसके दर्शन करते-करते कभी तृप्त ही नहीं होता और अपने प्राण देकर भी उसका कार्य करना चाहता है पल भर के लिए भी जिसके दूर होने पर राम का मन बेचैन हो उठता है वह उस उपकारी लक्ष्मण को छोड़ने के लिए कैसे समर्थ हो सकता है? कर्म की यह ऐसी ही अद्भुत चेष्टा है कि बुद्धिमान मनुष्य भी विमोह को प्राप्त हो जाता है अन्यथा जिसने अपना समस्त भविष्य सुन रक्खा है ऐसा कौन सचेतन प्राणी आत्महित नहीं करता। इस प्रकार अहो देवों! प्राणियों के विषय में यहाँ और क्या कहा जाय? इतना ही निश्चित हुआ कि उत्तम प्रयत्न कर अच्छे हृदय से संसार रूपी शत्रु का नाश करना चाहिए।

दो देवों के द्वारा राम-लक्ष्मण के स्नेह की परीक्षा करना एवं लक्ष्मण की मृत्यु होना

अथानन्तर आसन को छोड़ते हुए इन्द्र को नमस्कार कर सभी देव यथायोग्य स्थान पर चले गये। उनमें से राम और लक्ष्मण के स्नेह की परीक्षा करने के लिए दो देवों ने कुतूहलवश यह निश्चय किया कि-चलो इन दोनों की प्रीति देखें। जो उनके एक दिन के भी अदर्शन को सहन नहीं कर पाता है ऐसा नारायण अपने अग्रज के मरण का समाचार पाकर देखें क्या चेष्टा करता है? चलो, अयोध्यापुरी चलें और देखें कि लक्ष्मण का शोकाकुल मुख कैसा होता है? वह किसके प्रति क्रोध करता है और क्या कहता है? ऐसी सलाहकर रत्नचूल और मृगचूल नाम के दुराचारी देव अयोध्या की ओर चले।

वहाँ जाकर उन्होंने राम के भवन में दिव्य माया से अन्त:पुर की समस्त स्त्रियों के रुदन का शब्द कराया तथा ऐसी विक्रिया की कि द्वारपाल, मित्र, मंत्री, पुरोहित तथा आगे चलने वाले अन्य पुरुष नीचा मुख किये लक्ष्मण के पास गये और राम की मृत्यु का समाचार कहने लगे। उन्होंने कहा-'हे नाथ! राम की मृत्यु हुई है।' यह सुनते ही लक्ष्मण के नेत्र मंद-मंद वायु से कम्पित हो उठे। 'हाय यह कया हुआ?' वे इस शब्द का आधा उच्चारण ही कर पाये थे कि उनका मन शून्य हो गया और वे अश्रु छोड़ने लगे। वज्र से तड़ित हुए के समान वे स्वर्ण के खम्भे से टिक गये और सिंहासन पर बैठे-बैठे ही मिट्टी के पुतले की तरह निश्चेष्ट हो गये। उनके नेत्र यद्यपि बन्द नहीं हुए थे तथापि शरीर ज्यों का त्यों निश्चेष्ट हो गये। वे उस समय जीवित मनुष्य का रूप धारण कर रहे थे जिसका कि चित्त कहीं अन्यत्र लगा हुआ है। भाई की मृत्यु से लक्ष्मण को निर्जीव देख दोनों देव बहुत व्याकुल हुए परन्तु वे जीवन देने में समर्थ नहीं हो सके। निश्चय ही इसकी इसी विधि से मृत्यु होनी होगी। ऐसा विचारकर विषाद और आश्चर्य से भरे हुए दोनों देव सौधर्म स्वर्ग चले गये।

तदनन्तर ''यह कार्य लक्ष्मण ने अपनी माया से किया है'' ऐसा जानकर उस समय उनकी स्त्रियां उन्हें प्रसन्न करने के लिए उद्यत हुई। बहुत समय तक जब लक्ष्मण उसी

प्रकार स्थित रहे आये तब बड़ी कठिनाई से मोह में पड़ी हुई वे भोली-भाली स्त्रियाँ मन में विचार करती हुई उनका स्पर्श कर रही थीं कि- सम्भव है हम लोगों ने इनके प्रति मन में कुछ खोटा विचार किया हो, कोई न कहने योग्य शब्द कहा हो, अथवा जिसका सुनना भी दु:खदायी है, ऐसा कोई भाव किया हो।

अथानन्तर अन्त: पुरचारी प्रतिहारों के मुख से यह समाचार सुन मंत्रियों से घिरे राम घबड़ाहट के साथ वहाँ आये। उस समय घबड़ाये हुए लोगों ने देखो कि परम प्रामाणिक जनों से घिरे राम जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए अन्त:पुर में प्रवेश कर रहे हैं। तदनन्तर उन्होंने जिसकी सुन्दर कान्ति निकल चुकी थी और जो प्रात:कालीन चन्द्रमा के समान वर्णवाला था ऐसा लक्ष्मण का मुख देखा। वे विचार करने लगे-ऐसा कौन सा कारण आ पड़ा जिससे आज लक्ष्मण मुझसे रुखा तथा विषादयुक्त हो शिर को कुछ नीचा झुकाकर बैठा है। राम ने पास जाकर बड़े स्नेह से बार-बार आलिङ्गन किया।

यद्यपि राम सब ओर से मृतक के चिह्न देख रहे थे तथापि स्नेह से परिपूर्ण होने के कारण वे उन्हें जीवित ही समझ रहे थे। उनकी शरीर-यष्टि झुक गई थी, गरदन टेढ़ी हो गई थी, साँस लेना, हस्त-पादादिक अवयवों को सिकोड़ना तथा नेत्रों का टिमकार पड़ना आदि चेष्टाओं से रहित हो गया था। इस प्रकार लक्ष्मण को अपनी आत्मा से विमुक्त देख उद्वेग तथा तीव्र भय से आक्रान्त राम पसीना से तर हो गये।

जिनका मुख अत्यन्त दीन था, जो बार-बार मूर्च्छित हो जाते थे, और जिनके नेत्र आँसुओं से व्याप्त थे, ऐसे राम सब ओर से उनके अंगों को देख रहे थे। वे कह रहे थे कि इस शरीर में कहीं नख की खरोंच बराबर भी तो घाव नहीं दिखाई देता फिर यह ऐसी अवस्था को किसके द्वारा प्राप्त कराया गया? इसकी यह दशा किसने कर दी? ऐसा विचार करते-करते राम के शरीर में कँप-कँपी छूटने लगी तथा उनकी आत्मा विषाद से भर गई। यद्यपि वे स्वयं विद्वान थे तथापि उन्होंने शीघ्र ही इस विषय के जानकार लोगों को बुलवाया। जब मंत्र और औषधि में निपुण, कला के पारगामी समस्त वैद्यों ने परीक्षा कर उत्तर दे दिया तब निराशा को प्राप्त हुए राम मूर्च्छा को प्राप्त हो पृथ्वी पर गिर पड़े।

जब हार, चन्दन मिश्रित जल आदि के द्वारा बड़ी कठिनाई से मूर्च्छा छुड़ाई गई तब अत्यन्त विह्वल हो गये। राम शोक और विषाद के द्वारा साथ ही साथ पीड़ा को प्राप्त हुए थे इसीलिए वे मुख को आच्छादित करने वाला अश्रुओं का प्रवाह छोड़ रहे थे।

राम का करुण विलाप

लक्ष्मण के मृत्यु को प्राप्त होने पर युग प्रधान राम ने व्याकुल संसार को छोड़ दिया। उस समय स्वरूप से कोमल और स्वभाव से सुगन्धित नारायण का शरीर यद्यपि निर्जीव हो गया था तथापि राम उसे छोड़ नहीं रहे थे। वे उसका आलिंगन करते थे गोद में रखकर उसे पोंछते थे, सूँघते थे, चूमते थे और बड़ी उमंग के साथ भुज पंजर में रखकर बैठते थे। इसके छोड़ने में वे क्षणभर के लिए भी विश्वास को प्राप्त नहीं होते थे। कभी विलाप करने लगे हाय भाई! क्या तुझे यह ऐसा करना उचित था। मुझे छोड़कर अकेले ही तूने चल दिया। हाय तात! तूने यह अत्यन्त क्रूर कार्य क्यों करना चाहा जिससे कि मुझसे पूछे बिना ही परलोक के लिए प्रयाण कर दिया। अब तेरे बिना क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? अब वह स्थान नहीं देखता जहाँ पहुँचने पर संतोष उत्पन्न हो सके। जिसे देखते-देखते तृप्ति नहीं होती थी ऐसे तेरे इस मुख को मैं अब भी देख रहा हूँ फिर अनुराग भरे हुए मुझे छोड़ना क्या तुमे उचित था?

यह कहकर अन्य सब कामों से निवृत्त राम ने शीघ्र ही शय्या बनाई और लक्ष्मण को छाती से लगा सोने का उपक्रम किया। वे कहते है- हे देव! इस समय मैं अकेला हूँ। आप मेरे कान में अपना अभिप्राय बता दो-किस कारण से तुम इस अवस्था को प्राप्त हुए हो? हे लक्ष्मण! तू इस प्रकार शोभा नहीं देता, मुख से कुछ बोल।

हे राजेन्द्र! उठो, निद्रा छोड़ो, रात्रि व्यतीत हो गई, अब सूर्य का उदय होने वाला है। हे चतुर! उठ, देर तक मत सो, चल सभास्थल में चलें, सामन्तों को दर्शन देने के लिए सभास्थल में बैठ। हे भाई! तेरे बहुत समय तक सोते रहने से जिनमन्दिरों में सुन्दर संगीत तथा भेरियों के मांगलिक शब्द आदि उचित क्रियाएँ नहीं हो रही हैं। जान पड़ता है कि

मेरा पूर्वोपाजित पाप कर्म उदय में आया है इसीलिए मैं भाई के वियोग से दु:ख पूर्ण ऐसे कष्ट को प्राप्त हुआ हूँ।

विद्याधर राजाओं का राम को सम्बोधन देना एवं राम का लक्ष्मण के निष्प्राण शरीर को लेकर फिरना

समाचार मिलने पर समस्त विद्याधर राजा अपनी स्त्रियों के साथ शीघ्र ही अयोध्यापुरी आये। अपने पुत्रों के साथ विभीषण, राजा विराधित, परिजनों से सहित सुग्रीव आदि सभी लोग आये। विषाद से भरे हुए सब लोग योग्य शिष्टाचार की विधि कर राम के आगे पृथ्वीतल पर बैठ गये और क्षणभर चुपचाप बैठने के बाद धीरे-धीरे यह निवेदन करने लगे कि-हे देव! यद्यपि परम इष्टजन के वियोग से उत्पन्न हुआ यह शोक दु:ख से छूटने योग्य है तथापि आप पदार्थ के ज्ञाता है अत: इस शोक को छोड़ने के योग्य हैं।

विद्याधरों ने यद्यपि राम को इस तरह बहुत कुछ समझाया था तथापि उन्होंने लक्ष्मण का शरीर उस तरह नहीं छोड़ा जिस तरह कि विनयी शिष्य गुरु की आज्ञा नहीं छोड़ता है।

सुग्रीव आदि राजाओं ने राम से कहा-हे देव! हम लोग चिता बनाते हैं सो उस पर राजा लक्ष्मण के शरीर को संस्कार प्राप्त कराइए। इसके उत्तर में कुपित होकर राम ने कहा-चिता पर माताओं, पिताओं और पितामहों के साथ आप लोग ही जलें अथवा पापपूर्ण विचार रखने वाले आप लोगों का जो भी कोई इष्ट बन्धु हो उसके साथ आप लोग ही शीघ्र मृत्यु को प्राप्त हों। इस प्रकार अन्य सब राजाओं को उत्तर देकर वे लक्ष्मण के प्रति बोले-भाई लक्ष्मण! उठो, उठो चलो दूसरे स्थान पर चलें। जहाँ दुष्टों के ऐसे वचन नहीं सुनने पड़ें। इतना कहकर वे शीघ्र ही भाई का शरीर उठाने लगे तब घबराये हुए राजाओं ने उन्हें पीठ तथा कन्धा आदि का सहारा दिया।

राम, उन सबका विश्वास नहीं रखते थे इसलिए स्वयं अकेले ही लक्ष्मण को लेकर उस तरह दूसरे स्थान पर चले गये जिस तरह बालक विषफल को लेकर चला जाता हैं।

वहाँ वे नेत्रों में आँसू भरकर कह रहे थे कि–भाई! इतनी देर क्यों सोते हो? उठो, समय हो गया, स्नान भूमि में चलो। इतना कहकर उन्होंने मृत लक्ष्मण को आश्रय सहित स्नान की चौकी पर बैठा दिया और स्वयं महामोह से युक्त हो सुवर्णकलश में रक्खे जल से चिरकाल उसका अभिषेक करते रहे। तदनन्तर मुकुट आदि समस्त आभूषणों से अलंकृत कर भोजन–गृह के अधिकारियों को शीघ्र ही आज्ञा दिलाई कि नाना रत्नमय स्वर्णपात्र इकट्ठे कर उनमें उत्तम भोजन लाया जाय। इस प्रकार आज्ञा पाकर स्वामी की इच्छानुसार काम करने वाले सेवकों ने आदरपूर्वक सब सामग्री लाकर रख दी।

तदनन्तर राम ने लक्ष्मण के मुख के भीतर भोजन का ग्रास रक्खा पर वह भीतर प्रविष्ट नहीं हो सका, तत्पश्चात् राम ने कहा– हे देव! तुम्हारा मुझ पर क्रोध है तो यहाँ अमृत के समान स्वादिष्ट इस भोजन ने क्या बिगाड़ा? इसे तो ग्रहण करो। इस प्रकार जिनकी आत्मा स्नेह से मूढ़ थी तथा जो वैराग्य से रहित थे ऐसे राम ने जीवित दशा के समान लक्ष्मण के विषय में व्यर्थ ही समस्त क्रियाएँ की।

तदनन्तर जिसका शरीर चन्दन से चर्चित था ऐसे लक्ष्मण को बड़ी इच्छा के साथ दोनों भुजाओं से उठाकर राम ने अपनी गोद में रख लिया और उनके मस्तक कपोल तथा हाथ का बार–बार चुम्बन किया। शोक को प्राप्त हुए राम को आज बारहवाँ पक्ष है वे लक्ष्मण के मृतक शरीर को लिये फिरते हैं अत: कोई विचित्र प्रकार का मोह पागलपन उनपर सवार है।

कृतान्तवक्त्र और जटायु के जीव द्वारा राम को सम्बोधित करना एवं राम के द्वारा लक्ष्मण के शव का दाह संस्कार करना

इसी समय स्वर्ग में कृतान्तवक्त्र सेनापति तथा जटायु पक्षी के जीव जो देव हुए थे उनके आसन कम्पायमान हुए। जिस विमान में जटायु का जीव उत्तम देव हुआ था उसी विमान में कृतान्तवक्त्र भी उसी के समान वैभव का धारी देव हुआ था। दोनों ने अवधिज्ञान

का प्रयोगकर नीचे होने वाले अत्यधिक दु:खी राम को जान वे देनों देव स्वर्ग से अयोध्या की ओर चलें।

वे अयोध्या में वहाँ पहुँचे जहाँ भाई के शोक में मोहित हो राम बालक के समान चेष्टा कर रहे थे। वहाँ कृतान्तवक्त्र के जीव ने राम को समझाने के लिए वेष बदलकर एक सूखे वृक्ष को सींचना प्रारम्भ किया। यह देख जटायु का जीव भी दो मृतक बैलों के शरीर पर हल रख कर परेना हाथ में लिये शिलातल पर बीज बोने का उद्यम करने लगा। कुछ समय बाद कृतान्तवक्त्र का जीव राम के आगे जल भरी मटकी को मथने लगा और जटायु का जीव घानी में बालू डाल पेलने लगा इस प्रकार इन्हें आदि लेकर और भी दूसरे-दूसरे निरर्थक कार्य इन दोनों देवों ने राम के आगे किये। तदन्तर राम ने उनके पास जाकर पूछा -अरे मूर्ख! इस मृत वृक्ष को क्यों सींच रहा है? मृतक कलेवर पर हल क्यों रक्खे हुए हैं? पत्थर पर बीज क्यों बरबाद करता है? पानी के मथने से मक्खन की प्राप्ति कैसे होगी? और रे बालक! बालू के पेलने से क्या कहीं तेल उत्पन्न होता है? इन सब कार्यों में केवल परिश्रम ही हाथ रहता है इच्छित फल तो परमाणु बराबर भी नहीं मिलता फिर वह व्यर्थ की चेष्टा क्यों प्रारंभ कर रक्खी है।

तदनन्तर क्रम से उन दोनों देवों ने कहा-हम भी एक यथार्थ बात आपसे पूछते हैं कि आप इस जीव रहित शरीर को व्यर्थ ही क्यों धारण कर रहे हैं? तब राम ने लक्ष्मण के शरीर को भुजाओं से आलिंगन कर कहा-अरे-अरे! तुम पुरुषोत्तम लक्ष्मण की बुराई क्यों करते हो? ऐसे अमांगलिक शब्द के कहने में क्या तुम्हें दोष नहीं लगता? इस प्रकार जब तक राम का कृतान्तवक्त्र के जीव के साथ विवाद चल रहा था तब तक जटायु का जीव एक मृतक मनुष्य का शरीर लिये हुए वहाँ आ पहुँचा। उसे सामने खड़ा देख राम ने उससे पूछा-तू मोह युक्त हुआ। इस मृत शरीर को कन्धे पर क्यों रक्खे हुए है? इसके उत्तर में जटायु के जीव ने कहा-तुम विद्वान होकर भी हमसे पूछते हो पर स्वयं अपने आपसे क्यों नहीं पूछते जो श्वासोच्छ्वास तथा नत्रों को टिमकार आदि से रहित शरीर को धारण कर रहे हो।

दूसरे के तो बाल के अग्रभाग बराबर सूक्ष्म दोष को जल्दी से देख लेते हो पर अपने मेरु के शिखर बराबर बड़े-बड़े दोषों को भी नहीं देखते हो? आपको देखकर हम लोगों को बड़ा प्रेम उत्पन्न हुआ, क्यों? **"सदृश प्राणी अपने ही सदृश प्राणी में अनुराग करते हैं।"**

इस प्रकार देवों के वचनों का आलम्बन पाकर राम का मोह शिथिल हो गया और वे गुरुओं के वचनों का स्मरण कर अपनी मूर्खता पर लज्जित हो उठे। ऐसे पुरुषोत्तम राम को प्रबुद्ध जान कर उक्त दोनों देवों ने अपनी माया समेट ली तथा लोगों को आश्चर्य में डालने वाली देवों की विभूति प्रकट की।

इसी बीच में कृतान्तवक्त्र के जीव ने जटायु के जीव के साथ मिलकर श्रीराम से पूछा-हे नाथ! क्या ये दिन सुख से व्यतीत हुए? देवों के ऐसा पूछने पर राम ने उत्तर दिया-मेरा सुख क्या पूछते हो? समस्त सुख तो उन्हीं को प्राप्त है जो मुनि पद को प्राप्त हो चुके हैं। मैं आपसे पूछता हूँ-सौम्य दर्शन वाले आप दोनों कौन हैं? और किस कारण आप लोगों ने ऐसी चेष्टा की?

तदनन्तर जटायु के जीव देव ने कहा-हे राजन्! जानते हैं आप, जब मैं वन में गीध था और मुनिराज के दर्शन से शान्ति को प्राप्त हुआ था। वहाँ आपने भाई लक्ष्मण और देवी सीता के साथ मेरा लालन-पालन किया था। सीता हरी गई थी और उसमें मैं रुकावट डालने वाला था अत: रावण के द्वारा मारा गया था। हे प्रभो! उस समय शोक से विह्वल होकर आपने मेरे कान में पंच परमेष्ठियों से सम्बन्ध रखने वाला पंच नमस्कार मंत्र का जाप दिलाया था मैं वही जटायु, आपके प्रसाद से उस प्रकार के तिर्यंच गति सम्बन्धी दु:ख का परित्याग कर स्वर्ग में उत्पन्न हुआ था। हे गुरो! देवों के अत्यन्त उदार महासुखों से मोहित होकर मुझ अज्ञानी ने नहीं जाना कि आप पर इतनी विपत्ति आई है। हे देव! जब आपकी विपत्ति का अन्त आया तब आपके कर्मोंदय ने मुझे इस ओर ध्यान दिलाया और कुछ प्रतीकर करन के लिए आया हूँ।

तदनन्तर कृतान्तवक्त्र का जीव बोला–हे नाथ! मैं आपका कृतान्तवक्त्र सेनापति था। आपने कहा था कि **'कष्ट के समय मेरा स्मरण रखना'** सो हे स्वामिन्! आपका वही आदेश बुद्धिगत कर आपके समीप आया हूँ। उस समय देवों की उस ऋद्धि को देख भोगी मनुष्य परम आश्चर्य को प्राप्त होते हुए निर्मल चित्त हो गये। तदनन्तर राम ने कृतान्तवक्त्र सेनापति तथा देवों के अधिपति जटायु के जीव से कहा–अहो भद्र पुरुषों। तुम दोनों विपत्तिग्रस्त जीवों का उद्धार करने वाले हो। देखो, महा प्रभाव से सम्पन्न एवं अत्यन्त शुद्ध हृदय के धारक तुम दोनों देव मुझे प्रबुद्ध करने के लिए स्वर्ग से यहाँ आये। इस प्रकार उन दोनों से वार्तालाप कर शोकरूपी संकट से पार हुए राम ने सरयू नदी के तट पर लक्ष्मण का दाह संस्कार किया।

राम की जैनेश्वरी दीक्षा

तदनन्तर वैराग्यपूर्ण हृदय के धारक विषादरहित राम ने धर्म मर्यादा की रक्षा करने वाले शत्रुघ्न से कहा–हे शत्रुघ्न! तुम मनुष्य लोक का राज्य करो। सब प्रकार की इच्छाओं से जिसका मन और आत्मा दूर हो गई है ऐसा मैं मुक्ति पद की आराधना करने के लिए तपोवन में प्रवेश करता हूँ। इसके उत्तर में शत्रुघ्न ने कहा–देव! मैं राग के कारण भोगों में लुब्ध नहीं हूँ। मेरा मन निर्ग्रन्थ समाधिरूपी राज्य में लग रहा है इसलिए मैं आपके साथ उसी निर्ग्रन्थ समाधिरूप राज्य को प्राप्त करूँगा। इसके अतिरिक्त मेरी दूसरी गति नहीं है। हे नरसूर्य! इस संसार में मन को हरण करनेवाले कामोपभोगों में, मित्रों में, सम्बन्धियों में, भाई–बान्ध्वों में, अभीष्ट वस्तुओं में तथा स्वयं अपने आपके जीवन में किसे तृप्ति हुई है?

अथानन्तर शत्रुघ्न के हितकारी और दृढ़ निश्चयपूर्ण वचन सुनकर राम क्षणभर के लिए विचार में पड़ गये। तदनन्तर मन से विचार कर अनंगलवण के पुत्र को समीप में बैठा देख उन्होंने उसी के लिए परम ऋद्धि से युक्त राज्य पद प्रदान किया।

अथानन्तर राम सभा में विराजमान थे उसी समय अर्द्धद्दास नाम का एक सेठ उनके

दर्शन करने के लिए आया था, सो राम ने उससे समस्त मुनिसंघ की कुशल पूछी। सेठ ने उत्तर दिया–हे महाराज! आपके इस कष्ट से पृथ्वी तल पर मुनि भी परम व्यथा को प्राप्त हुए है। उसी समय मुनिसुव्रत भगवान की वंश–परम्परा को धारण करने वाले निर्बन्ध आत्मा के धारक, आकाशगामी भगवान सुव्रतनामक मुनि राम की दशा जान वहाँ आये।

मुनि आये हैं यह सुन अत्यधिक हर्ष के कारण श्रीराम मुनि के समीप गये। मुनि के पास जाकर राम ने हाथ जोड़ शिर से नमस्कार किया। मुक्ति के कारणभूत उन उत्तम महात्मा के दर्शन कर राम ने अपने आपको ऐसा जानो मानो अमृत के सागर में ही निमग्न हो गया होऊँ।

तदनन्तर रात व्यतीत होने पर जब सूर्योदय हो चुका तब राम ने मुनियों को नमस्कार कर निर्ग्रन्थ दीक्षा देने की प्रार्थना की उन्होंने कहा–हे योगिराज! जिसके समस्त पाप दूर हो गये हैं तथा राग–द्वेष का परिहार हो चुका है ऐसा मैं आपके प्रसाद से विधिपूर्वक विहार करने के लिए उत्कण्ठित हूँ। इसके उत्तर में मुनिसंघ के स्वामी ने कहा–हे राजन्! तुमने बहुत अच्छा विचार किया, विनाश से नष्ट हो जाने वाले इस समस्त परिकर से क्या प्रयोजन है? सनातन निराबाध तथा उत्तम अतिशय से युक्त सुख को देने वाले जिनधर्म में अवगाहन करने की जो तुम्हारी भावना है वह बहुत उत्तम है।

मुनिराज के इस प्रकार कहने पर संसार की वस्तुओं में विराग रखने वाले राम ने प्रदक्षिणा दी। जिन्हें महाबोधि उत्पन्न हुई थी, जो महासंवेग रूपी कवच को धारण कर रहे थे और जो कमर कसकर बड़े धैर्य के साथ कर्मों का क्षय करने के लिए उद्यत हुए थे ऐसे श्रीराम आशारूपी पाश को छोड़कर, स्नेहरूपी पिजड़े को जलाकर, स्त्री रूपी सांकल को तोड़कर, मोह का घमण्ड चूरकर, और आहार, कुण्डल, मुकुट तथा वस्त्र को छोड़कर पर्यंकासन से विराजमान हो गये उनका हृदय परमार्थ के चिन्तन में लग रहा था, उनके शरीर पर मल का पुंज लग रहा था, और उन्होंने श्वेत कमल के समान सुकुमार अंगुलियों के द्वारा शिर के बाल उखाड़ कर फेंक दिये थे।

जो शीलव्रत के घर थे, उत्तम गुप्तियों से सुरक्षित थे, पंच समितियों को प्राप्त थे और पाँच महाव्रतों की सेवा करते थे। छह काय के जीवों की रक्षा करने में तत्पर थे, मन, वचन, काय की प्रवृत्ति रूप तीन प्रकार के दण्ड को नष्ट करने वाले थे, सप्त भय से रहित थे, आठ प्रकार के मद को नष्ट करने वाले थे। जिनका वक्ष स्थल श्री वत्स के चिन्ह से अलंकृत था, गुणरूपी आभूषणों के धारण करने में जिनका मन लगा था और जो मुक्तिरूपी तत्त्व के प्राप्त करने में सुदृढ़ थे ऐसे राम उत्तम श्रमण हो गये।

शत्रुघ्न भी रागरूपी पाश को छेदकर, द्वेषरूपी वैरी को नष्ट कर तथा समस्त परिग्रह से निर्मुक्त हो श्रमण हो गया।

अथानन्तर गुरु की आज्ञा पाकर श्रीराम निर्गन्थ मुनि, सुख-दुःखादि के द्वन्द्व को दूरकर एकाकी विहार को प्राप्त हुए। वे रात्रि के समय पहाड़ों की उन गुफाओं में निवास करते थे जो चंचल चित्त मनुष्यों के लिए भय उत्पन्न करने वाले थे तथा जहाँ क्रूर हिंसक जन्तुओं के शब्द व्याप्त हो रहे थे। उत्तम योग के धारक एवं योग्य विधि का पालन करने वाले उन मुनि को उसी रात में अवधिज्ञान उत्पन्न हो गया। उस अवधिज्ञान के प्रभाव से वे समस्त रूपी जगत् को हथेली पर रखे हुए निर्मल स्फटिक के समान ज्यों-का-त्यों देखने लगे। उस अवधिज्ञान के द्वारा उन्होंने यह भी जान लिया कि लक्ष्मण परभव में कहाँ गया परन्तु यतश्च उनका मन सब प्रकार के बन्धन तोड़ चुका था इसलिए विकार को प्राप्त नहीं हुआ। वे पद्ममुनि शुक्ल लेश्या से युक्त, गम्भीर, गुणों के सागर, उदार हृदय एवं मुक्ति रूपी लक्ष्मी के प्राप्त करने में तत्पर थे।

महामुनि राम का चर्या के लिए नगर में आना किन्तु क्षोभ हो जाने के कारण बिना आहार किये ही वन में लौट आना।

इस तरह योगी बलदेव के गुणों का वर्णन करने के लिए एक करोड़ जिह्वाओं की विक्रिया करने वाला धरणेन्द्र भी समर्थ नहीं है। तदनन्तर पाँच दिन का उपवास का धीर वीर महातपस्वी योगी राम पारणा करने के लिए विधिपूर्वक-ईर्यासमिति से चार हाथ

पृथ्वी देखते हुए नन्दस्थली नगरी में गये। वे राम अपनी दीप्ति से ऐसे जान पड़ते थे मानो तरुण सूर्य ही हों, स्थिरता से ऐसे लगते थे मानो दूसरा पर्वत ही हों, शान्त स्वभाव के कारण ऐसे जान पड़ते थे मानो सूर्य के अगम्य दूसरा चन्द्रमा ही हों, उनका हृदय धवल स्फटिक के समान शुद्ध था, वे पुरुषों में श्रेष्ठ थे, ऐसे जान पड़ते थे मानो मूर्तिधारी धर्म ही हो, ऐसे श्रीराम को देख नगरी के समस्त लोग क्षोभ को प्राप्त हो गये। लोग कहने लगे–अहो! आश्चर्य देखो, अहो देखो यह कोई अत्यन्त सुन्दर महावृषभ यहाँ आ रहा है, अथवा जिसकी दोनों लम्बी भुजाएँ नीचे लटक रही हैं ऐसा यह कोई अद्भुत मुनष्यरूपी मंदराचल है। अहो! इनका धैर्य धन्य है, सत्त्व–पराक्रम धन्य है, रूप धन्य है, कान्ति धन्य है, शान्ति धन्य है, मुक्ति धन्य है और गति धन्य है। जो एक युग प्रमाण अन्तर पर बड़ी सावधानी से अपनी शान्तदृष्टि रखता है ऐसा यह कौन मनोहर पुरुष यहाँ कहाँ से आ रहा है। उदार पुण्य को प्राप्त हुए इसके द्वारा कौन सा कुल मण्डित हुआ है– यह किस कुल का अलंकार है? और आहार ग्रहण कर किस पर अनुग्रह करता है? नगरी में राम के प्रवेश करते ही समयानुकूल चेष्टा करने वाले नर–नारियों के समूह से नगर के लम्बे–चौड़े मार्ग भर गये।

तदनन्तर महल की छत से लोगों के तिलक और कलंक–रूपी पंक से रहित चन्द्रमा के समान धवल कान्ति के धारक उन प्रधान साधु को देखकर राजा ने बहुत से वीरों को आज्ञा दी कि शीघ्र ही जाकर तथा प्रीतिपूर्वक नमस्कार कर उन उत्तम मुनिराज को यहाँ मेरे पास ले आओ।

‘स्वामी जो आज्ञा करें।’ इस प्रकार कहकर राजा के प्रधान पुरुष, लोगों की भीड़ को चीरते हुए उनके पास गये और वहाँ जाकर हाथ जोड़ मस्तक से लगा मधुर वाणी से युक्त और उनकी कान्ति से हृत चित्त होते हुए इस प्रकार निवेदन करने लगे–हे भगवन्! इच्छित वस्तु ग्रहण कीजिए। इस प्रकार हमारे स्वामी भक्तिपूर्वक प्रार्थना करते हैं सो उनके घर पधारिए। अन्य साधारण मनुष्यों के द्वारा निर्मित अपथ्य, विवर्ण और विरस भोजन से आपको क्या प्रयोजन है। हे महासाधो! आओ प्रसन्नता करो, और इच्छानुसार

निराकुलता पूर्वक अभिलाषित आहार ग्रहण करो। ऐसा कहकर भिक्षा देने के लिए उद्यत उत्तम स्त्रियों को राजा के सिपाहियों ने दूर हटा दिया जिससे उनका चित्त विषाद युक्त हो गया। इस तरह उपचार की विधि से उत्पन्न हुआ अन्तराय जानकर मुनिराज, राजा तथा नगरवासी दोनों के अन्न से विमुख हो गये। तदनन्तर यत्नाचार पूर्वक प्रवृत्ति करने वाले मुनिराज जब नगरी से वापिस लौट गये तब लोगों में पहले की अपेक्षा अत्यधिक क्षोभ हो गया।

जिन्होंने इन्द्रिय सम्बन्धी सुख का त्याग कर दिया था ऐसे मुनिराज ने समस्त मनुष्यों को उत्कण्ठा से व्याकुल हृदय कर सघन वन में चले गये और वहाँ उन्होंने रात्रि भर के लिए प्रतिमा योग धारण कर लिया अर्थात् सारी रात कायोत्सर्ग से खड़े रहे।

मुनिराज राम का पाँच दिन का उपवास कर 'वन में ही आहार मिलने पर ग्रहण करूँगा' ऐसा नियम लेना

अथानन्तर कष्ट सहन करने वाले, मुनिश्रेष्ठ श्री राम ने पाँच दिन का दूसरा उपवास लेकर यह अवग्रह किया कि इस वन में मुझे जो भिक्षा प्राप्त होगी उसे ही मैं ग्रहण करूँगा-भिक्षा के लिए नगर में प्रवेश नहीं करूँगा। इस प्रकार कठिन अवग्रह लेकर जब मुनिराज विराजमान थे तब एक प्रतिनन्दी नामक राजा दुष्ट घोड़े के द्वारा हरा गया। तदनन्तर उसकी प्रभवा नामकी रानी शोकातुर हो मनुष्यों के समूह से हरण का मार्ग खोजती हुई घोड़े पर चढ़कर निकली। अनेक योद्धाओं का समूह उसके साथ था। 'क्या होगा? कैसे राजा का पता चलेगा?' इस प्रकार अत्यधिक चिन्ता करती हुई वह बड़े वेग से उसी मार्ग से निकली। हरे जाने वाले राजा के बीच में एक तालाब पड़ा सो वह दुष्ट अश्व उस तालाब के कीचड़ में फँस गया।

तदनन्तर सुन्दरी रानी, वहाँ पहुँचकर और कमल आदि से युक्त सरोवर को देखकर कुछ मुस्कुराती हुई बोली-राजन्! घोड़ा ने अच्छा ही किया। यदि आप इस घोड़े के द्वारा नहीं हरे जाते तो नन्दन वन जैसे पुष्पों से सहित यह सुन्दर सरोवर कहाँ पाते? इसके उत्तर में राजा ने कहा कि-हाँ यह उद्यान यात्रा आज सफल हुई जब कि जिसके देखने से

तृप्ति नहीं होती ऐसे इस अत्यन्त सुन्दर वन के मध्य तुम आ पहुँची। इस प्रकार हास्यपूर्ण वार्ताकर पति के साथ मिली रानी, सखियों से आवृत हो उसी सरोवर के किनारे ठहर गई।

तदनन्तर निर्मल जल में क्रीड़ा कर फूल तोड़कर तथा परस्पर एक दूसरे को अलंकृत कर जब दोनों दम्पत्ति भोजन करने के लिए बैठे तब इसी बीच में उपवास की समाप्ति को प्राप्त एवं साधु की क्रियाओं में निपुण मुनिराज राम, उनके समीप आये। उन्हें देख जिसे हर्ष उत्पन्न हुआ था, तथा रोमांच उठ आये थे ऐसा राजा रानी के साथ उठकर खड़ा हो गया उसने प्रणाम कर कहा–हे भगवन्! खड़े रहित, खड़े रहिए, तदनन्तर पृथ्वी तल को शुद्ध कर उसे कमल आदि से पूजित किया। रानी ने जल से भरा पात्र उठाकर राजा को दिया और राजा ने मुनि के पैर धोये।

तदनन्तर जिसका समस्त शरीर हर्ष से युक्त था ऐसे उज्ज्वल राजा ने बड़े आदर के साथ उत्तम गन्ध रस और रूप से युक्त खीर आदिक आहार सुवर्ण पात्र में रक्खा और उसके बाद उत्कृष्ट श्रद्धा से सहित हो वह उत्तम आहार उत्तम पात्र अर्थात् मुनिराज को समर्पित किया। तदनन्तर जिस प्रकार दयालु मनुष्य का दान देने का मनोरथ बढ़ताजाता है उसी प्रकार मुनि के लिए दिया जाने वाला अन्न उत्तम दान के कारण बर्तन में वृद्धि को प्राप्त हो गया था।

दाता को श्रद्धा तुष्टि भक्ति आदि गुणों से युक्त उत्तम दाता जानकर देवों ने प्रसन्नचित्त हो आकाश में उसका अभिनन्दन किया अर्थात् पंचाश्चर्य किये। अहो दान, अहो पात्र अहो विधि, अहो देव, अहो दाता तथा धन्य-धन्य आदि शब्द आकाश में किये गये। बढ़ते रहो, जय हो, तथा समृद्धिमान् होओ आदि देवों के विशाल शब्द आकाशरूपी मण्डप में व्याप्त हो गये। विशुद्ध सम्यग्दर्शन का धारक राजा प्रतिनन्दी देवों से पूजा तथा मुनि से देशव्रत प्राप्त कर पृथ्वी में गौरव को प्राप्त हुआ।

तदनन्तर विहार करते हुए राम क्रम-क्रम से उस कोटिशिला पर पहुँचे जिसे पहले लक्ष्मण ने नमस्कार कर अपनी भुजाओं से उठाया था। जिन्होंने स्नेह का बन्धन तोड़

दिया था तथा जो कर्मों का क्षय करन के लिए उद्यत थे ऐस महात्मा श्रीराम उस शिला पर आरूढ़ हो रात्रि के समय प्रतिमा योग से विराजमान हुए।

सीता के जीव प्रतीन्द्र का अवधिज्ञान से जानना की राम इस भव में मोक्ष जाने वाले है।

अथानन्तर जिसने अवधिज्ञान रूपी नेत्र का प्रयोग किया था तथा जो अत्यधिक स्नेह से युक्त था ऐसे सीता के पूर्व जीव अच्युत स्वर्ग के प्रतीन्द्र ने उन्हें देखा। उसी समय उसने अपने पूर्वभव तथा जिनशासन के महोत्तम माहात्म्य को क्रम से स्मरण किया। स्मरण करते ही उसे ध्यान आ गया कि ये संसार के आभूषण स्वरूप वे राजा राम हैं, जो मनुष्य लोक में जब मैं सीता थी तब मेरे पति थे। वह प्रतीन्द्र विचार करने लगा कि-अहो कर्मों की विचित्रता से होने वाली मन की विविध चेष्टा को देखो जो पहले अन्य प्रकार की इच्छा थी और अब अन्य प्रकार की इच्छा हो रही है। अहो! कार्यों की शुभ अशुभ कर्मों में जो पृथक्-पृथक प्रवृत्ति है उसे देखो लोगों का जन्म विचित्र है जो कि यह साक्षात् ही दिखाई देता है। ये बलभद्र और नारायण जगत को आश्चर्य उत्पन्न करने वाले थे पर अपने-अपने योग्य कर्मों के प्रभाव से ऊर्ध्व तथा अध:स्थान प्राप्त करने वाले हुए अर्थात् एक लोके के ऊर्ध्व भाग में विराजमान होंगे और एक अधोलोक में उत्पन्न हुआ। इनमें एक तो क्षीण संसारी तथा चरम शरीरी है और दूसरा पूर्ण संसारी है। यह कमललोचन श्रीमान् लक्ष्मण के वियोग से जिनेन्द्र भगवान की शरण में आया है। यह सुन्दर, पहले हलरत्न से बाह्य शत्रुओं को पराजित कर अब ध्यान की शक्ति से इन्द्रियों को जीतने के लिए उद्यत हुआ है। इस समय यह क्षपकश्रेणी में आरूढ़ है इसलिए मैं ऐसा काम करता हूँ जिससे यह मेरा मित्र ध्यान से भ्रष्ट हो जाय और मोक्ष न जाकर स्वर्ग में ही उत्पन्न हो। तब महामित्रता से उत्पन्न प्रीति के कारण इसके साथ सूखपूर्वक मेरुपर्वत और नन्दीश्वर द्वीप को जाऊँगा उस समय की शोभा ही निराली होगी। विमान के शिखर पर आरूढ़ तथा परम विभूति के सहित हम दोनों एक दूसरे के लिए अपने दु:ख और सुख बतलावेंगे। इसी प्रकार का अन्य विचारकर सीता का जीव

स्वयम्प्रभ देव, अन्य देवों के साथ आरुणाच्युत कल्प से उतरकर सौधर्म कल्प में आया। तदनन्तर सौधर्म कल्प से चलकर वह पृथ्वी के उस विस्तृत वन में उतरा जो नन्दन वन के समान जान पड़ता था और जहाँ महामुनि रामचन्द्र ध्यान लगाकर विराजमान थे।

प्रतीन्द्र द्वारा राम पर उपसर्ग करना एवं राम को केवलज्ञान होना

अथानन्तर इच्छानुसार रूप बदलने वाला स्वयंप्रभ प्रतीन्द्र जानकी का वेष रख मदमाती चाल से राम के समीप जाने के लिए उद्यत हुआ। तदनन्तर सुखपूर्वक वन में घूमती हुई सीता महादेवी अकस्मात् उक्त साधु के आगे प्रकट हुई। वह बोली–हे राम! समस्त जगत् में घूमती हुई मैंने बहुत भारी पुण्य से जिस किसी तरह आपको देख पाया है। हे नाथ! वियोगरूपी तरंगों से व्याप्त स्नेहरूपी गंगा की धार में पड़ी हुई है मुझ सुवदना को आप इस समय सहारा दीजिए–डूबने से बचाइए। जब उसने नाना प्रकार की चेष्टाओं और मधुर वचनों से मुनि को अकम्प समझ लिया तब मोहरूपी पाप से जिसका चित्त ग्रसा था, जो कभी मुनि के आगे खड़ी होती थी और कभी दोनों बगलों में जा सकती थी, जो काम ज्वर से ग्रस्त थी, जिसका शरीर काँप रहा था और जिसका लाल–लाल ऊँचा ओंठ फड़क रहा था ऐसी मनोहारिणी सीता उनसे बोली–हे देव! अपने आपको पण्डिता माननेवाली मैं उस समय बिना विचार ही आपको छोड़कर दीक्षित हो गई और तपस्विनी बनकर इधर–उधर विहार करने लगी। तदनन्तर विद्याधरों की उत्तम कन्याएँ मुझे हरकर ले गई। वहा उन विदुषी कन्याओं ने नाना उदाहरण देते हुए मुझसे कहा–ऐसी अवस्था में यह विरुद्ध दीक्षा धारण करना व्यर्थ है क्योंकि यथार्थ में यह दीक्षा अत्यन्त वृद्धा स्त्रियों के लिए ही शोभा देती है, कहाँ तो यह यौवनपूर्ण शरीर और कहाँ यह कठिन व्रत? क्या चन्द्रमा की किरण से पर्वत भेदा जा सकता है? हम सब तुम्हें आगे कर चलती है और हे देवी! तुम्हारे आश्रय से बलदेव को वरेंगी–उन्हें अपना भर्ता बनावेंगे। हम सभी कन्याओं के बीच तुम प्रधान रानी होओ। इस तरह राम के साथ हम सब जम्बूद्वीप में सुख से क्रीड़ा करेंगी। इसी बीच में नाना अलंकारों से भूषित तथा दिव्य

लक्ष्मी से युक्त हजारों कन्याएँ वहाँ आ पहुँची। राजहंसी के समान जिनकी सुन्दर चाल थी ऐसी सीतेन्द्र की विक्रिया से उत्पन्न हुई वे सब कन्याएँ राम के समीप गईं। कोयल से भी अधिक मधुर बोलने वाली कितनी ही कन्याएँ ऐसी जान पड़ती थीं मानो साक्षात् लक्ष्मी ही स्थित हों। कितनी ही कन्याएँ मन को आह्लादित करने वाले, कानों के लिए उत्तम रसायन स्वरूप तथा बांसुरी और वीणा के शब्द से अनुगत दिव्य संगीतरूपी अमृत को प्रकट कर रही थीं। जो नाना प्रकार के हाव-भाव तथा आलाप करने वाली थीं और कान्ति से जिन्होंने आकाश को भर दिया था। ऐसी वे सब कन्याएँ मुनि के चारों ओर स्थित हो उस तरह मोह उत्पन्न कर रही थीं। कोई एक कन्या छाया की खोज करती हुई वकुल वृक्ष के नीचे पहुँची। वहाँ पहुँचकर उसने उस वृक्ष को खींच दिया जिससे उस पर बैठे भ्रमरों के समुह उड़कर उस कन्या की ओर झपटे और उनसे भयभीत हो वह कन्या मुनि की शरण में जा खड़ी हुई। कितनी ही कन्याएँ किसी वृक्ष के नाम को लेकर विवाद करती हुई अपना पक्ष लेकर मुनिराज से निर्णय पूछने लगीं कि देव! इस वृक्ष का नाम क्या है? अन्य मनुष्यों के चित्त को हरण करने वाली इस प्रकार की विक्रियाओं के समूह से राम उस तरह क्षोभ को प्राप्त नहीं हुए जिस प्रकार वायु से मेरुपर्वत क्षोभ को प्राप्त नहीं होता है। उनकी दृष्टि अत्यन्त सरल थी, आत्मा अत्यन्त शुद्ध थी और वे स्वयं परीषहों के समूह को नष्ट करने के लिए वज्र स्वरूप थे, इस तरह वे सुप्रभ के समान शुक्ल ध्यान के प्रथम पाये में प्रविष्ट हुए। उनका हृदय सत्त्व गुण से सहित था, अत्यन्त निर्मल था, तथा इन्द्रियों के समूह के साथ आत्मा के ही चिन्तन में लग रहा था। बाह्य मनुष्य इच्छानुसार अनेक प्रकार की क्रियाएँ करें परन्तु परमार्थ के विद्वान मनुष्य आत्मकल्याण से च्युत नहीं होते। ध्यान में विघ्न डालने की लालसा से युक्त सीतेन्द्र जिस समय सर्व प्रकार के प्रयत्न के साथ देवमाया से निर्मित चेष्ट कर रहा था उस समय अत्यन्त पवित्र मुनिराज अनादि कर्म समूह को जलाने के लिए उद्यत थे। दृढ़ निश्चय के धारक पुरुषोत्तम, कर्मों की साठ प्रकृतियाँ नष्टकर उत्तरवर्ती क्षपक श्रेणी पर आरूढ़ हुए। माघ शुक्ल की द्वादशी के दिन रात्रि के पिछले पहर में उन महात्मा को केवलज्ञान

उत्पन्न हुआ। सर्वदर्शी केवलज्ञानरूपी नेत्र के उत्पन्न होने पर उन प्रभु के लिए लोक अलोक दोनों ही गोष्पद के समान तुच्छ हो गये।

तदनन्तर सिंहासन के कम्पित होने से जिन्होंने अवधिज्ञानरूपी नेत्र का प्रयोग किया था ऐसे सब इन्द्र संभ्रम के साथ प्रणाम करते हुए वहाँ आ पहुँचे। घातिया कर्मों का नाश करने वाले सिंहासनासीन राम के दर्शन कर चारण ऋद्धिधारी मुनिराज तथा समस्त सुर और असुरों ने उन्हें प्रणाम किया। जिन्हें आत्मरूप की प्राप्ति हुई थी, तथा जो संसार के समस्त इन्द्रों के द्वारा वन्दनीय थे ऐसे परमेष्ठी पद को प्राप्त श्रीराम के सम्पूर्ण समवशरण की रचना हुई। तदनन्तर स्वयम्प्रभ नामक सीतेन्द्र ने केवलज्ञान की पूजा कर मुनिराज को प्रदक्षिणा दी और बार-बार क्षमा कराई। उसने कहा-हे भगवन्! मुझ दुर्बुद्धि के द्वारा किया हुआ दोष क्षमा कीजिए, प्रसन्न हुजिए और मेरे लिए भी शीघ्र ही कर्मों का अन्त प्रदान कीजिए अर्थात् मेरे कर्मों का क्षय कीजिए।

इस प्रकार अनन्त लक्ष्मी द्युति और कान्ति से सहित तथा प्रसन्न मुद्रा के धारक भगवान बलदेव ने श्री जिनेन्द्रदेव की उत्तम भक्ति से केवलज्ञान तथा अनन्त सुखरूपी समृद्धि को प्राप्त किया। मुनियों में सूर्य के समान तेजस्वी श्रीराम मुनिजन विहार करने को उद्यत हुए तब हर्ष से भरे देव शीघ्र ही भक्तिपूर्वक पूजा की महिमा स्तुति तथा प्रणाम कर यथाक्रम से अपने-अपने स्थानों पर चले गये।

राम का मोक्षगमन

मुनीन्द्र देवेन्द्र और असुरेन्द्रों के द्वारा जो स्तुत, महित तथा नमस्कृत हैं, जिन्होंने दोषों को नष्ट कर दिया है, जो सैकड़ों प्रकार के हर्ष से उपगीत हैं तथा विद्याधरों की पुष्पवृष्टियों की अधिकता से जिनका देखना भी कठिन है ऐसे श्रीराम महामुनि, पच्चीस वर्ष तक उत्कृष्ट विधि से जैनाचार की आराधना कर समस्त जीव समूह के आभरणभूत तथा सिद्ध परमेष्ठियों के निवास क्षेत्र स्वरूप तीन लोक के शिखर को प्राप्त हुए।

*****

आचार्य श्री द्वारा सृजित साहित्य

1.	अमृत गीता	1997	भिण्ड वर्षायोग
2.	गुरु पूजा	1997	बड़ागाँव धसान
3.	भक्तामर स्तोत्र (अनुवाद)	1999	मड़ावरा (वर्षायोग)
4.	रयणसार (अनुवाद) (अप्रकाशित)	2000	अयोध्या एवं बनारस
5.	लघु स्वयंभू स्तोत्र (अनुवाद)	2000	हजारी बाग, झारखण्ड
6.	प्रवचन भारती	2001	कोतमा (वर्षायोग)
7.	विरागाष्टक (हिन्दी)	2001	कोतमा (वर्षायोग)
8.	विरागाष्टक (संस्कृत)	2001	कोतमा (वर्षायोग)
9.	मंदिर गीता (कल्याण मंदिर स्तोत्र पर भावानुवाद)	2002	डिण्डौरी (ग्रीष्मकाल)
10.	एकीभाव स्तोत्र (अनुवाद)	2003	भेड़ाघट, जबलपुर
11.	विषापहार स्तोत्र (अनुवाद)	2003	बहोरीबंद, जबलपुर
12.	जिनवर गीता (एकीभाव स्तोत्र का भावानुवाद	2003	नागपुर (वर्षायोग)
13.	वंदन गीता (लघुस्वयंभू स्तोत्र पर भावानुवाद)	2003	नागपुर
14.	तीर्थंकर विधान	2003	नागपुर
15.	एकीभाव विधान	2003	डिण्डौरी (म.प्र.)
16.	धर्म भारती (भाग–1)	2002	सागर (ग्रीष्मवाचना)
17.	धर्म भारती (भाग–2)	2003	सोलापुर (ग्रीष्मवाचना)
18.	धर्म भारती (भाग–3)	2006	सोलापुर (ग्रीष्मवाचना)
19.	धर्म भारती (भाग–4)	2006	सोलापुर (ग्रीष्मवाचना)
20.	गोमटेश विधान (बाहुबली विधान)	2005	श्रवणबेलगोला (वर्षायोग)
21.	गोमटेश्वर अर्घावली (अप्रकाशित)	2005	श्रवणबेलगोला
22.	मुक्तागिरि पूजा अर्घावली	2005	मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र
23.	तीर्थंकर शिक्षण	2004	नागपुर (वर्षायोग)
24.	सुनहरा अवसर (प्रवचन कृति)	2004	परभणी (वर्षायोग)
25.	रात्रि भोजन त्याग (प्रवचन कृति)	2004	परभणी (वर्षायोग)
26.	जीवन है पानी की बूंद (प्रवचन कृति)	2004	परभणी (वर्षायोग)

27. घर को स्वर्ग कैसे बनायें ? (प्रवचन कृति)	2004	परभणी (वर्षायोग)
28. आनंद यात्रा (रचित भजन)	2004	परभणी (वर्षायोग)
29. सम्मेद शिखर वंदना	2016	सम्मेद शिखर
30. निर्ग्रन्थ गुरुपूजा	2008	द्रोणगिरि वर्षायोग
31. तीर्थंकर संस्तुति	2008	द्रोणगिरि वर्षायोग
32. द्रोणगिरि विधान	2008	द्रोणगिरि वर्षायोग
33. पात्रकेशरी स्तोत्र (अनुवाद) (अप्रकाशित)	2003	नागपुर
34. अकलंक स्तोत्र (अनुवाद)	2005	श्रवणबलगोला
35. जिनवर स्तोत्र	2009	छतरपुर शीतकाल
36. कुलभूषण देशभूषण चरित्र (काव्य)	2005	कुंथगिरि यात्रा
37. बारह भावना	2005	श्रवणबेलगोला
38. उपसर्गहर स्तोत्र (अनुवाद)	2009	पार्श्वगिरी भगवाँ
39. गुरुमंत्र	2007	नागपुर
40. कुण्डलपुर विधान	2009	जबलपुर
41. हृदय प्रवेश	2009	दमोह
42. दशलक्षण देशना	2009	जबलपुर (वर्षायोग)
43. अक्षर–अमृत	2009	जबलपुर
44. हृदय परिवर्तन	2009	जबलपुर
45. भक्ति भारती (ज्ञानपीठ, दिल्ली पुन: 2018)	2010	टीकमगढ़ (वर्षायोग)
46. भक्तिभाषा	2009	दमोह
47. संस्तुति सरिता	2011	पटेरियाजी
48. आलोचना सार (ज्ञानपीठ, दिल्ली प्रकाशन, 2019)	2010	टीकमगढ़ वाचना
49. विश्वशान्ति विधान	2010	टीकमगढ़
50. विधान–विभव	2013	जयपुर
51. भक्तामर शास्त्र	2012	जयपुर
52. अरनाथ विधान एवं नवागढ़ क्षेत्रपूजा	2012	जयपुर
53. सामायिक शास्त्र (पुन: ज्ञानपीठ प्रकाशन 2019)	2012	जयपुर
54. भक्ति शास्त्र	2013	निवाई

55.	समाधि शास्त्र (पुन: ज्ञानपीठ प्रकाशन 2019)	2012	जयपुर
56.	पुरुषार्थ शास्त्र	2103	अशोकनगर
57.	तत्त्व शास्त्र	2014	ललितपुर
58.	सम्यक्त्व शास्त्र	2014	सागर
59.	समाधि भक्ति (ज्ञानपीठ, दिल्ली से)	2018	मुम्बई
60.	सम्मेद शिखर विधान	2016	कोतमा (म.प्र.)
61.	पूजा शास्त्र	2017	विदिशा (म.प्र.)
62.	गणधरवलय विधान	2015	दुर्ग (छ.ग.)
63.	सिद्धचक्र मण्डल विधान	2019	इन्दौर (म.प्र.)
64.	स्वाध्याय शास्त्र	2018	मुम्बई (महाराष्ट्र)
65.	स्तोत्र संग्रह	2016	कोतमा (म.प्र.)
66.	महावीर जयंती	2017	विदिशा (म.प्र.)
67.	कल्याण मंदिर विधान	2003	नागपुर (महाराष्ट्र)
68.	मल्लिनाथ विधान	2017	शिरडशहापुर (महा.)
69.	भक्तामर विधान	2016	सम्मेद शिखर (झार.)
70.	कल्याण मंदिर स्तोत्र	2003	नागपुर (महा.)
71.	भावनासार (अनुवाद)	2007	औरंगाबाद (महा.)
72.	स्वरूप सम्बोधन (अनुवाद)	2009	छतरपुर (म.प्र.)
73.	विभव विभक्ति	2012	जयपुर (राज.)
74.	समयसार स्तुति	2017	विदिशा (म.प्र.)
75.	तरुण श्रद्धांजलि	2018	मुम्बई (महा.)
76.	तीर्थंकर स्तोत्र	2019	गिरनार (गुजरात)
77.	स्वरूप संबोधन शास्त्र	2019	निवाई (राज.)
78.	तेरी छत्रच्छाया (सचित्र)	2019	निवाई (राज.)
79.	तत्त्वोपदेश शास्त्र	2019	निवाई (राज.)
80.	इष्टोपदेश (सचित्र)	2019	रामगढ़ (राज.)
81.	चारित्र शास्त्र	2020	घाटोल (राज.)
82.	जैन रामायण	2021	मुंगाणा (राज.)
83.	श्रमण प्रतिक्रमण	2021	मुंगाणा (राज.)
84.	श्रावक प्रतिक्रमण	2021	मुंगाणा (राज.)
85.	गुरु पूजा	2021	मुंगाणा (राज.)

गुरुदेव की सर्वप्रिय रचनाएँ

समाधि भक्ति	200 पद	2019	इंदौर
दर्शन भावना	4 पद	2005	श्रवणबेलगोला
जिनवाणी स्तुति	5 पद	2009	जबलपुर
जिनवाणी स्तुति	5 पद	2010	टीकमगढ़

आ.श्री जी की प्रेरणा से श्री सम्यग्ज्ञान शिक्षण समिति द्वारा प्रकाशित अन्य उपयोगी साहित्य

●	वर्द्धमान यशोगान	स्व. श्री कृष्ण पाठक	2003	नागपुर
●	स्वयंभू स्तोत्र	ले.आचार्य समन्तभद्र		
		स्व. पं.पन्नालाल सा.	2006	नागपुर
●	इष्टोपदेश प्रवचन	आचार्य विरागसागर	2006	नागपुर
●	सल्लेखना से समाधि	आचार्य विरागसागर	2006	नागपुर
●	सम्यग्दर्शन	आचार्य विरागसागर	2006	नागपुर
●	आगम चक्खु साहू	आचार्य विरागसागर	2006	नागपुर
●	प्रमेय रत्नमाला	आचार्य लघु अनंतवीर्य	2009	नागपुर
●	लब्धिसार	आचार्य नेमिचन्द	2009	जबलपुर
	(अंग्रेजी, हिन्दी, प्राकृत)	प्रस्तोता–एल.सी.जैन, जबलपुर		
●	षटखण्डागम ध.पु. 8, 11	आ.पुष्पदन्त भूतबली,	2010	टीकमगढ़
		(जीवराज ग्रन्थमाला, सोलापुर)		

जनोपयोगी साहित्य, सी.डी. आदि

1.	कल्याण मंदिर गीता	नंदकुमार जैन	जबलपुर
2.	जिनवर गीता	प्रसन्न श्रीवास्तव	जबलपुर
3.	वंदन गीता	संगीता जैन, शिल्पा जैन	जबलपुर
4.	तेरी छत्रच्छाया	नंदकुमार जैन	जबलपुर
5.	मेरा घर मेरी पाठशाला	अनिल आगरकर परिवार	नागपुर
6.	विभव वन्दना	साधना जैन	जबलपुर
7.	विभवसागर के प्रवचन	सी.डी. एवं कैसेट	
8.	भक्तामर प्रवचन 48	आ. विभवसागर	जयपुर

*****

प.पू. 108 आचार्य श्री विभवसागर जी महाराज के वर्षायोग स्थल

क्र.सं.	स्थान	वर्ष
1.	ललितपुर (उ.प्र.)	1995
2.	जबलपुर (म.प्र.)	1996
3.	भिण्ड (म.प्र.)	1997
4.	मुरैना (म.प्र.)	1998
5.	मड़ावरा (उ.प्र.	1999
6.	हजारीबाग (झारखंड)	2000
7.	कोतमा (म.प्र.)	2001
8.	जबलपुर (म.प्र.)	2002
9.	नागपुर (महाराष्ट्र)	2003
10.	परभणी (महाराष्ट्र)	2004
11.	श्रवणबेल गोला (कर्नाटक)	2005
12.	शिरडशहापुर (महाराष्ट्र)	2006
13.	नागपुर (महाराष्ट्र)	2007
14.	द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र (म.प्र.)	2008
15.	जबलपुर (म.प्र.)	2009
16.	टीकमगढ़ (म.प्र.)	2010
17.	गढ़ाकोटा (म.प्र.)	2011
18.	जयपुर (राज.)	2012
19.	अशोक नगर (म.प्र.)	2013
20.	सागर (म.प्र.)	2014
21.	दुर्ग (म.प्र.)	2015
22.	कोतमा (म.प्र.)	2016
23.	शिरडशहापुर (महाराष्ट्र)	2017
24.	मुम्बई (महाराष्ट्र)	2018
25.	निवाई (राज.)	2019
26.	घाटोल (राज.)	2020
27.	मुंगाणा (राज.)	2021

समाधिस्थ साधुगण

1.	श्रमण अध्यात्मसागर जी महाराज	13 अगस्त, 2015	दुर्ग (छ.ग.)
2.	श्रमण अनशनसागर जी महाराज	08 अक्टूबर, 2017	शिरडशहापुर (महाराष्ट्र)
3.	श्रमण समाधिसागर जी महाराज	22 जुलाई, 2018	मुम्बई (महाराष्ट्र)
4.	श्रमण बाहुबलीसागर जी महाराज	24 जनवरी, 2021	बांसवाड़ा (राज.)
5.	श्रमण अध्यापनसागर जी महारज	21 अगस्त, 2021	शिरडशहापुर (महाराष्ट्र)
6.	श्रमणी विनिर्मलाश्री माताजी	29 दिसम्बर, 2007	नागपुर (महाराष्ट्र)
7.	श्रमणी अनुकम्पाश्री माताजी	30 नवम्बर, 2011	सागर (म.प्र.)
8.	श्रमणी प्राज्ञाश्री माताजी	12 जनवरी, 2018	बगरोही (म.प्र.)
9.	क्षुल्लिका विदेहश्री माताजी	16 अक्टूबर, 2001	कोतमा (म.प्र.)
10.	क्षुल्लिका अर्हद्श्री माताजी	सितम्बर, 2014	सागर (म.प्र.)